इग्नू
जन–जन का
विश्वविद्यालय

इंदिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय
मानविकी विद्यापीठ

BHDE-144
छायावाद

खंड

2

इकाई 6

काव्य वाचन एवं विश्लेषण : चिंता सर्ग (भाग –1) छंद 1 से 40 — 145

काव्य वाचन एवं विश्लेषण : चिंता सर्ग (भाग –2) छंद 41 से 80 — 161

इकाई 7

काव्य वाचन एवं विश्लेषण : 'आँसू' का अंश — 174

इकाई 8

काव्य वाचन एवं विश्लेषण : 'जुही की कली' और 'संध्या सुंदरी' — 184

इकाई 9

काव्य वाचन एवं विश्लेषण : 'जागो फिर एक बार' और 'बाँधो न नाव इस ठाँव, बंधु' — 195

इकाई 10

काव्य वाचन एवं विश्लेषण : 'मोह' और 'नौका विहार' — 206

इकाई 11

काव्य वाचन एवं विश्लेषण : भारतमाता — 218

इकाई 12

काव्य वाचन एवं विश्लेषण : 'मधुर–मधुर मेरे दीपक जल' और 'बीन भी हूँ मैं तुम्हारी रागिनी भी हूँ' — 225

इकाई 13

काव्य वाचन एवं विश्लेषण : 'जाग तुझको दूर जाना' एवं 'विरह का जलजात जीवन' — 235

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

खंड 2 का परिचय

BHDE–144 छायावाद पाठ्यक्रम का यह दूसरा खंड है। इस खंड में आप छायावाद के प्रमुख कवियों के प्रसिद्ध काव्य का पाठ कर सकेंगे और उनकी विस्तृत व्याख्या समझ पाएंगे। इसके माध्यम से आपको छायावाद की विशिष्टताओं की जानकारी प्राप्त हो सकेगी और साथ ही कवियों की काव्य भाषा को समझने में सहायता भी मिलेगी। इस खंड की कुल 8 (6– 13) इकाईयां हैं।

इकाई –6 काव्य वाचन एवं विश्लेषण : 'चिंता सर्ग' के अंतर्गत आप चिंता सर्ग का पाठ व विश्लेषण कर सकेंगे तथा इसके माध्यम से आप प्रसाद की काव्य भाषा को भी समझ पाएंगे।

इकाई –7 काव्य वाचन एवं विश्लेषण : 'आँसू' का अंश में 'आँसू' के काव्यांश का पाठ कर सकेंगे और उसकी विस्तृत व्याख्या समझ सकेंगे। इसके साथ ही आप काव्यांश के भाव पक्ष और कला पक्ष को जान पाएंगे।

इकाई –8 काव्य वाचन एवं विश्लेषण : 'जुही की कली' और 'संध्या सुंदरी' के अंतर्गत आप दोनों कविताओं का पाठ करके उसकी व्याख्या को समझेंगे। इसके अतिरिक्त आप इनकी काव्य विशेषताओं का भी ज्ञान अर्जित कर पाएंगे।

इकाई –9 काव्य वाचन एवं विश्लेषण : 'जागो फिर एक बार' और 'बांधो न नाव इस ठाँव बंधु!' में आप इन दोनों कविताओं का पाठ करेंगे और उसकी व्याख्या के माध्यम से छायावाद की विशेषताओं को जान सकेंगे।

इकाई –10 काव्य वाचन विश्लेषण : 'मोह' और 'नौका विहार' के माध्यम से आप दोनों कविताओं की विस्तृत व्याख्या समझ पाएंगे। इससे आपको छायावाद की विशेषताओं को जानने में मदद मिलेगी और पंत की काव्य भाषा को समझने में भी आप सक्षम होंगे।

इकाई –11 काव्य वाचन एवं विश्लेषण : 'भारतमाता' के अंतर्गत आप भारतमाता का पाठ करेंगे और उसकी व्याख्या से इसकी मूल संवेदना को समझ पाएंगें। आप पंत जी की काव्य – भाषा शब्द योजना और शब्दावली से संबंधित जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

इकाई –12 काव्य वाचन एवं विश्लेषण : 'मधुर–मधुर मेरे दीपक जल' और 'बीन भी हूँ मैं तुम्हारी रागिनी भी हूँ' में आप दोनों कविताओं को गहनता से समझ सकेंगे। इसके माध्यम से आप छायावाद की विशिष्टताओं को जान सकेंगे और महादेवी वर्मा जी की काव्य भाषा का ज्ञान अर्जित कर सकेंगे।

इकाई –13 काव्य वाचन एवं विश्लेषण : 'जाग तुझको दूर जाना' एवं 'विरह का जलजात जीवन' के अंतर्गत आप महादेवी की चयनित कविता का पाठ और विश्लेषण कर सकेंगे। इससे आपको छायावाद की विशिष्टताओं को समझने में सहायता मिलेगी तथा महादेवी की काव्य भाषा को जान पाएंगे।

प्रतयक इकाई के अंत में मूल्यांकन–परक सारांश देते हुए इकाई में प्रयुक्त कठिन शब्दावली के अर्थ भी दिए गए हैं। इकाई संबंधी उपयोगी पुस्तकों की एक सूची भी उपलब्ध कराई गई है। प्रत्येक इकाई में कुछ बोध प्रश्न/ अभ्यास भी दिए गए हैं तथा अंत में इन बोध प्रश्नों व अभ्यासों के उत्तर भी दिए गए हैं।

इकाई 6 काव्य वाचन एवं विश्लेषण : चिंता सर्ग (भाग–1) छंद 1 से 40

इकाई की रूपरेखा

6.0 उद्‌देश्य

6.1 प्रस्तावना

6.2 चिंता सर्ग का वाचन एवं विश्लेषण (छंद 1 से 40)

6.3 सारांश

6.4 उपयोगी पुस्तकें

6.5 बोध प्रश्नों के उत्तर

6.0 उद्‌देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आपः

- आधुनिक युग के श्रेष्ठ महाकाव्य कामायनी के प्रथम सर्ग 'चिंता' से परिचित हो सकेंगी/सकेंगे;
- चिंता सर्ग कामायनी का प्रवेश द्वार है। इस इकाई के अध्ययन से आप कामायनी के अध्ययन की पूर्वपीठिका तैयार कर सकेंगी/सकेंगे;
- चिंता सर्ग के कठिन शब्दों के अर्थ, व्याख्या और काव्य सौष्ठव को जान सकेंगी/सकेंगे;
- व्याख्या और अर्थ के ज्ञान से कविता के रसास्वादन और विचार पक्ष की दिशाओं को समझ सकेंगी/सकेंगे;
- छायावादी कविता के महत्व और व्याख्या की प्रक्रिया से परिचित हो सकेंगी/सकेंगे।

6.1 प्रस्तावना

'कामायनी' आधुनिक छायावादी युग का सर्वोत्तम और प्रतिनिधि हिंदी महाकाव्य है। कामायनी की रचना 1936 ई. में सम्पन्न हुई। श्रद्धा इसकी प्रधान पात्र है, जो कि काम की पुत्री है। उसका दूसरा नाम कामायनी है। इसी के नाम पर इस महाकाव्य का नामकरण किया गया है। एक स्त्री पात्र के नाम पर अपने महाकाव्य का नामकरण करके प्रसाद जी ने स्त्री को गरिमा प्रदान की है। 'कामायनी' नामक यह महाकाव्य कुल पंद्रह सर्गों में विभाजित है –

चिंता, आशा, श्रद्धा, काम, वासना, लज्जा, कर्म, ईर्ष्या, इड़ा, स्वप्न, संघर्ष, निर्वेद, दर्शन, रहस्य और आनंद।

इन पंद्रह सर्गों में मानव मन की विविध अंतर्वृत्तियों का क्रमिक उन्मीलन इस कौशल से किया गया है कि मानव सृष्टि के आदि से अब तक के जीवन के मनोवैज्ञानिक और सांस्कृतिक विकास का इतिहास भी स्पष्ट हो जाता है। कामायनी की कथावस्तु का आधार ऋग्वेद, छान्दोग्य उपनिषद, शतपथ ब्राह्मण तथा श्रीमदभागवत है। कामायनी में वर्णित घटनाक्रम मूलतः शतपथ ब्राह्मण से लिया गया है। उसमें मनु, श्रद्धा, इड़ा, किलात और आकुलि के नाम आए हैं और जल–प्लावन की घटना का भी विस्तार से वर्णन किया गया है। शतपथ ब्राह्मण के प्रथम कांड के आठवें अध्याय से जलप्लावन

BHDE-144_2nd Proof.indd 145 3/23/2022 12:54:36 PM

संबंधी उल्लेखों का संकलन कर प्रसाद ने इस काव्य का कथानक निर्मित किया है, साथ ही उपनिषद् और पुराणों में मनु और श्रद्धा का जो रूपक दिया गया है, उसका भी सहारा लिया गया है। इसमें प्रसाद जी ने मूल मनोभावों को पात्रों में रूपांतरित कर उनके माध्यम से प्रकारांतर से मनुष्य के सम्पूर्ण अस्तित्व की कथा कही है। कामायनी में मनु, श्रद्धा और इड़ा क्रमशः मन, हृदय और बुद्धि के प्रतीक हैं। इस दृष्टि से यह महाकाव्य अन्तःकरण में वृत्तियों के विकास की भी गाथा है। कामायनी पर प्रतभिज्ञा दर्शन, अरविंद दर्शन और गांधीवाद का भी प्रभाव परिलक्षित होता है।

चिंता सर्ग

'चिंता' कामायनी का प्रथम सर्ग है। इसे कामायनी का प्रवेश द्वार भी कहा गया है। चिंता सर्ग में वर्णित कथावस्तु और पूर्वकथन से इस महाकाव्य के पाठ–विश्लेषण की भाव भूमि तैयार होती है। इस सर्ग में कुल 80 छंद है। इस सर्ग का प्रारम्भ जल प्लावन की घटना से होता है। जल प्लावन के पश्चात मनु अपनी नौका को महावट से बांधकर हिमालय की उत्तुंग चोटी पर चिंतामग्न बैठे हुये हैं। वे देवजाति के विनाश के कारणों पर विचार कर रहे हैं और अपने भविष्य को लेकर भी अत्यंत शोकमग्न हैं। मनु देवजाति के विनाश पर जितना अधिक चिंतन कर रहे हैं उनका दुख उतना अधिक बढ़ता जा रहा है। उन्हें प्रतीत होता है कि अनियंत्रित भोगवाद की प्रवृत्ति ही देवजाति के विनाश का कारण है। चिंता सर्ग में इस घटना का मनु की जीवन कथा के माध्यम से वर्णन किया गया है।

चिंता सर्ग को अध्ययन की सुविधा के लिए दो इकाइयों में विभाजित किया गया है। प्रथम इकाई में प्रारम्भ से 40 तक के छंदों का अर्थ, व्याख्या और कठिन शब्द दिये गए हैं। आवश्यकतानुसार काव्यगत विशेषताओं और महत्वपूर्ण बिन्दुओं का संकेत भी किया गया है।

6.2 'चिंता' सर्ग का वाचन और विश्लेषण (छंद 1 से 40)

एक

हिमगिरि के उत्तुंग शिखर पर, बैठ शिला की शीतल छांह,

एक पुरुष, भीगे नयनों से, देख रहा था प्रलय प्रवाह !

नीचे जल था, ऊपर हिम था, एक तरल था एक सघन,

एक तत्व की ही प्रधानता, कहो उसे जड़ या चेतन।

संदर्भ और प्रसंग

प्रस्तुत पंक्तियाँ जयशंकर प्रसाद के श्रेष्ठ महाकाव्य 'कामायनी' के 'चिंता' सर्ग से उद्धृत हैं। भारतीय संस्कृति में सृष्टि के विकास क्रम में एक निश्चित समय या युग के पश्चात प्रलय की परिकल्पना की गई है, जो जलप्लावन के रूप में परिघटित होती है। इसके पश्चात पुनः नई सृष्टि का प्रारम्भ होता है। इसी क्रम में जलप्लावन की परिघटना से बचकर, हिमालय की एक ऊंची चोटी पर मनु विचार मग्न बैठे हैं।

व्याख्या

हिमालय की एक ऊंची चोटी पर एक शिला के विश्रामदायक आश्रय स्थल में एक पुरुष बैठा हुआ है। चारों तरफ जलप्रलय की छाया दिखाई दे रही है। नीचे का समस्त भूभाग विशाल जलराशि से निमग्न है। वह पुरुष प्रलय के प्रवाह से फैली हुई इस विशाल जलराशि को आँसूभरे नेत्रों से निहार रहा है। वह नीचे की ओर देखता है तो जल ही जल दिखाई देता है और ऊपर देखता है तो चारों ओर फैली बर्फ दिखाई पड़ती है। उसे अपने चारों ओर जो दिखाई पड़ रहा है उसमें जल–तत्व की ही प्रमुखता है। नीचे

BHDE-144_2nd Proof.indd 146 3/23/2022 12:54:36 PM

का जल द्रव रूप यानि पिघले रूप में है और ऊपर का जल जमे यानि सघन रूप में है। एक ही जल के ये दो रूप ऐसे प्रतीत होते हैं जैसे एक ही ईश्वर जड़ प्रकृति और चेतन आत्मा के रूप में प्रतिभाषित हो रहा हो।

प्रसाद की इस दृष्टि पर अद्वैत दर्शन का प्रभाव परिलक्षित होता है। अद्वैतवादियों के अनुसार जड़ और चेतन का भेद दृष्टि का भ्रम है। ब्रह्म के अतिरिक्त कहीं कुछ भी नहीं है। उदाहरण के लिए घड़ा और प्याला, दोनों ही कच्ची मिट्टी से बने हैं लेकिन आकार में अंतर के कारण उनमें नाम भेद है, जैसे लहर और बुलबुला आकार भेद के कारण ही अलग–अलग नामों से संबोधित किए जाते हैं। अगर विवेकपूर्ण दृष्टि से देखा जाए तो इसे मिट्टी और जल ही कहा जाएगा, आकार कुछ भी हो। इसी तरह आत्मा के रूप में चेतनता और प्रकृति के रूप में स्थूलता एक ही परमात्मा के गुण हैं।

कठिन शब्द

हिमगिरि – हिमालय पर्वत, **उत्तुंग** – ऊंची, **शिखर** – शीर्ष, चोटी, **शीतल छाँह** – आरामदायक स्थान, **एकपुरुष** – मनु, **भींगे नयनों से** – आँसू भरे नेत्रों से, **प्रलय प्रवाह** – जल प्रलय की विशाल जलराशि, **हिम** – बर्फ, **तरल** – द्रव, **सघन** – ठोस, **एक तत्व** – जल तत्व

दूर दूर तक विस्तृत था हिम, स्तब्ध उसी के हृदय समान,
नीरवता सी शिला चरण से, टकराता फिरता पवमान।
तरुण तपस्वी सा वह बैठा, साधन करता सुर–श्मशान,
नीचे प्रलय सिंधु लहरों का, होता था सकरुण अवसान।

संदर्भ और प्रसंग : पूर्ववत

व्याख्या

जहां वह पुरुष (मनु) बैठा है, वहाँ से दूर–दूर तक फैली हुई बर्फ उसी प्रकार से स्तब्ध दिखाई दे रही है, जिस प्रकार से उसका हृदय स्तब्ध है। उस पर्वत की शिलाएँ भी इतनी शांत दिख रही हैं जैसे वे शिला न होकर स्वयं शांत भावना हों। उन शिलाओं के चरणों से पवन निरंतर टकरा रही था। उस भूमि पर जलप्लावन की परिघटना से बचकर, हिमालय की एक ऊंची चोटी पर मनु विचार मग्न बैठे हैं। यह स्पष्ट हो चुका है कि प्रसाद जिसे पूर्व में 'एक पुरुष' कह कर संबोधित कर रहे हैं, वह और कोई नहीं, मनु हैं। महाप्रलय के कारण समुन्नत देव संस्कृति का विनाश हो चुका है। इस नष्ट हो चुकी संस्कृति से केवल मनु जीवित रह पाये हैं। वह भूमि जहां वे इस समय चिंता मग्न बैठे हैं, वह देवताओं की श्मशान भूमि बन चुकी है। मनु जिस मुद्रा में लीन होकर बैठे हैं उसे दूर से देखने पर ऐसा प्रतीत होता है मानो वह नवयुवक नष्ट हो चुके दैवी– वैभव को फिर से लौटाने के लिए किसी तांत्रिक तपस्वी के समान किसी शक्ति की श्मशान साधना कर रहा है। मनु जिस भूमि पर बैठे हैं उसके नीचे जल प्रलय के कारण घोर वर्षा के जल ने जिस समुद्र का रूप धारण कर लिया था उसकी तरंगें पर्वत से आकर टकराती हैं और एक करुणा भरी गूंज के साथ वहां समाप्त हो जाती हैं। यहाँ प्रसाद अपनी काव्यगत विशेषता के अनुरूप मूर्त वस्तुओं के अमूर्त और अमूर्त वस्तुओं के प्रति मूर्त उपमानों का प्रयोग कर रहे हैं। वे शांत शिला की तुलना नीरवता से कर रहे हैं, जो अमूर्त भाव है। इसी तरह वे प्रकृति में मानवीय भावों का आरोप करते हैं। बड़ी–बड़ी शिलाओं से पवन लगातार टकरा रहा है, किन्तु उसे आगे बढ़ने का मार्ग नहीं मिल रहा है। ठीक उसी तरह जैसे अपनी उन्नति के लिए छटपटाने वाला कोई सामान्य व्यक्ति किसी बड़े व्यक्ति के चरणों में लगातार अपना मस्तक पटक रहा हो, किन्तु वह निष्ठुर उसे रास्ता देने के लिए तैयार न हो। यही इन पंक्तियों की काव्यगत विशिष्टता भी है।

BHDE-144_2nd Proof.indd 147 3/23/2022 12:54:36 PM

कठिन शब्द

स्तब्ध – जड़, अचल, निश्चेष्ट, **पवमान** – वायु, समीर, **तरुण** – युवा, नवयुवक, **श्मशान साधन** – श्मशान में बैठकर तांत्रिक साधना, **सकरुण** – करुणा युक्त ध्वनि, **अवसान** – अंत, समापन

उसी तपस्वी से लंबे थे, देवदारु दो–चार खड़े,

हुए हिम–धवल, जैसे पत्थर, बनकर ठिठुरे रहे अड़े।

अवयव की दृढ़ मांस–पेशियां, ऊर्जस्वित था वीर्य अपार,

स्फीत शिराएं, स्वस्थ रक्त का होता था जिनमें संचार।

संदर्भ और प्रसंग : पूर्ववत

व्याख्या

इन पंक्तियों में प्रसाद जी आस–पास के वातावरण का वर्णन कर रहे हैं। जहां मनु बैठे हुये हैं वहाँ मनु के आकार के समान लंबे देवदार के वृक्ष खड़े हुये हैं। वे वृक्ष बर्फ से ढके हुये हैं और सफेद दिखाई पड़ रहे हैं बर्फ की शीतलता के कारण वे पत्थर जैसे कड़े होकर जहां थे वहीं अकड़े हुये दिखाई पड़ रहे हैं। उन्हें देखकर ऐसा लग रहा है जैसे वे ठंड से ठिठुर गए हों।

इन पंक्तियों में प्रसाद जी मनु के शारीरिक सौष्ठव का वर्णन कर रहे हैं। मनु के शरीर के अंग और मांसपेशियाँ दृढ़ दिखाई पड़ रही हैं। उनके मुख पर ब्रह्मचर्य का अपार तेज दिखाई पड़ रहा है। पुष्ट शरीर की नसें भी उभरी हुई दिखाई पड़ रही हैं, जिनमें शुद्ध और स्वास्थ्यवर्धक रक्त प्रवाहित हो रहा है। प्रसाद के इस वर्णन से हमारे सामने एक बलवान आर्य पुरुष का चित्र दृश्यमान हो जाता है। इन पंक्तियों के माध्यम से मनु के शरीर के तेज का वर्णन किया गया है। अवयव की दृढ़ मांसपेशियों से और शरीर की दृढ़ता के वर्णन से शरीर की स्वस्थता की ओर संकेत किया गया है।

कठिन शब्द

देवदारु – एक प्रकार का ऊंचा सीधा वृक्ष जो विशेष रूप से पर्वतों पर पाया जाता है, **धवल** – श्वेत, सफेद, **अवयव**–शरीर के अंग, **मांसपेशियाँ** – शरीर के अंदर परस्पर जुड़े हुए मांसपिंड जिससे अंगों का संचालन होता है, कोशिकाओं का परस्पर मिला हुआ समूह, **ऊर्जस्वित** – ऊर्जा से युक्त या संपन्न, **वीर्य** – तेज, ओज, **स्फीत** – उभरी हुई, **शिराएँ** – नाड़ियाँ, नसें, **संचार** – प्रवाह

चिंता–कातर वदन हो रहा, पौरुष जिसमें ओत–प्रोत,

उधर उपेक्षामय यौवन का, बहता भीतर मधुमय स्रोत।

बँधी महावट से नौका थी, सूखे में अब पड़ी रही,

उतर चला था वह जल–प्लावन, और निकलने लगी मही।

संदर्भ और प्रसंग : पूर्ववत

व्याख्या

प्रसाद जी लिखते हैं कि उस पुरुष के मुख पर चिंता की अधीरता झलक रही थी, फिर भी वह पौरुष और ओज से परिपूर्ण दिखाई पड़ रहा था। दूसरी ओर उसके हृदय में यौवनकालीन मधुर भावनाओं का सोता भी प्रवाहमान था। लेकिन परिस्थिति ऐसी थी कि उस ओर ध्यान देने का इसे अवकाश ही नहीं था। यहाँ 'उपेक्षामय यौवन' से तात्पर्य यह है कि मनु युवा जीवन की मारक स्थितियों से विरक्त थे क्योंकि शोक के सामने प्रेम भावनायें टिक नहीं पाती हैं। चिंताग्रस्त मनु का अपने यौवन के प्रति उपेक्षाग्रस्त रहना स्वाभाविक ही है। प्रसाद जी विरोधी परिस्थितियों में भी कथानक का सफल चित्रण किया है।

BHDE-144_2nd Proof.indd 148 3/23/2022 12:54:36 PM

जिस नौका के सहारे मनु ने इस घोर जल प्रलय में अपने प्राणों की रक्षा की थी, वह नौका पास की सूखी भूमि पर एक विशाल वट वृक्ष से बंधी पड़ी हुई थी। वह भयावह जल प्रलय अब उतर चुका था और जल के हट जाने से सूखी भूमि बाहर निकलती हुई दिखाई पड़ रही थी।

कठिन शब्द

चिंता कातर – चिंता से अधीर, **बदन** – मुख, **पौरुष** – ओज, **ओत–प्रोत** – भरा हुआ, **मधुमय स्रोत** – मधुर सोता, **महावट** – विशाल बरगद, **प्लावन** – बाढ़

निकल रही थी मर्म वेदना, करूणा विकल कहानी सी,

वहाँ अकेली प्रकृति सुन रही, हँसती–सी पहचानी–सी।

संदर्भ और प्रसंग : पूर्ववत

व्याख्या

मनु का ह्रदय वेदना से भरा हुआ था। वह वहाँ बैठे–बैठे ही अपनी अपनी करुण कथा का वर्णन कर रहा था। किन्तु उसकी इस करुण कथा को सुनने वाला और व्यथा की अनुभूति करने वाला वहाँ कोई अन्य प्राणी मौजूद नहीं था। वहाँ केवल प्रकृति ही विद्यमान थी जो उस कहानी को सुन रही थी। लेकिन ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे वह इस कथा से पूर्व परिचित है और इसे सुनने में उसकी कोई रुचि नहीं है। वह केवल मुस्कान के साथ सुनती जा रही है। उसे इस कहानी में कोई नवीनता नहीं दिखाई दे रही थी।

इन पंक्तियों में कवि संकेतों में अपनी बात कह रहा है। मनु की कारुणिक कथा को सुनकर प्रकृति को हँसता हुआ सा कहा गया है। वस्तुतः प्रकृति यह जानती थी कि अहंकार के कारण देवताओं का विनाश अवश्यंभावी था इसलिए मनु से किसी तरह की सहानुभूति न रखते हुये वह हंस रही थी।

कठिन शब्द

मर्म वेदना – गहन पीड़ा, **करुणा विकल** – दुख भरी

ओ चिंता की पहली रेखा, अरी विश्व–वन की व्याली,

ज्वालामुखी स्फोट के भीषण, प्रथम कंप–सी मतवाली।

हे अभाव की चपल बालिके, री ललाट की खलरेखा !

हरी–भरी–सी दौड़–धूप, ओ जल–माया की चल–रेखा !

संदर्भ और प्रसंग : पूर्ववत

व्याख्या

इन पंक्तियों में मनु चिंता को संबोधित कर रहे हैं। वे कहते हैं कि आज पहली बार मेरे ह्रदय में प्रवेश कर पाई हो। तुम इस विश्वरूपी उपवन में विचरण करने वाली सर्पिणी की तरह हो। जिस प्रकार सर्पिणी विश्व उपवन में भ्रमण करने वाले मनुष्यों को सशंकित कर देती है उसी तरह तुम भी हो। तुम ज्वालामुखी फटने से पहले होने वाले प्रारम्भिक कंपन की तरह मतवाली हो, जिसकी पहली आहट से मन में भयानक विस्फोट की पृष्ठभूमि तैयार हो जाती है। आशय यह कि यह जगत एक रमणीय उद्यान की तरह है। यहाँ घूम रहे मनुष्य के चित्त में यदि सर्पिणी के होने का भय उत्पन्न हो जाए तो वह उपवन की रमणीयता का आनंद नहीं ले सकता है। उसी तरह चिंता के कारण व्यक्ति के लिए जगत की रम्यता रसहीन होती है। जैसे ज्वालामुखी में प्रथम कंपन के साथ ही

BHDE-144_2nd Proof.indd 149 3/23/2022 12:54:36 PM

यह आशंका हो जाती है कि यह अब फटकर आस–पास को नष्ट कर देगा उसी तरह मष्तिष्क में चिंता के प्रवेश से ही यह समझ लेना चाहिए कि कुछ विपत्ति आने वाली है।

आगे की पंक्तियों में चिंता को 'अभाव की चपल बालिका' कहा गया है। जब हमारे जीवन में किसी प्रकार की कमी होती है तो मन में उसकी चिंता जाग्रत होती है। मनु चिंता को संबोधित करते हुये कह रहे हैं कि तुम अभाव से उत्पन्न होकर मनुष्य को अस्थिर कर देती हो। तुम भाग्य की अशुभ रेखा की तरह हो। तुम्हारा उत्पन्न होना ही मनुष्य के दुर्भाग्य का सूचक है। लेकिन तुम्हारे आने का एक शुभ पक्ष भी है। तुमसे डरकर मनुष्य उस अभाव को मिटाने के लिए भाग–दौड़ करने लगता है। इस भाग–दौड़ से उसका जीवन पुनः हरित हो जाता है। इस माया रूपी जगत को अगर जल की संज्ञा दें तो तुम उस जल में तरंग के समान हो। जिस प्रकार जल में अनेक लहरें उठती है, उसी प्रकार चिंता भी इस माया जगत में उठने वाली हलचल के समान ही है। यह मानव को अस्थिर बना देती है और मानव संसार में भटकने लगता है।

कठिन शब्द

व्याली – सर्पिणी, **स्फोट** – फूटना, **ललाट** – मस्तक, **खल रेखा** – अशुभ रेखा, **जल माया** – जल की तरह माया, **चल रेखा** – तरंग, लहर

इस ग्रहकक्षा की हलचल– री, तरल गरल की लघु–लहरी,

जरा अमर–जीवन की, और न कुछ सुनने वाली, बहरी।

अरी व्याधि की सूत्र–धारिणी! अरी आधि, मधुमय अभिशाप!

हृदय–गगन में धूमकेतु–सी, पुण्य–सृष्टि में सुंदर पाप!

संदर्भ और प्रसंग : पूर्ववत

व्याख्या

मनु कह रहे हैं कि चिंता तुम ग्रहों की समस्त कक्षा में खलबली उत्पन्न करने का सामर्थ्य रखने वाली हो। तुम तरल विष की हल्की लहर के समान हो। जिस प्रकार विष की हल्की लहर मनुष्य के शरीर में व्याप्त होते ही उसे व्याकुल कर देती है, लेकिन उसके जीवन का पूर्ण रूप से अंत नहीं करती उसी प्रकार तुम भी मनुष्य मात्र को केवल व्यथा ही पहुंचाती हो। तुम्हारा प्रभाव क्षेत्र इतना व्यापक है कि तुम मनुष्य को ही नहीं बल्कि अपने जीवन को अमर समझने वाले देवताओं को भी वृद्ध बना देती हो। यह सत्य है कि चिंताग्रस्त मनुष्य अपनी आयु से ज्यादा वृद्ध दिखाई पड़ता है और वह यौवनावस्था में भी वृद्ध जान पड़ता है। तुम्हारा दुखद पक्ष यह भी है कि तुम जब आती हो तो इतनी बहरी हो जाती हो कि किसी का भी कहा नहीं सुनती हो अर्थात किसी भी रोक–टोक को नहीं मानती हो। देवताओं के बारे में यह प्रचलित है कि उन्हें–वृद्ध ावस्था नहीं घेर पाती है, लेकिन चिंता के आने से देवता भी असमय वृद्ध हो जाते हैं।

मनु कह रहे हैं कि चिंता तुम मानसिक और शारीरिक दोनों ही प्रकार की व्यथाओं को उत्पन्न करने वाली हो। यानि चिंता के कारण न केवल मन व्याकुल रहता है, अपितु शारीरिक रोग भी उत्पन्न हो जाते हैं। चिंता के कारण मन हमेशा व्याकुल रहता है और यह एक मधुर अभिशाप की तरह है। मधुर इस अर्थ में कि अगर जीवन में चिंता नहीं होगी तो मनुष्य सुख प्राप्ति के लिए कोई प्रयत्न ही नहीं कर पायेगा और वह जीवन की मधुरता से वंचित रह जायेगा। चिंता का उदय उसी प्रकार विध्वंस का सूचक है, जिस प्रकार आकाश में पुच्छल तारे के उदय होने पर सृष्टि में विनाश की आशंका होने लगती है। इसका दूसरा पक्ष भी है। चिंता बाहर से देखने पर अकल्याणकारी लगती है किन्तु उसका अंत कल्याणकारी होता है। चिंता को हाँ 'सुंदर पाप' कहा गया है। यहाँ पाप का अर्थ आत्मा के प्रतिकूल भाव से है। आत्मा आनंद स्वरूप है। चिंता उस आनंद

को खंडित करती है। अवांछित होने पर भी वह अनिवार्य है इसलिए यहाँ उसे 'सुंदर पाप' कहा गया है क्योंकि इसका अंत कल्याणकारी होता है।

कठिन शब्द

ग्रह कक्षा – ग्रहों का भ्रमण मार्ग, **गरल** – विष, **जरा** – वृद्धावस्था, **व्याधि** – शारीरिक रोग, **आधि** – मानसिक रोग, **धूमकेतु** – पुच्छल तारा, **सुंदर पाप** – वह अवांछित कार्य जिसका परिणाम सुंदर हो

मनन करावेगी तू कितना? उस निश्चिंत जाति का जीव,

अमर मरेगा क्या? तू कितनी गहरी डाल रही है नींव।

आह घिरेगी हृदय–लहलहे, खेतों पर करका–घन–सी,

छिपी रहेगी अंतरतम में, सब के तू निगूढ़ धन–सी।

संदर्भ और प्रसंग : पूर्ववत

व्याख्या

मनु चिंता को संबोधित करते हुए कह रहे हैं कि यद्यपि तुम मुझे इतना सोच विचार करवा कर, इतना व्यथित कर रही है, पर मुझे इसकी बिल्कुल भी परवाह नहीं है। मैं यह भली भांति जानता हूं कि जीव परमात्मा का ही अंश है, इसलिए वह अजर–अमर है और इसमें कोई संदेह नहीं है। उसे नष्ट कर पाने में तुम असमर्थ हो। जीवात्मा को नष्ट करने की शक्ति किसी में नहीं है। मनु यह कहते हैं कि चिंता के कारण, चाहे मुझे कितना भी दुःख क्यों ना हो, लेकिन यह किसी भी प्रकार से मेरे जीवन का अंत नहीं कर सकती इन पंक्तियों में मनु का अदम्य आत्मविश्वास प्रकट हुआ है और दर्शन की भी झलक दिखाई पड़ रही है। कहने का आशय यह कि इन पंक्तियों के माध्यम से कवि आत्मा की अमरता को रेखांकित कर रहा है। आत्मा नष्ट नहीं हो सकती है अपितु बाह्य शरीर ही नष्ट होता है।

मनु कह रहे हैं कि जिस प्रकार हरे–भरे खेतों पर ओलों से भरे हुये बादल मँडराते हैं उसी तरह तुम आशा से भरे हुये हृदयों पर छा जाती हो। तुम सभी के हृदय के अंतरतम में उसी प्रकार छिपी रहती हो जैसे धरती के भीतर मनुष्यों का गड़ा हुआ धन छिपा रहता है। पृथ्वी में छुपे हुए धन का पता उसी व्यक्ति को होता है, जो उसे छुपाता है। उसी प्रकार चिंता भी मनुष्य के अंतः करण में छिपी रहती है और उसका पता वही जान पाता है, जो चिंता से ग्रस्त होता है।

कठिन शब्द

मनन – चिंतन, **उस निश्चिंत जाति का** – देवताओं का, **लहलहे** – हरे–भरे, **करका–घन** – ओलों से भरे हुये बादल, **अंतरतम** – हृदय की गहराई, **निगूढ़** – गड़े हुये या छिपे हुये

बुद्धि, मनीषा, मति, आशा, चिंता तेरे हैं कितने नाम

अरी पाप है तू, जा, चल जा, यहाँ नहीं कुछ तेरा काम !

विस्मृति आ, अवसाद घेर ले, नीरवते बस चुप कर दे,

चेतनता चल जा, जड़ता से, आज शून्य मेरा भर दे।

संदर्भ और प्रसंग : पूर्ववत

व्याख्या

मनु कहते हैं कि चिंता के अनगिनत नाम हैं। चिंता अथवा चिंतन द्वारा ही मनुष्य सत्य और असत्य का निर्णय कर पाता है। यह बुद्धि कहलाती है। हृदय में ज्ञान उत्पन्न करती है, अतः इसे मनीषा भी कहा जाता है। चिंता ही मति भी कहलाती है, क्योंकि

BHDE-144_2nd Proof.indd 151 3/23/2022 12:54:36 PM

मनुष्य उसी की सहायता से किसी विवाद ग्रस्त विषय के सम्बन्ध में कोई निश्चित धारणा बना पाता है। मनुष्य की शोकावस्था में चिंता ही आशा के रूप में सांत्वना प्रदान करती है। मनु यह कहते हैं कि चिंता के अनेक रूप हैं, किन्तु जिस रूप में तुम मेरे हृदय में उत्पन्न हुई हो वह बहुत ही अशुभ है। इसलिए तुम यहाँ से चली जाओ, एकदम से जाओ। यहाँ तुम्हारा कोई काम नहीं है।

मनु यह भी कहना चाहते हैं कि उनके शरीर से चेतना चली जाए और शरीर में शिथिलता आ जाये, जिससे उनमें तनिक भी सोचने–विचारने की सामर्थ्य ना रहे और ना ही सोचने–विचारने का उत्साह रहे। हृदय से चेतना के जाते ही जड़ता आ जाएगी। इस प्रकार जड़ता की भावना को आमंत्रित करके मनु अपने हृदय में उठने वाली समस्त हलचलों को शांत करना चाहते हैं और अपनी समस्त चेतना को विलुप्त होती हुई भी देखना चाहते हैं, ताकि उन्हें किसी भी प्रकार की शारीरिक या मानसिक व्यथा की अनुभूति ना हो।

कठिन शब्द

बुद्धि – अच्छे बुरे का ज्ञान देने वाली शक्ति, **मनीषा** – ज्ञान, **मति** – धारणा, राय; **आशा** – अप्राप्य के प्राप्ति की संभावना, **विस्मृति** – भूलना, **अवसाद** – शिथिलता, **नीरवता** – शांति, **चेतनता** – भावों का उदय, **शून्य** – खाली हृदय

चिंता करता हूँ मैं जितनी, उस अतीत की, उस सुख की,

उतनी ही अनंत में बनती, जातीं रेखायें दुःख की।

आह सर्ग के अग्रदूत!तुम असफल हुए, विलीन हुए,

भक्षक या रक्षक जो समझो, केवल अपने मीन हुए।

संदर्भ और प्रसंग : पूर्ववत

व्याख्या

इन पंक्तियों में मनु अपने अतीत का स्मरण कर रहे हैं। मनु कहते हैं बीते हुये दिनों में देव जाति ने जो सुख भोग किए हैं उनका मैं जितनी बार स्मरण करता हूँ मेरे अनंत हृदय में उतनी ही रेखाएँ खिंचती चली जाती हैं। मैं इस सब के विषय में जितना अधिक सोच रहा हूँ मेरा दुख उतना ही बढ़ता जा रहा है। वस्तुतः यह मानव का स्वभाव भी हैं कि विगत दिनों की मनोहर स्मृतियों के संबंध में वह जितना अधिक सोचता है, उतना ही अधिक उन्हें दुःख होता है। वास्तव में चिंताग्रस्त मानव मन में अतीत की स्मृतियों का उभरना एक स्वाभाविक प्रक्रिया है।

मनु देवजाति के पतन की कहानी सुनाते हुये कहते हैं कि जिन देवताओं का सृजन इस पृथ्वी पर सबसे पहले हुआ था और जिन्हें इस सृष्टि का अग्रदूत कहा जाता था, उन्हीं का आज अस्तित्व ही समाप्त हो गया है और वे इस अपार जल राशि में विलीन गये हैं। लेकिन इसमें किसी अन्य का दोष नहीं है। जिस प्रकार मछलियां स्वयं ही अपनी जाति का विकास और रक्षा करती हैं, किन्तु एक समय ऐसा भी आता है, जब वे परस्पर एक–दूसरे को खाकर नष्ट भी कर देती हैं। उसी प्रकार अपनी वीरता और बुद्धि के बल पर जिन देवताओं ने अपनी जाति का उत्थान किया था उन्होंने विलास में दिन–रात लीन रहकर अपनी जाति को स्वयं ही नष्ट कर लिया है।

कठिन शब्द

अतीत – भूतकाल, **अनंत** – सीमाहीन, **सर्ग** – सृष्टि, **अग्रदूत** – प्रवर्तक, **भक्षक** – नष्ट करने वाले, **रक्षक** – रक्षा करने वाले, **मीन** – मछली

BHDE-144_2nd Proof.indd 152 3/23/2022 12:54:36 PM

अरी आँधियों ओ बिजली की, दिवा–रात्रि तेरा नर्तन,
उसी वासना की उपासना, वह तेरा प्रत्यावर्तन।
मणि–दीपों के अंधकारमय, अरे निराशा पूर्ण भविष्य
देव–दंभ के महामेध में, सब कुछ ही बन गया हविष्य।

संदर्भ और प्रसंग : पूर्ववत

व्याख्या

प्रस्तुत पंक्तियों में मनु कह रहे हैं कि जल प्रलय के पहले दिन–रात आंधियों और बिजलियों का भयंकर नृत्य होता रहा अर्थात् दिन–रात आंधियाँ चलती रहीं और बिजलियाँ भी गिरती रहीं पर देवगण भोग विलास में ही लीन रहे और उस विलासितापूर्ण जीवन को छोड़ नहीं पाये। प्रकृति देवताओं को वासना के जाल से निकालना चाहती इसलिए उसने पहले आँधी चलाई फिर बिजली गिराई किन्तु देवगण भोग–विलास से विमुख नहीं हो पाये। इतने प्रयास पर भी जब वे सचेत नहीं हुये तो पुनः प्रकृति ने अपना रौद्र रूप धारण कर उन्हें सर्वथा नष्ट कर दिया।

देवताओं को इस बात का बहुत गर्व था कि कोई उनका विनाश नहीं कर सकता है, अतः उन्होंने प्रकृति की चेतावनी पर ध्यान नहीं दिया और अंत में उसके प्रकोप से ही नष्ट हो गए। देवताओं के अहंकार के कारण ही इसप्रकार उनका नाश हुआ और अब मनु को अपना भविष्य भी निराशापूर्ण और अंधकारमय लग रहा था। मनु कहते हैं कि अब हमारा भविष्य भी उसी प्रकार अंधकार से परिपूर्ण है जिस प्रकार घोर अंधेरे में कहीं मणि का दीपक रख दिया जाए तो वह बेचारा केवल अपने आस–पास ही थोड़ा प्रकाश कर पाने में समर्थ होता है। वह अपने चारों ओर फैले गहन अंधकार को नहीं चीर सकता है।

कठिन शब्द

दिवा–रात्रि – दिन–रात, **नर्तन** – नाचना, **वासना** – भोग विलास, **उपासना** – लीनता, **प्रत्यावर्तन** –लौटना, **मणि–दीपों** – मणियों के दीपक, आशा, **दंभ** – अहंकार, **महामेध** – महायज्ञ, **हविष्य** – यज्ञ आहुति की सामग्री

अरे अमरता के चमकीले पुतलों! तेरे वे जयनाद,
काँप रहे हैं आज प्रतिध्वनि, बन कर मानो दीन विषाद।
प्रकृति रही दुर्जेय, पराजित, हम सब थे भूले मद में,
भोले थे, हाँ तिरते केवल सब, विलासिता के नद में।

संदर्भ और प्रसंग : पूर्ववत

व्याख्या

मनु देवताओं को संबोधित करते हुये कह रहे हैं कि आज तुम्हारी विजय की ध्वनियाँ दीनता और विषाद की प्रतिध्वनियों में बदल गयी हैं अर्थात आज तक जिन देवताओं का जयघोष चारों तरफ गूँजा करता था, अब देवजाति का पतन हो जाने से, वे ही जय ध्वनियाँ दीनता और दुःखपूर्ण स्वरों में परवर्तित हो गयी है। कभी जहां विजय घोष होता था, वहां अब दीनता और शोक की सघन छाया दिखायी दे रही है। यहाँ प्रसाद जी देवताओं को 'अमरता के चमकीले पुतले' कह रहे हैं। ऐसा कहते हुए वे यह संकेत करते हैं कि परम शक्ति और अतुलित वैभव के कारण देवताओं को ये घमंड हो गया था कि वे अमर हैं और अब उनका घमंड समाप्त हो चुका है।

BHDE-144_2nd Proof.indd 153 3/23/2022 12:54:36 PM

मनु कहते हैं कि अंत में प्रकृति जीत गई और हम हार गए हैं। हम अपने भीग–विलास में सब कुछ भूल गए थे। उचित–अनुचित का विवेक नष्ट हो गया था। अपने भोलेपन में हम भोग–विलास की नदी में ही तैरते रहे। वस्तुतः देव जाति अज्ञानता वश अपने घमंड में ही फूली हुई थी। इसके फलस्वरूप वह भोग–विलास की नदी में ही डूबती रहे। उसे यह भी ज्ञान न रहा कि इस डूबने का परिणाम क्या होगा। इन पंक्तियों में प्रसाद जी आधुनिक वैज्ञानिक सभ्यता पर भी टिप्पणी करते हैं कि उन्हें भी ये स्मरण रखना चाहिए कि प्रकृति पर विजय प्राप्त करना सर्वथा असंभव है।

कठिन शब्द

अमरता के चमकीले पुतले – वे देवता जिन्होंने अपने जीवन में यश प्राप्त किया, **दीन विषाद** – दीनता और शोक, **दुर्जेय** – जिसे जीतना संभव न हो, **तिरते** – तैरते, **विलासिता** – विलासी होने की अवस्था या भाव, **पराजित** – हरे हुये ।

वे सब डूबे, डूबा उनका विभव, बन गया पारावार

उमड़ रहा था देव–सुखों पर, दुख–जलधि का नाद अपार।

वह उन्मुक्त विलास हुआ क्या, स्वप्न रहा या छलना थी

देवसृष्टि की सुख–विभावरी, ताराओं की कलना थी।

संदर्भ और प्रसंग – पूर्ववत

व्याख्या

मनु कहते हैं कि वे सब देवता जो भोग–विलास में लीन रहते थे, नष्ट हो गए। साथ ही उनका समस्त ऐश्वर्य भी नष्ट हो गया। आज इस जल प्लावन के कारण जो चारों ओर उमड़ता हुआ समुद्र दिखाई दे रहा है, ऐसा प्रतीत होता है मानो देवताओं का वैभव ही पानी बनकर इस अगाध सागर के रूप में चारों ओर फैला हुआ है। यह जो भारी गर्जना हो रही है वह समुद्र की गर्जना नहीं है अपितु दुख स्वयं देवताओं के सुख को डुबोकर घोर ध्वनि कर रहा है।

मनु अब देवताओं के विलासपूर्ण जीवन के बारे में कटु आलोचना करते हुए कह रहे हैं कि अब उनका संयमहीन भोग–विलास कहाँ चला गया? वह कोई स्वप्न था या कोई भ्रम मात्र था? मनु कहते हैं कि देवताओं के संसार की सुख रात्रि तारों से परिपूर्ण थी और जिस प्रकार से तारों की कोई गिनती नहीं हो पाती, उसी प्रकार देवताओं के भोग विलास की भी कोई सीमा नहीं थी। वे विविध प्रकार के सुखों का भोग करते थे। इन पंक्तियों में क्षुब्ध होकर मनु देवजाति का एक तरह से उपहास कर रहे हैं। यह एक तरह से आत्मलोचन भी है।

कठिन शब्द

विभव – ऐश्वर्य, वैभव, **पारावार** – समुद्र, **उमड़** – मचल, **जलधी** – समुद्र, **नाद** – ध्वनि, **उन्मत्त** – संयमहीन, **छलना** – भ्रम, **विभावरी** – रात्रि, **कलना** – भरी हुई, रचना

चलते थे सुरभित अंचल से, जीवन के मधुमय निश्वास,

कोलाहल में मुखरित होता, देव जाति का सुख–विश्वास।

सुख, केवल सुख का वह संग्रह, केंद्रीभूत हुआ इतना,

छायापथ में नव तुषार का, सघन मिलन होता जितना।

संदर्भ और प्रसंग : पूर्ववत

व्याख्या

मनु कह रहे हैं कि देव नारियों के सुगन्धित आँचलों से जीवन की सुखमय सांसें प्रवाहित होती थीं अर्थात उनके वस्त्रों से सुगंध का फूटना इस बात का परिचायक था कि वे

BHDE-144_2nd Proof.indd 154 3/23/2022 12:54:36 PM

साधन सम्पन्न परिवारों से थीं। जहां दरिद्रता का वास होगा वहाँ वस्त्रों का इस तरह से सुवासित होना संभव नहीं हो सकता है। इसी प्रकार आमोद–प्रमोद की जो चारों ओर ध्वनियाँ उठती रहती थीं, उससे भी यह पता चलता था कि देव सभ्यता सुख और आनंद से निर्भय जीवन व्यतीत कर रहे हैं।

मनु कह रहे हैं कि देवताओं के जीवन का लक्ष्य केवल सुखों का भोग ही था और उन्होंने विभिन्न सुखों को अपने पास उसी प्रकार एकत्र कर लिया था, जिस प्रकार नवीन बर्फ कणों की तरह चमकने वाले अनेकानेक तारे आकाशगंगा में दिखाई देते हैं। यानि अपने लिए उन्होंने हर प्रकार से सुख–ऐश्वर्य की व्यवस्था की थी और यही देवजाति का चरम लक्ष्य बन गया था।

कठिन शब्द

सुरभित – सुगंधित, **मधुमय** – सुखमय, **कोलाहल** – ध्वनि, **केंद्रीभूत** – इकट्ठा, **छायापथ** – आकाश गंगा, **तुषार** – बर्फ के सूक्ष्म कण

सब कुछ थे स्वायत्त, विश्व के–बल, वैभव, आनंद अपार,
उद्वेलित लहरों–सा होता, उस समृद्धि का सुख संचार।
कीर्ति, दीप्ति, शोभा थी नचती, अरुण–किरण–सी चारों ओर,
सप्तसिंधु के तरल कणों में, द्रुम–दल में, आनन्द–विभोर।

संदर्भ और प्रसंग : पूर्ववत

व्याख्या

मनु कह रहे हैं कि संसार का समस्त बल, वैभव और आनंद देवगणों के ही अधिकार में था। उनका जीवन अपूर्व सुखमय और समृद्धशाली हो गया था। जिस प्रकार समुद्र में अनंत लहरें उठती हैं, उसी प्रकार उन्होंने ऐश्वर्य एकत्र किया था। उन लहरों से असंख्य रूपों में सुख उत्पन्न होता था।

मनु कहते हैं कि देवताओं का यश, तेज और शोभा प्रातः कालीन सूर्य की किरणों की समान सभी दिशाओं, सप्त सरिताओं के चंचल जलकणों और वृक्ष समूहों में आनंदपूर्वक नृत्य करती थी। इसका तात्पर्य यह है कि गंगा और सिंधु नदी के बीच जल–थल सभी स्तनों पर देवताओं का रूप, शौर्य और प्रताप फैला हुआ था।

कठिन शब्द

स्वायत्त – अपने अधीन, **उद्वेलित** – उठना, दीप्ति – तेज, **सप्त सिंधु** – गंगा–यमुना और पंजाब की पांचों नदियां, **द्रुम दल** – वृक्ष समूह

शक्ति रही हाँ शक्ति–प्रकृति थी, पद–तल में विनम्र विश्रांत,
कँपती धरणी उन चरणों से होकर, प्रतिदिन ही आक्रांत।
स्वयं देव थे हम सब, तो फिर क्यों न विशृंखल होती सृष्टि?
अरे अचानक हुई इसी से, कड़ी आपदाओं की वृष्टि।

संदर्भ और प्रसंग : पूर्ववत

व्याख्या

मनु कहते है कि देवताओं कि भुजाओं में अपूर्व शक्ति विद्यमान थी। प्रकृति भी उनके समक्ष पराजित होकर नम्रता के साथ उनके चरणों में झुक गई थी। धरती उनके चरणों से पद दलित होकर नित्य कांपती रहती थी।

BHDE-144_2nd Proof.indd 155 3/23/2022 12:54:36 PM

वास्तव में प्रकृति के पराजित होने का अर्थ यह है कि देवताओं ने समस्त प्राकृतिक वस्तुओं पर अपना अधिकार कर लिया था और कम्पित धरणी से यह आशय है कि देवता जहां भी आक्रमण करते थे, वहां के निवासी भयभीत होकर अपनी पराजय स्वीकार कर लेते थे।

मनु कहते हैं कि इस कारण देवताओं में अहंकार उत्पन्न हो गया था। उन्होंने यह समझ लिया था कि वे स्वयं ही अपने कर्मों के नियामक हैं और वे पूर्णतः स्वायत्त हैं। अर्थात कुछ भी करने के लिए स्वतंत्र हैं। इस प्रकार उनके संयमहीन कार्यों के कारण ही संसार की सारी व्यवस्था छिन्न–भिन्न होने लगी और उन पर आपत्तियों की भयंकर वर्षा हुई अर्थात् उन्हें अनेक विपत्तियों का सामना करना पड़ा।

कठिन शब्द

पद–तल – चरण में, **विनम्र** – झुकी हुई, **विश्रांत** – थककर, **आक्रांत** – भयभीत होकर, **विश्रृंखल**– अव्यवस्थित

गया, सभी कुछ गया,मधुर तम, सुर–बालाओं का श्रृंगार,

उषा ज्योत्स्ना–सा यौवन–स्मित, मधुप–सदृश निश्चिंत विहार।

भरी वासना–सरिता का वह, कैसा था मदमत्त प्रवाह,

प्रलय–जलधि में संगम जिसका, देख हृदय था उठा कराह।

संदर्भ और प्रसंग : पूर्ववत

व्याख्या

मनु कह रहे हैं कि देवताओं का समस्त ऐश्वर्य और आनंद भोग चला गया अर्थात नष्ट हो गया। सुंदर से सुंदर अप्सराओं का समस्त श्रृंगार चला गया। उषा के समान उनका यौवन भी नष्ट हो गया। चांदनी के समान उनकी मुस्कान और मतवाले भौंरों के समान उनका चिंता से रहित भोग–विलास भी चला गया।

मनु कहते हैं कि देव जाति के जीवन में उमड़ती हुई वासना रूपी नदी कुछ ऐसे मतवाले और तीव्र वेग के साथ बही हुई कि अंत में वह विनाश के समुद्र में ही विलीन हो गई। इस दृश्य को देखकर मनु का हृदय पीड़ा से कराह उठा। कहने का तात्पर्य यह कि देवताओं के घोर भोग–विलास के कारण ही यह भयानक जल–प्रलय हुआ और समस्त देवजाति नष्ट हो गई तथा उनके इस अंत से अब मनु का हृदय व्यथित हो उठा है।

कठिन शब्द

ज्योत्स्ना– चाँदनी, **स्मित** – मंद मुस्कान, **विहार** – भोग विलास, **मदमत्त** – मतवाला, नशे में मस्त, **प्रवाह** – तीव्र वेग, **संगम** – मिलन

चिर–किशोर–वय, नित्य विलासी, सुरभित जिससे रहा दिगंत,

आज तिरोहित हुआ कहाँ वह, मधु से पूर्ण अनंत वसंत?

कुसुमित कुंजों में वे पुलकित, प्रेमालिंगन हुए विलीन,

मौन हुई हैं मूर्छित तानें, और न सुन पड़ती अब बीन।

संदर्भ और प्रसंग : पूर्ववत

व्याख्या

मनु कहते हैं कि जिस प्रकार नवीनता लाने वाला, विलास वृत्ति को उकसाने वाला, दिशाओं को सुगंधित करने वाला, मकरंद बरसाने वाला वसंत आने के कुछ दिनों बाद छिप जाता है, उसी प्रकार हमारे वे अपार सुख के दिन कहाँ विलीन हो गए? जब

BHDE-144_2nd Proof.indd 156 3/23/2022 12:54:36 PM

सदैव युवावस्था की ही अनुभूति होती थी। नित्य ही भोग विलास और वासना में मग्न रहने के सुअवसर मिलते थे। जब दिशाएँ हमारे आमोद से युक्त रहती थीं और चारों ओर मधुरता बरसाती रहती थीं। ऐसा जीवन अब कहाँ चला गया और वह भावुकतापूर्ण बसंत ऋतु न जाने कहाँ चली गयी।

मनु कह रहे हैं कि फूलों से युक्त लतागृहों में प्रेम के आवेश में देवता और अप्सराएँ जब एक दूसरे को आलिंगन में बांधते थे, तब वे अत्यंत पुलकित होते थे। वे दृश्य अब कहीं दिखाई नहीं देते हैं। निरंतर सुनाई देने वाली लयभरी तानें भी अब मूक हो गई हैं, स्वर लहरी भी कहीं सुनाई नहीं देती और निरंतर गुंजित वीणा भी अब शांत है।

कठिन शब्द

किशोर – ग्यारह से पंद्रह वर्ष की अवस्था का बालक, **सुरभित** – सुगंधित, **दिगंत** – दिशा, **तिरोहित होना** – छिपना, **मधु** – आनंद, **वसंत** – यहाँ अर्थ है अपार सुख, **कुसुमित** – फूलों से युक्त, **कुंजों** – लतागृह, **पुलकित** – रोमांचित, **मूर्छित** – लय से युक्त, आनंदमग्न

अब न कपोलों पर छाया–सी, पड़ती मुख की सुरभित भाप,
भुज–मूलों में, शिथिल वसन की, व्यस्त न होती है अब माप।
कंकण क्वणित, रणित नूपुर थे, हिलते थे छाती पर हार,
मुखरित था कलरव, गीतों में,स्वर लय का होता अभिसार।

संदर्भ और प्रसंग : पूर्ववत

व्याख्या

मनु कहते हैं कि जब अप्सराएँ निकट बैठकर गहरी सांसें लेती थीं, तब उनके मुख से निकले सुगंधित उच्छ्वास देवताओं के गालों को स्पर्श करते ही छाया की तरह शीतल प्रतीत होते थे। साथ ही वासना के आवेग में, जब देवबालाएँ देवताओं का आलिंगन करती थी, तब उनके वस्त्र अस्त–व्यस्त होकर देवताओं के बगलों तक आकर बिखर जाते थे। लेकिन अब ये सब दृश्य कहीं नहीं दिखाई पड़ रहे हैं। मनु इन पंक्तियों में देवताओं के जीवन में भोग–विलास की निरंतरता और परंपरा का वर्णन कर रहे हैं। देवताओं, अप्सराओं और पद्मिनी स्त्रियों के बारे में यह कवि प्रसिद्धि है कि उनके शरीर और साँसों से मधुर सुगंध निकलती है।

मनु कहते है कि जब देवबालाएँ देवताओं का आलिंगन करती थी तब उनका शरीर हिल उठता था। ऐसे में उनके कंगन मधुर ध्वनि करते थे और घुंघरूं बज उठते थे। उनकी छाती पर पहना हुआ हार हिलने लगता था और चारों तरफ संगीत की मधुर ध्वनि गूंजने लगती थी और इन गीतों में स्वर एवं लय परस्पर मिले रहते थे।

कठिन शब्द

सुरभित भाप – सुगंधित साँसे, **भुज मूलों** – बगलों, **वसन** – वस्त्र, **माप** – आकार, **कंकण** – कंगन, **नूपुर** – घुँघरू, **मुखरित** – गुंजित, **कलरव** – मधुर संगीत, **अभिसार** – प्रेमी–प्रेमिका का मिलाप

सौरभ से दिगंत पूरित था, अंतरिक्ष आलोक–अधीर,
सब में एक अचेतन गति थी, जिसमें पिछड़ा रहे समीर।
वह अनंग–पीड़ा–अनुभव–सा, अंग–भंगियों का नर्तन,
मधुकर के मरंद–उत्सव–सा, मदिर भाव से आवर्तन।

BHDE-144_2nd Proof.indd 157 3/23/2022 12:54:36 PM

संदर्भ और प्रसंग : पूर्ववत

व्याख्या

देवताओं के भोग–विलास का उल्लेख करते हुए मनु कह रहे है कि उस समय सभी दिशाये सुगंध से परिपूर्ण रहती थीं और आकाश भी पूरी तरह से प्रकाशमय रहता था। मलय पवन की मस्त गति की बड़ी प्रशंसा सुनते हैं, पर यहाँ सभी ऐसे आनंद में थे कि उनके आगे समीर भी हार मान लेता था। देवताओं में एक ऐसी अचेतन गति विद्यमान थी, जो पवन के वेग से भी तेज थी अर्थात् देवताओं के भोग विलास की गति वायु के वेग को भी पीछे छोड़ने वाली थी। देवता निरंतर भोग–विलास में लीन रहने के कारण अपना होश खो बैठे थे और उन्हें भविष्य का बिल्कुल भी ध्यान नहीं था।

मनु कहते है कि जब देवबालाएँ किसी बहाने से अपने विविध अंगो को मोड़कर कई तरह के हाव–भाव के साथ नृत्य करती थीं तो इस बात का संकेत मिलता था कि उन्हें काम पीड़ा की अनुभूति हो रही है। उनकी इन अंग–चेष्टाओं को देखकर देवता भी उनके यौवन–रस का पान करने में रत हो जाया करते थे। यहाँ देवताओं की तुलना भँवरे से की गयी है। जिस तरह एक भंवरा एक फूल से दूसरे फल का रस लेता फिरता है, उसी तरह देवता भी रसपान करने में लगे रहते थे। इस तरह इन पंक्तियों में देवताओं की तीव्र भोग–विलास की प्रवृत्ति को उद्घाटित किया गया है।

कठिन शब्द

सौरभ – सुगंध, **दिगंत** – दिशाएँ, **अन्तरिक्ष** – चारों ओर का वातावरण, आकाश, **आलोक अधीर** – प्रकाश से चंचल, **अचेतन** – मस्ती, **अनंग पीड़ा** – काम पीड़ा, **अंग भंगिमा** – विविध अंगों का हाव–भाव, **मरंद उत्सव** – पुष्प रस, **मदिर भाव** – मस्त भाव, **आवर्तन** – घूमना

सुरा सुरभिमय वदन अरुण, वे नयन भरे आलस अनुराग,

कल कपोल था जहाँ बिछलता, कल्पवृक्ष का पीत पराग।

संदर्भ और प्रसंग : पूर्ववत

व्याख्या

मनु कहते हैं कि उनके मुख सदैव मदिरा की गंध से परिपूर्ण रहा करते थे। रात्रि में देर तक जागने के कारण उनके आलस्य और प्रेम से भरे नेत्र हमेशा लाल रहते थे। उनके सुन्दर गालों की पीली आभा के सामने कल्पवृक्ष का पीला पराग भी अपनी चिकनाहट, उज्ज्वलता और आभा में तुच्छ प्रतीत होता था। इन पंक्तियों में मनु देवबालाओं के अपूर्व सौन्दर्य और वासना में उनके निरंतर अनुगमन का वर्णन करते हैं।

कठिन शब्द

सुरा सुरभिमय – मदिरा की गंध से परिपूर्ण, **वदन** – मुख, **कल** –सुंदर, **बिछलता** – फिसलता, **पराग** – पुष्प रज

बोध प्रश्न – 1

1. 'कामायनी' में कुल कितने सर्ग हैं?

    i) 10

    ii) 11

    iii) 15

    iv) 16

2. कामायनी में वर्णित घटनाक्रम मूलतः लिया गया है –
   i) शतपथ ब्राह्मण
   ii) महाभारत
   iii) रामायण
   iv) जातक कथा
3. कामायनी किसकी पुत्री थी –
   i) इन्द्र
   ii) पवन
   iii) काम
   iv) मनु
4. इड़ा ... का प्रतीक है –
   i) बुद्धि
   ii) हृदय
   iii) काम
   iv) मन
5. चिंता सर्ग के आधार पर देवताओं की वृत्ति किस तरह की प्रतीत होती है –
   i) तपस्वी
   ii) विलासी
   iii) योद्धा
   iv) सात्विक

अभ्यास प्रश्न :

1. कामायनी महाकाव्य में 'चिंता' सर्ग के महत्व की चर्चा कीजिये।
2. 'चिंता' सर्ग के आधार पर मनु का चरित्र चित्रण कीजिये।
3. छंद 1 से 20 की कथावस्तु अपने शब्दों में लिखिए।
4. देवजाति के विनाश के कारणों पर विचार कीजिये।
5. मनु द्वारा वर्णित अनियंत्रित भोगवादी संस्कृति पर टिप्पणी कीजिये।

6.3 सारांश

इस इकाई में हमने कामायनी के प्रथम सर्ग 'चिंता' के प्रारम्भ से 40 तक के छंदों का अध्ययन किया। चिंता कामायनी का वह सर्ग है जहां से कामायनी महाकाव्य को पढ़ने–समझने के सूत्र प्राप्त होते हैं। यहीं से हमें कथा का वह स्रोत मिलता है जिसके आधार पर आगे के घटनाक्रम पर हमारी दृष्टि का निर्माण होता है। 1 से 40 तक के छंदों में मनु की मनोदशा का वर्णन किया गया है। मनु जल प्रलय की घटना से किसी प्रकार बच कर हिमालय के एक ऊंचे शिखर पर चिंतामग्न, एकाकी बैठे हुये हैं। उनकी नाव पास ही के एक विशाल वट वृक्ष से बंधी हुई है। मनु अश्रुपूरित नेत्रों से इस भीषण विनाश लीला को देख रहे हैं। उन्हें देव जाति का गौरवपूर्ण, भोगरत जीवन स्मरित हो रहा है। उस जाति में रहकर, उसके सुखों का उपभोग कर चुके मनु के भीतर भी इस

BHDE-144_2nd Proof.indd 159 3/23/2022 12:54:36 PM

प्रलय के फलस्वरूप एक नई चेतना का जागरण हो रहा है। मनु अब एक तटस्थ चिंतक की भांति देवजाति के पतन के कारणों पर विचार कर रहे हैं। मनु को यह प्रतिभाषित हो रहा है कि प्रकृति के नियमों की उपेक्षा करते हुये अनियंत्रित गति से किया गया विलास ही इस समस्त जाति के पतन का कारण है। इस कथानक और घटनाक्रम से हमें यह भी संकेत मिलता है कि भौतिक–वैज्ञानिक उन्नति के बावजूद भी हमें प्रकृति की नियमावली से कोई छेड़छाड़ नहीं करनी चाहिए। प्रकृति अपराजेय है, उसे किसी भी तरह से बांधा नहीं जा सकता है। हमें उसके नियमों की अवहेलना नहीं करनी चाहिए, साथ ही उसके संकेतों और चेतावनियों की भी अवहेलना से बचना चाहिए।

6.4 उपयोगी पुस्तकें

1. कामायनी के अध्ययन की समस्याएँ, डॉ. नगेन्द्र, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली
2. कामायनी का पुनर्पाठ, सं. परमानंद श्रीवास्तव, अभिव्यक्ति प्रकाशन, इलाहाबाद
3. कामायनी एक पुनर्विचार, गजानन माधव मुक्तिबोध, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली

6.5 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. (iii)
2. (i)
3. (iii)
4. (i)
5. (ii)

BHDE-144_2nd Proof.indd 160 3/23/2022 12:54:36 PM

इकाई 6 काव्य वाचन एवं विश्लेषण : चिंता सर्ग (भाग 2) छंद 41 से 80

इकाई की रूपरेखा

6.0 उद्देश्य

6.1 प्रस्तावना

6.2 'चिंता' सर्ग का वाचन एवं विश्लेषण (छंद 41 से 80)

6.3 सारांश

6.4 उपयोगी पुस्तकें

6.5 बोध प्रश्नों/अभ्यासों के उत्तर

6.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप:

- कामायनी के प्रथम सर्ग 'चिंता' के छंद 41 से 80 तक का अध्ययन करेंगी/करेंगे;
- इस अध्ययन के फलस्वरूप आप इन छंदों का अर्थ, व्याख्या और कठिन शब्द का विवेचन कर सकेंगी/सकेंगे;
- चिंता सर्ग के इन छंदों के काव्य सौष्ठव को जान सकेंगी/सकेंगे;
- व्याख्या और अर्थ के ज्ञान से कविता के रसास्वादन और विचार पक्ष को आत्मसात कर सकेंगी/सकेंगे; और
- कामायनी के प्रथम सर्ग की कथावस्तु और महत्व से परिचित हो सकेंगी/सकेंगे।

6.1 प्रस्तावना

इससे पूर्व के अध्याय में हम 'कामायनी' के महत्व, कथास्रोत और काव्यगत विशेषताओं से परिचित हो चुके हैं। इसके साथ ही हम चिंता सर्ग की कथावस्तु और अंतर्वस्तु को भी समझ चुके हैं। इस सर्ग में कुल 80 छंद है, जिनमें से 40 छंदों का अध्ययन हम पूर्व के अध्याय में कर चुके हैं। इस अध्याय में 41 से लेकर 80 तक के छंदों का अध्ययन प्रस्तावित है। हम जान चुके हैं कि इस सर्ग का प्रारम्भ जल प्लावन की घटना से होता है। जल प्लावन के पश्चात मनु अपनी नौका कि महावट से बांधकर हिमालय की उत्तुंग चोटी पर चिंतामग्न बैठे हुये हैं। वे देवजाति के विनाश के कारणों पर विचार कर रहे हैं और अपने भविष्य को लेकर भी अत्यंत शोकमग्न हैं। मनु देवजाति के विनाश पर जितना अधिक चिंतन कर रहे हैं उनका दुख उतना अधिक बढ़ता जा रहा है। उन्हें प्रतीत होता है कि अनियंत्रित भोगवाद की प्रवृत्ति ही देवजाति के विनाश का कारण है। अध्याय 8 के प्रथम भाग में इसकी विस्तार से व्याख्या की गई है। इस अध्याय में उसी क्रम को आगे बढ़ाया गया है। इस इकाई में 41 से 80 तक के छंदों का अर्थ, व्याख्या और कठिन शब्द दिये गए हैं। आवश्यकतानुसार काव्यगत विशेषताओं और महत्वपूर्ण बिन्दुओं का संकेत भी किया गया है।

6.2 'चिंता' सर्ग का वाचन एवं विश्लेषण (छंद 41 से 80)

विकल वासना के प्रतिनिधि, वे सब मुरझाये चले गये

आह! जले अपनी ज्वाला से, फिर वे जल में गले गये।

BHDE-144_2nd Proof.indd 161 3/23/2022 12:54:36 PM

अरी उपेक्षा–भरी अमरते! री अतृप्ति निबार्ध विलास,

द्विधा–रहित अपलक नयनों की, भूख–भरी दर्शन की प्यास।

संदर्भ और प्रसंग

प्रस्तुत पंक्तियाँ छायावाद के प्रतिनिधि महाकाव्य 'कामायनी' के 'चिंता' सर्ग से उद्धृत हैं। कामायनी जयशंकर प्रसाद की श्रेष्ठ प्रबंध कृति है। इसमें भारतीय संस्कृति में सृष्टि के विकास क्रम में एक निश्चित समय या युग के पश्चात प्रलय की परिकल्पना की गई है, जो जलप्लावन के रूप में परिघटित होती है। इसके पश्चात पुनः नई सृष्टि का प्रारम्भ होता है। इसी क्रम में जलप्लावन की परिघटना से बचकर, हिमालय की एक ऊंची चोटी पर बैठ कर मनु अपने मन में विचार कर रहे हैं।

व्याख्या

मनु कह रहे हैं कि वे देवता अतृप्त वासनाओं के प्रतीक थे। उनके अंतर में स्वयं द्वारा जगाई गई वासना की आग ने उन्हें जलाकर राख कर लिया है। उन्हीं की प्रज्ज्वलित अग्नि ने उन्हें भस्म कर दिया और इस अपार जलराशि में गलकर वे सदैव के लिए नष्ट हो गए हैं। मनु कहते हैं कि देवता खुद को अमर समझते थे इसलिए उन्होंने अपने जीवन में सभी की उपेक्षा ही की है। उनका मन भोग–विलास से कभी तृप्त नहीं हुआ। भोग–विलास को ही उन्होंने जीवन का साध्य समझा परंतु इससे भी उनकी तृष्णा शांत नहीं हुई। वे उत्तरोत्तर विलासिता में ही लीन रहने लगे। किसी प्रकार की भी चिंता किए बिना टकटकी लगाकर वे अप्सराओं के रूप को निरखते रहते थे जिससे हृदय के प्रेम की भूख और उन्हें आँखों के आगे बनाए रखने की प्यास टपकती रहती थी अर्थात वे सदैव उन देव बालाओं के दर्शनों के लिए उत्सुक रहते थे।

कठिन शब्द

विकल – अतृप्त, **प्रतिनिधि** – प्रतीक, **निर्बाध** – निरंतर, **द्विधा** – चिंता, **अपलक** – एक टक, बिना पलक गिराए

बिछुड़े तेरे सब आलिंगन, पुलक–स्पर्श का पता नहीं,

मधुमय चुंबन कातरतायें, आज न मुख को सता रहीं,

रत्न–सौंध के वातायन, जिनमें आता मधु–मदिर समीर,

टकराती होगी अब उनमें, तिमिंगिलों की भीड़ अधीर।

संदर्भ और प्रसंग : पूर्ववत

व्याख्या

मनु कहते हैं कि जिन कृत्यों में देवों का समय व्यतीत होता था, वे सभी समाप्त हो चुके हैं। देव बालाओं का आलिंगन अब दूर हो चुका है। आलिंगन करते समय स्पर्श से जो रोमांच उनके शरीर में हो जाया करता था, वह भी अब स्वप्न हो चुका है। देवता प्रेमातुर होकर देव बालाओं के अधरों के चुंबन हेतु याचना करते थे। कभी–कभी यह याचना इतनी अधिक हो जाती थी कि चुंबनों की अधिकता से वे अप्सराएँ भी तंग हो उठती थी और उनका अनुरोध अस्वीकार कर दिया करती थीं। परंतु अब वे मुख को नहीं दुखा रही हैं अर्थात यह दृश्य अब दिखाई नहीं देते हैं।

मनु यह कह रहे हैं कि जल प्रलय के कारण देव सृष्टि नष्ट हो चुकी है। जिन रत्न–जड़ित भवनों के झरोखों में से मकरंद से मस्त पवन बहा करती थी, आज उन झरोखों से तिमिंगल आदि चंचल सामुद्रिक मछलियों की भीड़ टकरा रही होगी।

BHDE-144_2nd Proof.indd 162 3/23/2022 12:54:36 PM

कठिन शब्द

कातरताएं – अधीर विनय, **रत्न सौध** – रत्न महल, **वातायन** – झरोखा, **मधु–मदिर समीर** – मकरंद से मस्त पवन, **तिमिंगल** – एक प्रकार की सामुद्रिक मछली

देवकामिनी के नयनों से, जहाँ नील नलिनों की सृष्टि।
होती थी, अब वहाँ हो रही, प्रलयकारिणी भीषण वृष्टि।
वे अम्लान–कुसुम–सुरभित, मणि–रचित मनोहर मालायें।
बनीं श्रृंखला, जकड़ी जिनमें, विलासिनी सुर–बालायें।

संदर्भ और प्रसंग : पूर्ववत

व्याख्या

मनु प्रलय से पूर्व की स्मृतियों पर चिंतन कर रहे हैं। वे सोच रहे हैं कि देव सुंदरियाँ जिधर भी अपने नेत्र फेरती थीं उधर ही नील कमलों की वर्षा होने लगती थी अर्थात उन देव बालाओं के नेत्र सुंदर नीले कमल के समान थे। वे जिस ओर भी दृष्टि फेर लेती थी, उधर ही नीले कमलों का संसार जैसा झलकने लगता था, परंतु आज जल प्रलय के कारण इनका विनाश हो गया है और अब उन नीलकमल के स्थान पर भीषण प्रलयकारी वर्षा हो रही है।

मनु कहते हैं कि खिले हुए सुगंधित फूलों और मणियों को लेकर देवता लोग मनोहर मालाएँ निर्मित करते थे और उन मालाओं से विलासिनी देव बालाओं को जंजीर की तरह जकड़ देते थे यानि उन्हें पूर्णतः मालाओं से सुसज्जित कर देते थे

कठिन शब्द

अम्लान – खिले, **नलिन** – कमल, **शृंखला** – जंजीर,

देव–यजन के पशुयज्ञों की, वह पूर्णाहुति की ज्वाला,
जलनिधि में बन जलती कैसी, आज लहरियों की माला।
उनको देख कौन रोया यों, अंतरिक्ष में बैठ अधीर!
व्यस्त बरसने लगा अश्रुमय, यह प्रालेय हलाहल नीर।

संदर्भ और प्रसंग : पूर्ववत

व्याख्या

मनु कहते हैं कि जिस प्रकार यज्ञ की समाप्ति पर पशुओं की आहुति से यज्ञ की ज्वाला भभक उठती थी, उसी प्रकार अब ये सागर की भीषण लहरें ही उस अग्नि की लपटों के समान प्रतीत हो रही हैं। कहने का आशय यह कि जहां कभी यज्ञ और बलि कर्म होते थे, वहां आज समुद्र लहरा रहा है। इन पंक्तियों में किसी रूप में देवताओं के विध्वंस का कारण पशुओं के यज्ञ को भी माना गया है। इसका आशय यह कि देवताओं ने पहले पशुओं का वध करके उनकी आहुति दी थी और आज प्रलय ने उन्ही देवताओं का विनाश कर दिया।

मनु कहते हैं कि देवताओं की इस वासनामय अधोगति को देखकर मानों आकाश में बैठ कर कोई अधीर होकर रोया है। उसके आंसुओं के रूप में प्रलय मचाने वाला चारों ओर ऐसा विषैला पानी बरसा कि उससे सब कुछ नष्ट हो गया। कहने का अर्थ यह कि भोग विलास के इस भीषण परिणाम को देखकर ही शायद आसमान रो पड़ा है। उसके नेत्रों से प्रवाहित होने वाली अश्रु धारा ही आज इस प्रलयकारी भीषण वर्षा के रूप में देवजाति के विनाश का कारण बनी है।

BHDE-144_2nd Proof.indd 163 3/23/2022 12:54:36 PM

कठिन शब्द

यजन – यज्ञ, यज्ञ स्थान, **पशु यज्ञ** – पशु बलि, **पूर्णाहुति** – समाप्ति पर दी जाने वाली आहुति, **व्यस्त** – व्यापक, **हलाहल** – विषैला, **प्रालेय** – निर्दय

हा–हा–कार हुआ क्रंदनमय, कठिन कुलिश होते थे चूर,
हुए दिगंत बधिर, भीषण रव, बार–बार होता था क्रूर।
दिग्दाहों से धूम उठे, या जलधर उठे क्षितिज–तट के!
सघन गगन में भीम प्रकंपन, झंझा के चलते झटके।

संदर्भ और प्रसंग : पूर्ववत

व्याख्या

मनु कहते हैं कि जल प्लावन होते ही कठोर बिजली टूट–टूटकर गिरने लगी। इससे चारों ओर भयंकर हाहाकार मच गया और रोने की ध्वनियाँ सुनाई देने लगीं। बिजलियों के टकराने की इतनी भीषण आवाजें बार–बार सुनाई दे रही थीं कि इसके कारण दिशाएं भी बहरी सी हो गईं।

प्रलय काल की स्थिति का वर्णन करते हुए मनु कहते हैं कि यह निश्चय नहीं हो पा रहा था कि चारों दिशाओं में आग सी लग जाने के कारण चारों ओर धुआँ ही धुआँ दिखाई देता था या आकाश के कोनों में ही बादल ही घिर आए थे। साथ ही उसी समय तेज आंधी के भयंकर झोंकों के चलने से आकाश में भरे मेघ बड़े वेग से डोलने लगे थे। इस झंझावात में कुछ भी निश्चय न होने कारण इन पंक्तियों में संदेह अलंकार प्रयुक्त हुआ है।

कठिन शब्द

क्रंदन – रोने की आवाज, **कुलिश** – बिजली, **दिगंत** – दिशाएँ, **बधिर** – बहरी, **दिग्दाहों** – दिशाओं में आग लगना, **क्षितिज** – वह स्थान जहां आकाश और पृथ्वी मिले प्रतीत होते हैं, **भीम** – भयंकर, **प्रकंपन** – जोर से हिलना, **झंझा** – आँधी

अंधकार में मलिन चित्र की, धुँधली आभा लीन हुई,
वरुण व्यस्त थे, घनी कालिमा, स्तर–स्तर जमती पीन हुई।
पंचभूत का भैरव मिश्रण, शंपाओं के शकल–निपात,
उल्का लेकर अमर शक्तियाँ, खोज रहीं ज्यों खोया प्रात।

संदर्भ और प्रसंग : पूर्ववत

व्याख्या

प्रलय का वर्णन करते हुए मनु कह रहे हैं कि सूर्य का प्रकाश पहले कुछ धुंधला सा दिखाई पड़ा, पर कुछ ही देर में बाद सूर्य उस अंधकार में ही अदृश्य हो गया और अब चारों ओर अंधकार ही अंधकार छा गया है। जल के देवता वरुण भी क्रोधित होकर भयंकर वर्षा करने लगे और चारों ओर धुएँ से पैदा हुई कालिमा की एक मोटी परत जम गई।

मनु कहते हैं कि जिन पंच महाभूतों अर्थात् (पृथ्वी, जल, वायु, आकाश, अग्नि) के मिश्रण से संपूर्ण सृष्टि बनी है लेकिन आज उन्हीं का मिश्रण भयंकर प्रलयकारी दृश्य प्रस्तुत कर रहा है। अर्थात जो पृथ्वी बसने के लिए है वह अब फट रही थी। प्यास बुझाने का कार्य करने वाला जल अब भवनों को डुबाने का कार्य कर रहा था। अग्नि, जिसका कार्य भोजन पकाना है वह अब देवताओं के शरीर को भष्म कर रही थी। इस प्रकार

BHDE-144_2nd Proof.indd 164 3/23/2022 12:54:37 PM

बिजलियां टूट–टूट कर गिर रही थीं और वे विद्युतखण्ड ऐसे प्रतीत हो रहे थे, मानो वास्तविक अमर शक्तियां हों, जो कि इन देवताओं से विभिन्न हीं थी और अंधकार में छिपे प्रातःकाल को मशाल लेकर ढूंढ रही थीं।

कठिन शब्द

मित्र – सूर्य, **व्यस्त** – क्रुद्ध, **स्तर** – तह, **पीन** – भारी,मोटी, **पंचभूत** – पृथ्वी,जल, अग्नि, वायु और आकाश, **भैरव मिश्रण** – संहारक रूप में मिलना, **शंपा** – बिजली, **शकल** – टुकड़े, **निपात** – गिरना, **उल्का** – मशाल

बार–बार उस भीषण रव से, कँपती धरती देख विशेष,

मानों नील व्योम उतरा हो, आलिंगन के हेतु अशेष।

उधर गरजतीं सिंधु लहरियाँ, कुटिल काल के जालों सी,

चली आ रहीं फेन उगलती, फन फैलाये व्यालों–सी।

संदर्भ और प्रसंग : पूर्ववत

व्याख्या

मनु प्रलय कि स्थिति का वर्णन करते हुए कहते हैं कि लगातार हो रहे भयंकर कोलाहल के कारण धरती भी काँप उठी थी। चारों ओर नीला अंधकार ही दिखाई देता था। उसे देखकर ऐसा लगता था मानो काँपती हुयी धरती को धीरज बंधाने के लिए नीला आकाश ही नीचे उतर आया है।

मनु कहते हैं कि उधर कुटिल मृत्यु के जालों के समान दिखाई देने वाली सागर की भीषण लहरें गरजती हुई इस प्रकार आगे बढ़ती थी, मानो अपने–अपने फन फैलाए, झाग उगलते अनेक जहरीले सांप बढ़े चले आ रहे हों। यहां लहरों की उपमा सर्प से देते हुए यह कल्पना की गई है कि लहरों से उठने वाला फेन ऐसा प्रतीत होता था, मानो वह सर्पों के मुख से निकला हुआ जहर हो। इन पंक्तियों में उपमा और उत्प्रेक्षा अलंकार हैं।

कठिन शब्द

रव – कड़क, **विशेष**– अत्यधिक, **व्योम** – आकाश, **अशेष** – सम्पूर्ण, **फेन** – झाग, **व्याल** – सर्प

धँसती धरा, धधकती ज्वाला, ज्वाला–मुखियों के निश्वास,

और संकुचित क्रमशः उसके, अवयव का होता था ह्रास।

सबल तरंगाघातों से उस क्रुद्ध सिंधु के, विचलित–सी,

व्यस्त महाकच्छप–सी धरणी, ऊभ–चूभ थी विकलित–सी।

संदर्भ और प्रसंग : पूर्ववत

व्याख्या

इन पंक्तियों में मनु जल प्रलय की भयानकता का वर्णन कर रहे हैं। वे कहते हैं कि कि धीरे–धीरे धरती नीचे की ओर धंसने लगी और उसके अंदर की धधकती हुई आग ऊपर प्रकट हुई जो ज्वालामुखी से फूटने वाली भीषण लपटों के समान प्रतीत होती थी। इस प्रकार धीरे–धीरे तल की ओर सिमटने के कारण पृथ्वी का भू–भाग क्रमशः संकुचित होने लगा।

प्रलय के उस समय में कुछ समुद्र की शक्तिशाली लहरों के कारण पृथ्वी व्याकुल और क्षुब्ध लगने लगी जैसे प्रबल तरंगों से कोई दीर्घकाय कछुआ घबरा जाए और ऐसा प्रतीत होने लगा कि मानो दीर्घकाय कछुए के समान धरती लहरों के चपेटों से ऊपर

BHDE-144_2nd Proof.indd 165 3/23/2022 12:54:37 PM

की ओर सरक आई हो। कहने का तात्पर्य है कि पृथ्वी का अधिकांश भाग जलमग्न हो गया और थोड़ा सा भाग ही लहरों के थपेड़े खाता हुआ डूबने से बचा रह गया था।

कठिन शब्द

निश्वास – लपटें, **संकुचित** – सिमटना, **अवयव** – अंग, **ह्रास** – कमी, **तरंगाघात** – लहरों का थपेड़ा, **व्यस्त** – घबराना, **कच्छप** – कछुआ, **ऊभ–चूभ** – क्षुब्ध, **विकलित** – व्याकुल

बढ़ने लगा विलास–वेग सा, वह अति भैरव जल–संघात,

तरल–तिमिर से प्रलय–पवन का होता आलिंगन, प्रतिघात।

बेला क्षण–क्षण निकट आ रही, क्षितिज क्षीण, फिर लीन हुआ,

उदधि डुबाकर अखिल धरा को, बस मर्यादा–हीन हुआ।

संदर्भ और प्रसंग : पूर्ववत

व्याख्या

मनु कहते हैं कि वह भयानक जलराशि उसी प्रकार से विस्तृत होने लगी जिस प्रकार से कामी मनुष्य के हृदय में भोग की लालसा लगातार बढ़ती जाती है। चारों ओर भयंकर जल राशि एकत्र होने लगी थी। साथ ही दिग्दाह के धुयें से निर्मित अंधकार की सघन परतों पर भयंकर पवन आकर बार–बार टकराता था और ऐसा लगता था कि उन दोनों में भीषण घात–प्रतिघात चल रहा है।

मनु कहते हैं कि धीरे–धीरे सागर का किनारा क्षण–प्रतिक्षण समीप जाने लगा अर्थात् अभी तक जितनी पृथ्वी डूबने से बची थी, वह भी डूबने लगी। दूर जहां आकाश पृथ्वी से मिला हुआ दिखाई पड़ता था वहाँ भी जल पहुँच गया और वहाँ की शेष पृथ्वी भी जलमग्न हो गई। इस कारण अब जल और आकाश मिले हुये दिखाई देने लगे। समुद्र की यह मर्यादा है कि वह अपने तट को नहीं डुबाता है लेकिन प्रलयकाल के इस सागर ने अपनी मर्यादा का भी परित्याग कर दिया था। अर्थात प्रलयकालीन समुद्र अपनी मर्यादा का त्याग कर समस्त पृथ्वी को डुबो कर सीमाहीन हो गया था।

कठिन शब्द

भैरव – भयंकर, **जल–संघात**– जलराशि, **तिमिर** – अंधकार, **प्रतिघात** – चोट, **बेला** – समुद्र का किनारा, **उदधि** –समुद्र, **अखिल** – समस्त, **मर्यादा हीन** – असीम

करका क्रंदन करती गिरती और कुचलना था सब का

पंचभूत का यह तांडवमय नृत्य हो रहा था कब का।

एक नाव थी, और न उसमें डांड़े लगते, या पतवार,

तरल तरंगों में उठ–गिर कर बहती पगली बारंबार।

संदर्भ और प्रसंग : पूर्ववत

व्याख्या

प्रलयकालीन भयानकता वर्णन करते हुए मनु कहते हैं कि भीषण ध्वनि करते हुये चारों ओर ओले बरस रहे थे और उनके नीचे सब कुछ कुचला जाने लगा था। पंचभूतों का यह विनाशकारी कार्य ना जाने कब तक चलता रहा। भगवान शंकर ने विनाश की मुद्रा में आकर तांडव नृत्य किया था, इसलिए कवि ने यहाँ प्रलय की तुलना तांडव नृत्य से की है।

अब मनु अपने जीवित बचे रहने की कथा सुनाते हुये कह रहे हैं कि इस जल प्लावन में मुझे एक ऐसी नाव मिली, जिसमे ना कोई डाँड़ (नाव खेने का बांस) था और ना ही कोई पतवार थी।

BHDE-144_2nd Proof.indd 166 3/23/2022 12:54:37 PM

जब वे उसमें सवार हुये तब वह नौका चंचल लहरों से होती हुयी आगे बढ़ने लगी। यह नौका पगली की भांति इधर–उधर भाग रही थी। कभी यह नौका ऊपर उठती थी तो कभी नीचे गिरती थी। कभी अपने आप ही आगे बढ़ जाती थी।

कठिन शब्द

करका – ओले, **क्रंदन** – घोर ध्वनि, **तांडवमय** – विनाशकारी, **डांड़े** – नाव खेने की लकड़ी, **पतवार** – नाव को दिशा देने वाला लकड़ी का भाग जो आधा जल में डूबा रहता है, **तरल** – चंचल

लगते प्रबल थपेड़े, धुंधले तट का था कुछ पता नहीं,

कातरता से भरी निराशा देख नियति पथ बनी वहीं।

लहरें व्योम चूमती उठतीं, चपलाएं असंख्य नचतीं,

गरल जलद की खड़ी झड़ी में बूंदें निज संसृति रचती।

संदर्भ और प्रसंग : पूर्ववत

व्याख्या

मनु उस नौका में बैठने पर अपनी स्थिति का वर्णन कर रहे हैं। वे कहते हैं कि मैं जिस नाव में बैठा था, उस नाव पर लहरें बार–बार भीषण आघात कर रही थीं। सामने ऐसा धुंधलापन छाया था कि किनारा ही नहीं दिखाई पड़ रहा था। मेरे हृदय में घोर निराशा छाने लग गई थी। मैं निराश और अधीर होकर उस समय यही सोच पा रहा था कि अब भाग्य जिस पथ पर ले जाए वही ठीक है। अब तो मैं भाग्य के ही अधीन हूं और ऐसा सोचकर मैं शांत बैठा रहा।

मनु प्रलयकालीन स्थिति और जल प्रलय का वर्णन करते हुए कहते हैं कि समुद्र में ऊँची–ऊँची लहरें उठ रही थी। उन्हें देखकर ऐसा लगता था, जैसे वे आकाश का चुंबन कर रही हो। आकाश में बिजलियाँ ऐसे चमक रही थीं, जैसे वे नृत्य कर रही हों। बादलों से विनाशकारी मूसलाधार वर्षा हो रही थी। उससे बूंदों का एक संसार जैसा निर्मित हो गया था। कहने का आशय यह है कि बूंदों के अतिरिक्त और कुछ नहीं दिखाई देता था। ऐसा लग रहा था कि मानो यह संसार प्राणियों का नहीं बल्कि बूंदों का ही निवास स्थान है।

कठिन शब्द

कातरता – अधीरता, **नियति** – भाग्य, **व्योम** – आकाश, **चपलायें** – बिजली, **गरल** – विनाशकारी, खड़ी झड़ी मूसलाधार वर्षा, **संसृति** – संसार

चपलायें उस जलधि विश्व में स्वयं चमत्कृत होती थीं,

ज्यों विराट बाड़व ज्वालायें खंड–खंड हो रोती थीं।

जलनिधि के तल वासी जलचर विकल निकलते उतराते,

हुआ विलोड़ित गृह, तब प्राणी कौन! कहाँ! कब! सुख पाते ?

संदर्भ और प्रसंग : पूर्ववत

व्याख्या

मनु कहते हैं कि उस प्रलयकाल में जब बिजलियां आकाश में चमकती थीं तो जल में उनका प्रतिबिंब ऐसा लगता था, मानो समुद्र के अंदर की अग्नि भिन्न–भिन्न अंशों में विभाजित होकर रो रही हो।

उस समय सागर के भीतर निवास करने वाले प्राणी, जल–जंतु व्याकुल होकर ऊपर आ गए थे। जब उस जलगृह में ही खलबली मच गई तब कौन ऐसा था जो एक क्षण

BHDE-144_2nd Proof.indd 167 3/23/2022 12:54:37 PM

को भी उसके किसी भाग में सुख पा सकता था? अर्थात् कोई भी स्थान क्यों ना हो, उसी समय तक निवासियों को सुख पहुंचा सकता है, जब तक कि वह स्वयं सुरक्षित हो। आज जब जल–प्लावन के कारण समुद्र ही परेशान है तो वह दूसरों को कैसे सुख प्रदान कर सकता है?

कठिन शब्द

जलधि – समुद्र, **विश्व** – फैले हुये, **चमत्कृत** – चमकता, **बाड़व ज्वालायें** – समुद्र के भीतर की अग्नि, **खंड–खंड** – विभाजित, **उतराते** – ऊपर तैरते हुये, **विलोड़ित** – खलबली से भरा

घनीभूत हो उठे पवन, फिर साँसों की गति होती रुद्ध,

और चेतना थी बिलखाती, दृष्टि विफल होती थी क्रुद्ध ?

उस विराट आलोड़न में, ग्रह तारा बुद–बुद से लगते,

प्रखर प्रलय पावस में जगमग, ज्योतिरिंगणों से जगते।

संदर्भ और प्रसंग : पूर्ववत

व्याख्या

मनु कहते हैं कि पवन का चलना बंद हो गया था, मानो वह जम गया हो। उसके एक स्थान पर एकत्र होने से सांस लेना भी मुश्किल हो गया था जिसके कारण शरीर की समस्त चेतना समाप्त होने लगी थी। चारों ओर अंधकार व्याप्त हो गया था इस कारण कुछ भी दिखाई नहीं दे रहा था। ऐसी स्थिति में दृष्टि भी क्षुब्ध हो उठी थी।

मनु कहते हैं कि उस घोर हलचल के कारण समुद्र के ऊपर चमकने वाले तारे और नक्षत्र, कभी तो पानी के बुलबुलों के जैसे लगते थे और कभी–कभी ऐसा लगता था, मानो उस प्रलयकारी घोर वर्षा में जुगनुओं की तरह इधर–उधर टिमटिमा रहे हों।

कठिन शब्द

घनीभूत – जम जाना, **रुद्ध** – रुकना, **चेतना** – बोध शक्ति, **बिलखती** – व्यग्र होती, **क्रुद्ध** – क्षुब्ध, **आलोड़न** – समुद्र की क्षुब्ध दशा, **प्रखर** – तीव्र, **पावस** – वर्षा, **ज्योतिरिंगणों** – जुगनू

प्रहर दिवस कितने बीते, अब इसको कौन बता सकता !

इसके सूचक उपकरणों का चिन्ह न कोई पा सकता।

काला शासन–चक्र मृत्यु का कब तक चला न स्मरण रहा,

महामत्स्य का एक चपेटा दीन पोत का मरण रहा।

संदर्भ और प्रसंग : पूर्ववत

व्याख्या

मनु कह रहे हैं कि इस प्रलय के बीच कितने प्रहर और कितने दिन बीते, इसे कौन बता सकता है, क्योंकि जिन साधनों से प्रहरों और दिनों की गणना होती है, अब उनका चिन्ह भी शेष नहीं था अर्थात प्रलय की वर्षा के कारण दिन और रात के सूचक–उपकरण सूर्य व चंद्र का कोई पता नहीं था। अतएव यह जानना कठिन हो गया कि कितने दिन एवं कितने प्रहर बीत चुके हैं और ऐसी स्थिति को चलते हुए कितना समय हो गया है?

मनु कह रहे हैं कि मृत्यु का जो क्रूरतापूर्ण साम्राज्य व्याप्त था, वह कब तक चलता रहा ? इसका भी किसी को पता नहीं है। इसी बीच एक दीर्घकाय मछली मेरी नाव से टकराती है। उस विशाल मछली के आघात से मेरी नाव टूट ही जाने वाली थी।

BHDE-144_2nd Proof.indd 168 3/23/2022 12:54:37 PM

कठिन शब्द

प्रहर – तीन घंटे का समय, **सूचक** – सूचना देने वाले, **उपकरण** – साधन, **काला** – अत्याचारपूर्ण, **शासन चक्र** – अधिकार, **मत्स्य** – मछली, **पोत**– नौका, **मरण रहा** – टूट जानी चाहिए थी

किन्तु उसी ने ला टकराया इस उत्तर–गिरि के शिर से,
देव सृष्टि का ध्वंस अचानक श्वास लगा लेने फिर से।
आज अमरता का जीवित हूँ मैं वह भीषण जर्जर दंभ,
आह सर्ग के प्रथम अंक का अधम पात्र मय सा विष्कंभ !

संदर्भ और प्रसंग : पूर्ववत

व्याख्या

मनु कह रहे हैं कि मेरी नाव उस बड़ी सी मछली के टकराने से निसंदेह टूट ही जाती, परंतु ऐसा नहीं हुआ और नाव बच गई। बचने के साथ ही उस विशाल मछली के आघात से मेरी नाव हिमालय की ऊंची चोटी पर जा पहुंची और देवताओं का वंश नष्ट होते–होते बच गया।

मनु अपनी मनःस्थिति का वर्णन करते हुए कहते हैं कि मैं क्या हूँ? देवताओं के चूर्ण किए गए अभिमान की बची हुई निशानी मात्र हूँ। जिस प्रकार किसी नाटक के प्रथम अंक का कोई पात्र विगत घटनाओं को दोहराता है, उसी प्रकार सृष्टि के प्रारम्भ में ही देवताओं के नष्ट होने की शोकपूर्ण कथा दुहराने का दुर्भाग्य मुझे मिला है अर्थात उसी प्रकार अब मैं भी देवताओं के विनाश की करुणापूर्ण कहानी को सुनाने के लिए बच गया हूँ।

कठिन शब्द

उत्तर गिरि – हिमालय, **ध्वंश** – बीजनाश, **सर्ग** – सृष्टि, **विष्कंभ** – नाटक का वह दृश्य जिसमें किसी पात्र के माध्यम से बीती हुई और आगत घटनाओं की सूचना दी जाती है

ओ जीवन की मरु मरीचिका, कायरता के अलस विषाद !
अरे पुरातन अमृत ! अगतिमय मोहमुग्ध जर्जर अवसाद।
मौन ! नाश ! विध्वंश ! अंधेरा ! शून्य बना जो प्रगट अभाव,
वही सत्य है, अरी अमरते ! तुझको यहाँ कहाँ अब ठाँव।

संदर्भ और प्रसंग : पूर्ववत

व्याख्या

मनु कहते हैं कि यह जीवन एक तरह की मृगमरीचिका अर्थात धोखा मात्र है। जिस प्रकार मरुस्थल की भूमि में सूर्य की तेज किरणों की चमक से मृग को जल का भ्रम होता है और जल की आशा में दौड़ता चला जाता है, उसी प्रकार से मनुष्य के जीवन में भी सुख कहीं नहीं है, जिसे हम सुख मानते हैं, वह तो केवल भ्रम मात्र है। मनु को स्वयं पर ग्लानि हो रही है। वे कहते हैं कि मैं कायर हूँ, आलसी हूँ, शोक से पूर्ण हूँ। मैं अत्यंत प्राचीन और अमर जाति का वंशज होते हुए भी, दुर्दशा से ग्रस्त हूँ।

मनु कहते हैं कि कोलाहल सत्य नहीं है अपितु मौन ही सत्य है। नाश सत्य है, महानाश सत्य है। चारों ओर व्याप्त अंधकार, नीरवता, नाश, विध्वंस तथा सभी कुछ नष्ट हो जाने के कारण स्पष्ट दिखाई देने वाला यह वातावरण सत्य ही लगता है। जिसने सब कुछ सूना कर दिया वह स्पष्ट दिखाई देने वाला अभाव सत्य है। वे बलपूर्वक कह रहे हैं कि यह सब सत्य है। आज तक सभी देवता स्वयं को अमर समझते थे, यह बात मिथ्या ही थी, क्योंकि यह बात यदि सत्य होती तो इस प्रलय में वे नष्ट नहीं होते। मनु इस

BHDE-144_2nd Proof.indd 169 3/23/2022 12:54:37 PM

प्रलयकारी महानाश को ही सत्य समझते हैं और इस व्याप्त अभाव को भी मनु सत्य ही मानते है, जो चारों ओर शून्य बनके सभी ओर दिखाई दे रहा है। वे यही कहते हैं कि हे अमरते ! तेरे लिए अब यहां कोई स्थान नहीं है।

कठिन शब्द

मरीचिका – मृगतृष्णा, **अलस** – आलस्यपूर्ण, **विषाद** – दुख, **पुरातन** – प्राचीन, **अमृत** – अमर, देवता, **अगतिमय** – बुरी दशा वाला, ठाँव स्थान

मृत्यु, अरी चिर–निद्रे ! तेरा अंक हिमानी सा शीतल,

तू अनंत में लहर बनाती काल–जलधि की सी हलचल।

महा–नृत्य का विषम–सम अरी, अखिल स्पंदनों की तू माप,

तेरी ही विभूति बनती है सृष्टि सदा होकर अभिशाप।

संदर्भ और प्रसंग : पूर्ववत

व्याख्या

मनु कहते हैं कि हे मृत्यु , तुम प्राणधारियों की आँख भी सदैव के लिए बंद कर देती हो। तुम्हारी गोद बर्फ के समान शीतल है, इसलिए जो मनुष्य तुम्हारी गोद में आता है, वह चेतनाहीन हो जाता है। जैसे समुद्र में हलचल होती है तो लहरें उठती है, उसी प्रकार तुम भी इस संसार रूपी सागर में भयंकर हलचल पैदा करती हो और असंख्य प्राणियों के प्राण हर लेती हो अर्थात् न जाने कितने प्राणी प्रतिदिन मृत्यु को प्राप्त होते रहते हैं।

संगीत और नृत्य में सम और विषम नामक दो अवस्थाएं होती हैं। जब नर्तक या नर्तकी के चरणों का पूरा दबाव पृथ्वी पर पड़ता है, तब सम दशा होती है। मनु ने मृत्यु को नर्तकी की संज्ञा दी है, जो महानृत्य में लीन है। जब जब वह समकाल पर धरती को चरणों से दबाती है तो जहां भी उसके चरणों से दबाव पड़ता है, वहां की वस्तु नष्ट हो जाती है अर्थात् वह प्राणियों से प्राणों को अलग कर देती है।

मृत्यु मनुष्य की समस्त चेतना का अंत करने वाली है। उसका आगमन ही अहितकारी है परंतु इतना होते हुए भी उसका यह महत्व है कि उसी के कारण सृष्टि का नवीन रूप भी विकसित होता है। इस प्रकार मृत्यु के अहितकारी और उज्ज्वल दोनों ही रूप होते हैं।

कठिन शब्द

चिर निद्रे – सदैव के लिए सुलाने वाली, **अंक** – गोद, **हिमानी** – हिमराशि, **अनंत** – व्यापक विश्व, **काल जलधि** – मृत्यु समुद्र,

अंधकार के अट्टहास सी, मुखरित सतत चिरंतन सत्य,

छिपी सृष्टि के कण–कण में तू, यह सुंदर रहस्य है नित्य।

जीवन तेरा छुद्र अंश है व्यक्त नील घन – माला में,

सौदामिनी–संधि सा सुंदर क्षण भर रहा उजाला में।

संदर्भ और प्रसंग : पूर्ववत

व्याख्या

मनु कह रहे हैं कि जिस प्रकार कोई व्यक्ति घोर अंधकार में जोर से हंसता है तो उसका हंसना हमें सुनाई देता है, पर हंसने वाले इंसान को नहीं देख पाते हैं, उसी प्रकार मृत्यु का आकार हमें नहीं दिखता, पर उसके विनाशकारी कार्य हमें स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ते हैं। इस प्रकार मृत्यु एक चिरंतर सत्य के रूप संसार में हमेशा विद्यमान रहती है।

BHDE-144_2nd Proof.indd 170 3/23/2022 12:54:37 PM

मनु मृत्यु के बारे में कह रहे हैं कि हे मृत्यु जीवन तो तेरा छोटा सा अंश है। जैसे सामने फैले हुये बादलों बिजली की सुंदर रेखा क्षण भर चमक कर छिप जाती है, उसी प्रकार जीवन भी अत्यंत अल्प काल तक प्रकाशित रह कर तुझमें विलीन हो जाता है।

कठिन शब्द

अट्टहास – ठठाकर हँसना, **मुखरित** – सुनाई देना, **चिरंतन** – अनादि काल से, **नीति** – शाश्वत, स्थायी, **व्यक्त** – प्रकट, **सौदामिनी संधि** – बिजली की रेखा

पवन पी रहा था शब्दों को निर्जनता की उखड़ी सांस,
टकराती थी, दीन प्रतिध्वनि बनी हिम–शिलाओं के पास।
धू–धू करता नाच रहा था अनस्तित्व का ताण्डव नृत्य,
आकर्षण विहीन विद्युत्कण बने भारवाही थे भृत्य।

संदर्भ और प्रसंग : पूर्ववत

व्याख्या

प्रसाद जी कह रहे हैं कि मनु के मुख से निकले शब्द हवा में विलीन हो रहे थे। उनकी ध्वनि से चारों ओर सूनापन दूर हो रहा था। उनके शब्द जब हिम–शिलाओं से टकराते तो एक करुण प्रतिध्वनि गूंज उठती थी, पर उनको सुनने वाला वहां कोई भी नहीं था।

वहाँ विनाश का ऐसे प्रबल वेग से नृत्य हुआ कि सब कुछ मिट गया शून्य में चक्कर काटने वाले विद्युत के परमाणुओं में अभी आकर्षण शक्ति नहीं आई थी, अतः जैसे कोई नौकर बोझा ढोता फिरता है, उसी प्रकार वे अपना भार ढोते फिरते थे।

कठिन शब्द

पावन – वायु, **निर्जनता** – सूनापन, **उखड़ी सांस** – दूर हुये, **दीन** – करुण, **धू–धू करता** – तीव्र गति से, **तांडव नृत्य** – विनाश कार्य, **विद्युत्कण** – विद्युत के परमाणु, **भारवाही** – बोझा ढोने वाला, **भृत्य** – नौकर

मृत्यु–सदृश शीतल निराश ही आलिंगन पाती थी दृष्टि,
परम व्योम से भौतिक कण सी घने कुहासों की थी वृष्टि।
वाष्प बना उजड़ा जाता था या वह भीषण जल संघात,
सौर चक्र में आवर्तन था प्रलय निशा का होता प्रात।

संदर्भ और प्रसंग : पूर्ववत

व्याख्या

मनु कह रहे हैं कि आँखों को चारों ओर हृदयहीन मृत्यु जैसी निराशा का ही दर्शन हो रहा था। इतने में ऊपर महा आकाश से जैसे स्थूलकण बरसते हैं, उसी प्रकार घना कुहरा बरसने लगा था।

मनु कहते हैं कि आकाश से कोहरे की परतों को देखकर कभी–कभी यह संदेह हो रहा था कि कहीं यह प्रलय की भीषण जलराशि ही तो भाप बनकर नहीं उड़ रही है, जिसके कारण चारों तरफ कोहरा ही कोहरा दिखाई पड़ रहा है। अब सभी ग्रह, मंगल, चंद्र, सूर्य और उपग्रह भी अपनी पूर्व गति के साथ आकाश में चक्कर लगा रहे हैं। प्रलयरुपी रात्रि का अंत और सुंदर प्रभात की आशा होने जा रही थी।

कठिन शब्द

सदृश – समान, **शीतल** – ठंडी, हृदयहीन, **परमव्योम** – महाआकाश, **भौतिक** – स्थूल, दृश्यमान, **कुहासा** – कुहरा, **जल संघात** – जल राशि, **सौर चक्र** – सूर्य मण्डल, **आवर्तन** – घुमाव, **प्रात** – प्रभात

BHDE-144_2nd Proof.indd 171 3/23/2022 12:54:37 PM

बोध प्रश्न –1

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. 'चिंता' सर्ग में मनु ने देवताओं को किसका प्रतीक कहा है?
   (i) त्याग और तपस्या
   (ii) अतृप्त वासना
   (iii) निराशा
   (iv) जीवन
2. 'दिग्दाह' का क्या अर्थ है ?
   (i) करुण क्रंदन करना
   (ii) आत्मा की अग्नि
   (iii) दिशाओं में आग लगना
   (iv) वज्रपात
3. मनु ने भयंकर जलराशि के बढ़ने की तुलना किससे की है?
   (i) कामी के हृदय में भोग की इच्छा
   (ii) त्यागी के जीवन में वैराग्य
   (iii) मन के उल्लास की तरह
   (iv) अंधकार और निराशा
4. चिंता सर्ग में मनु जीवन को क्या कह कर संबोधित करते हैं?
   (i) आनंद स्वरूप
   (ii) कठिन
   (iii) अनंत
   (iv) मृगतृष्णा
5. चिंता सर्ग का समापन होता है ?
   (i) गहन निराशा में
   (ii) नवीन प्रभात के साथ
   (iii) सृष्टि के विनाश के साथ
   (iv) विषादपूर्ण वातावरण में

अभ्यास प्रश्न – 1

1. छंद 41 से 50 की कथावस्तु संक्षेप में लिखिए।

   ....

   ....

2. 'चिंता' सर्ग के द्वितीय भाग में मनु के मानसिक उद्वेलन पर विचार कीजिये।

   ....

   ....

BHDE-144_2nd Proof.indd 172 3/23/2022 12:54:37 PM

3. 'चिंता' सर्ग के इस भाग में मनु मृत्यु को किस रूप में संबोधित कर रहे हैं।

....

....

4. 'चिंता' सर्ग के मूल प्रतिपाद्य पर विचार कीजिये।

....

....

6.3 सारांश

इकाई के प्रथम भाग में हमने प्रारम्भ से 40 तक के छंदों का अध्ययन किया। इस इकाई में हम 41 से अंतिम छंद तक का अध्ययन कर चुके हैं। जल प्रलय की घटना के पश्चात निराश बैठे मनु के आत्मचिंतन को कवि ने प्रकट किया है। मनु विचार कर रहे हैं कि देवजाति के पतन का वास्तविक कारण प्रकृति का रोष नहीं है अपितु देवताओं के अपने क्रिया कलाप ही इसके कारण हैं। निरंतर और अबाध गति से किया गया भोगविलास देवताओं को विवेकहीन कर चुका है। उन्हें उचित–अनुचित के अंतर का भी बोध नहीं रह गया है। इसलिए ही इतनी प्रबल विनाशकारी स्थितियाँ उत्पन्न हुई हैं।

कवि ने जलप्रलय की स्थितियों की भयावहता को विस्तार से वर्णित किया है। प्रारम्भ से ही घनघोर वर्षा होने लगी और उल्कापात होने लगा। चारों ओर गहन अंधकार व्याप्त हो गया। जिन बीथियों में दिन रात संगीत, नृत्य और आमोद–प्रमोद की उल्लास भरी ध्वनियां गूंजा करती थी, वहां घोर हाहाकार व्याप्त हो चुका था। यह प्रलय अनगिनत दिनों तक चलती रही। किसी को दिन और समय का बोध नहीं रहा। इसी बीच मुन को एक पतवार विहीन नौका मिली, जिसके सहारे वे किसी तरह इस जल प्रलय से बाहर निकल सके। मनु अपने सामने विनष्ट देवजाति और संस्कृति के अवशेषों को देख रहे हैं। इस दृश्य से उनके हृदय में गहन बीतराग उत्पन्न होता है। उन्हें जीवन और जगत की निस्सारता का बोध होता है। इसके फलस्वरूप मनु गहन निराशा में चले जाते हैं। इस गहन निराशा के बीच कुहरे के छंटने और उजाले की आहट दिखाई पड़ने के दृश्य से एक आशा के साथ इस सर्ग का समापन होता है। भोगवादी संस्कृति की दिशाहीनता और विवेक शून्यता पर इस सर्ग में गहन चिन्तन किया गया है। 'कामायनी' की दार्शनिक और वैचारिक पृष्ठभूमि के अवबोध की दृष्टि से यह सर्ग अत्यंत महत्वपूर्ण है।

6.4 उपयोगी पुस्तकें

1. कामायनी के अध्ययन की समस्याएँ, डॉ. नगेन्द्र, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली
2. कामायनी का पुनर्पाठ, सं.परमानंद श्रीवास्तव,अभिव्यक्ति प्रकाशन, इलाहाबाद
3. कामायनी एक पुनर्विचार, गजानन माधव मुक्तिबोध, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली

6.5 बोध प्रश्नों / अभ्यासों के उत्तर

1. (ii)
2. (iii)
3. (i)
4. (iv)
5. (ii)

BHDE-144_2nd Proof.indd 173 3/23/2022 12:54:37 PM

इकाई 7 काव्य वाचन एवं विश्लेषण : 'आँसू' का अंश

इकाई की रूपरेखा

7.0 उद्देश्य

7.1 प्रस्तावना

7.2 'आँसू' के चयनित अंश का पाठ और विश्लेषण

7.3 उपयोगी पुस्तकें

7.4 बोध प्रश्नों के उत्तर

7.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आपः

- जयशंकर प्रसाद की 'आँसू' कविता की विस्तृत व्याख्या समझ सकेंगी/सकेंगे;
- आँसू के काव्यांश की व्याख्या की दिशा को जान सकेंगी/सकेंगे;
- इनके माध्यम से छायावाद की विशिष्टताओं को जान सकेंगी/सकेंगे;
- जयशंकर प्रसाद की काव्य–भाषा को समझने का प्रयास कर सकेंगी/सकेंगे और
- जयशंकर प्रसाद की शब्द–योजना और शब्दावली को जान सकेंगी/सकेंगे।

7.1 प्रस्तावना

जयशंकर प्रसाद का जन्म 30 जनवरी, 1889 ई. को बनारस में हुआ था। उनका परिवार बनारस का प्रतिष्ठित व्यवसायी परिवार था। उनके पिता धनाढ्य तो थे ही, साहित्य–संगीत–कला के प्रेमी और गुण–ग्राहक थे। जयशंकर प्रसाद की औपचारिक शिक्षा केवल छठी–सातवीं कक्षा तक बनारस के क्वींस कॉलेज में हुई थी। केवल 48 साल की उम्र में 15 नवम्बर, 1937 ई. को प्रसाद जी की मृत्यु हो गयी थी। उन्होंने अल्पायु के बावजूद विपुल साहित्य रचा था। उनकी रचनाओं की सूची इस प्रकार है –

काव्य–कृतियाँः चित्राधार (1918/1928), कानन–कुसुम (1913/1929), प्रेमपथिक (ब्रजभाषा–1909), प्रेमपथिक (खड़ी बोली हिन्दी–1914), महाराणा का महत्त्व (1914), झरना (1918), आँसू (1925/1933), लहर (1935), कामायनी (1936) :

नाट्य–कृतियाँः उर्वशी (1909), सज्जन (1910), वभ्रुवाहन (1911), कल्याणी परिणय (1912), करुणालय (1912), प्रायश्चित (1914), राज्यश्री (1915), विशाख (1921), अजातशत्रु (1922), जन्मेजय का नाग–यज्ञ (1924), कामना (1927), एक घूँट (1929), स्कन्दगुप्त (1928), चन्द्रगुप्त (1931), ध्रुवस्वामिनी (1933), अग्निमित्र (अपूर्ण)

कहानी–संग्रहः छाया (1912/1918), प्रतिध्वनि (1925), आकाशदीप (1929), आँधी (1931), इन्द्रजाल (1936),

कथा प्रबन्धः ब्रह्मर्षि (1910), पंचायत (1910)

उपन्यासः कंकाल(1930), तितली(1934), इरावती (अपूर्ण, मरणोपरांत 1940 में प्रकाशित'

निबन्धः काव्य और कला तथा अन्य निबन्ध (मरणोपरांत 1939 में प्रकाशित)

जयशंकर प्रसाद छायावाद के चार श्रेष्ठ कवियों में से एक हैं। उनके लेखन–काल का अधिकांश छायावाद (1918– 1936) के दौर से जुड़ा था। निराला, पन्त और महादेवी की तुलना में जयशंकर प्रसाद ने, परिमाण की दृष्टि से, सबसे ज्यादा छायावादी साहित्य

BHDE-144_2nd Proof.indd 174 3/23/2022 12:54:37 PM

की रचना की थी। उन्होंने कविता, नाटक, कहानी, उपन्यास और आलोचना में उच्च कोटि की रचनाएँ दीं।

प्रसाद जी की कविताएँ मूलतः रोमानी हैं। छायावाद की प्रायः सभी विशेषताओं को अपने में समेटे हुए उनकी कविताएँ 'कामायनी' में शैव–दर्शन के आनंदवाद तक भी पहुँचती हैं। 'कामायनी' को न केवल छायावाद में, बल्कि हिन्दी कविता के इतिहास में विशेष प्रतिष्ठा प्राप्त हुई है। प्रसाद ने ऐतिहासिक नाटकों की रचना की, मगर इन नाटकों में अपने वर्तमान को व्यक्त करने की अद्‌भुत क्षमता मौजूद है। उन्होंने 'तितली' और 'कंकाल' नामक उपन्यासों में यथार्थ–चित्रण का ध्यान रखा है। उनके उपन्यास रोमानियत के बजाय यथार्थ की तरफ उन्मुख हैं। प्रसाद की कहानियों में रोमानियत और यथार्थ – दोनों रूप मिलते हैं। उनके आलोचनात्मक आलेखों में प्रायः साहित्य की अवधारणात्मक समझ को सुलझाने का प्रयास दिखाई पड़ता है।

7.2 'आँसू' के चयनित अंश का पाठ और विश्लेषण

एक

आँसू' का अंश

आँसू' का अंश
इस करुणा कलित हृदय में
अब विकल रागिनी बजती;
क्यों हाहाकार स्वरों में
वेदना असीम गरजती?

मानस सागर के तट पर
क्यों लोल लहर की घातें;
कल कल ध्वनि से हैं कहती
कुछ विस्मृत बीती बातें।

आती है शून्य क्षितिज से
क्यों लौट प्रतिध्वनि मेरी;
टकराती बिलखाती सी
पगली सी देती फेरी।

क्यों व्यथित व्योम–गंगा सी
छिटका कर दोनों छोरें;
चेतना तरंगिनि मेरी
लेती है मृदल हिलोरें।

जीवन की जटिल समस्या
हैं बढ़ी जटा–सी कैसी;
उड़ती है धूल हृदय में
किसकी विभूति है ऐसी?

जो घनीभूत पीड़ा थी
मस्तक में स्मृति–सी छायी;

BHDE-144_2nd Proof.indd 175 3/23/2022 12:54:37 PM

दुर्दिन में आँसू बनकर
वह आज बरसने आयी।

मेरे क्रन्दन में बजती
क्या वीणा? जो सुनते हो,
धागों से इन आँसू के
निज करुणा–पट बुनते हो।

रो–रोकर सिसक–सिसक कर
कहता मैं करुण कहानी;
तुम सुमन नोचते सुनते
करते जानी अनजानी।

मैं बल खाता जाता था
मोहित बेसुध बलिहारी;
अन्तर के तार खिंचे थे
तीखी थी तान हमारी।

झंझा झकोर गर्जन था
बिजली थी, नीरदमाला;
पाकर इस शून्य हृदय को
सबने आ डेरा डाला।

घिर जातीं प्रलय घटाएँ
कुटिया पर आकर मेरी;
तम–चूर्ण बरस जाता था
छा जाती अधिक अँधेरी।

बिजली माला पहने फिर
मुसक्याता था, आँगन में;
हाँ, कौन बरसा जाता था
रस बूँद हमारे मन में?

तुम सत्य रहे चिर सुन्दर!
मेरे इस मिथ्या जग के;
थे केवल जीवन–संगी
कल्याण कलित इस मग के।

कितनी निर्जन रजनी में
तारों के दीप जलाये;
स्वर्गंगा की धारा में
उज्ज्वल उपहार चढ़ाये।

गौरव था, नीचे आये
प्रियतम मिलने को मेरे;
मै इठला उठा अकिंचन
देखे ज्यों स्वप्न सबेरे।

BHDE-144_2nd Proof.indd 176 3/23/2022 12:54:37 PM

मधुराका मुसक्याती थी
पहले देखा जब तुमको;
परिचित–से जाने कब के
तुम लगे उसी क्षण हमको।

परिचय राका जलनिधि का
जैसे होता हिमकर से;
ऊपर से किरणें आतीं
मिलती हैं गले लहर से।

मै अपलक इन नयनों से
निरखा करता उस छवि को;
प्रतिभा डाली भर लाता
कर देता दान सुकवि को।

सन्दर्भ और प्रसंग

'आँसू' एक गीति–काव्य है। यह छायावाद की महत्त्वपूर्ण पुस्तकों में से एक है। इसका प्रथम संस्करण 1925 में प्रकाशित हुआ था। मैथिलीशरण गुप्त ने चिरगाँव, झाँसी से इसका प्रकाशन किया था। इसमें कुल 126 छन्द थे। पुस्तक को लोकप्रियता मिली थी। जयशंकर प्रसाद ने जल्दी ही इसका दूसरा संस्करण तैयार किया। इसका प्रकाशन 1933 में प्रयाग से हुआ। दूसरे संस्करण में 190 छन्द थे। इसमें अनेक पाठ–परिवर्तन थे। वर्तमान काल की जगह भूतकालिक क्रियाओं का प्रयोग किया गया था, जैसे –'है' या 'हूँ' की जगह 'था' का प्रयोग। प्रथम संस्करण के दो छंदों को इसमें नहीं रखा गया था और 64 नये छंद जोड़ दिये गये थे।

'आँसू' की पंक्तियों में प्रेम की वेदना को प्रकट किया गया है। व्यक्तिगत वेदना को अनुभूति के विभिन्न रूपों में प्रस्तुत करते हुये यह पुस्तक संसार के दुखों पर मरहम लगाने की कोशिश करती है। विश्व–वेदना के प्रति करुणा उत्पन्न करना इस पुस्तक का उद्देश्य है। यह पुस्तक युवाओं के बीच अधिक प्रसिद्ध हुई। प्रस्तुत अंश में 18 परिच्छेद रखे गये हैं। इस पुस्तक के परिच्छेदों का क्रम बाद में प्रकाशित होनेवाले सभी संस्करणों में एक जैसा नहीं हैं। सम्पादकों–प्रकाशकों ने इसके 190 परिच्छेदों को अलग–अलग क्रम में प्रकाशित किया है। इसलिए इस पुस्तक के बंध मुक्तक काव्य का भी आनंद देते हैं। यह पुस्तक प्रबंध–काव्य तो नहीं है, मगर इसकी पंक्तियों में निहित भावबोध में वेदना का एक क्रम जरूर महसूस किया जा सकता है।

व्याख्या

इस करुणा कलित हृदय में
अब विकल रागिनी बजती;

चेतना तरंगिनि मेरी
लेती है मृदल हिलोरें।

'आँसू' की इन पंक्तियों में जयशंकर प्रसाद अपने विगत प्रेम की पीड़ा को व्यक्त कर रहे हैं। अब उस प्रेम की यादें रह गयी हैं। उन स्मृतियों ने जीवन को प्रभावित कर रखा है। कवि के मन पर जो गहरा असर पड़ा है वह कई रूपों में इन पंक्तियों में लिपिबद्ध हुआ है। कवि कह रहा है कि मेरा हृदय अब करुण भाव से भरा हुआ है।

BHDE-144_2nd Proof.indd 177 3/23/2022 12:54:37 PM

इसमें व्याकुल भावनाओं को व्यक्त करने वाला संगीत बजता रहता है। इस संगीत और गायन में हाहाकार की ध्वनियाँ ज्यादा मात्रा में मिली हुई हैं। मेरी वेदना मानो अपनी संपूर्ण शक्ति से इन राग–रागिनियों में चीखती रहती है। मेरा मन भावनाओं और स्मृतियों के इतने विशाल संग्रहालय की तरह है मानो वह एक समुद्र है। मेरे मन–रूपी समुद्र के तट पर प्रेम की पुरानी यादें चंचल लहरों की तरह टक्कर मारती रहती हैं। इस समुद्र की लहरों में जो कल–कल ध्वनियाँ हैं, उनमें मानो कुछ भूली हुई बातें कह कर मुझे सुनायी जा रही हैं।

मन की दुखद स्थिति में यदि मैं कुछ कहने लगता हूँ तो ऐसा लगता है कि उसे सुनने वाला कोई नहीं है। मेरी आवाज सूने क्षितिज से टकराकर लौट जाती है और गूँज के रूप में मुझे ही सुनायी पड़ने लगती है। फिर ऐसा लगता है कि लौटी हुई मेरी आवाज मेरे आस–पास की चीजों से टकरा–टकराकर बिलख रही है। वह किसी पगली की तरह रो–रोकर एक ही बात कहती हुई जान पड़ती है। मेरे अवचेतन में यह सब तो चल ही रहा है, मेरे चेतन मन की भी स्थिति कुछ अच्छी नहीं है। मेरी अवसादग्रस्त चेतना, नदी की तरह, अपने दोनों किनारों को चौरस कर चुकी है। आकाश में प्रवाहित बतायी जानेवाली गंगा की एक धारा (व्योम गंगा) की तरह मेरी चेतना अपनी सीमाओं का अतिक्रमण कर चुकी है। इस लहराती नदी में करुणा और व्यथा की धारा बह रही है।

जीवन की जटिल समस्या

हैं बढ़ी जटा–सी कैसी;

तुम सुमन नोचते सुनते

करते जानी अनजानी।

प्रसाद लिखते हैं कि मैंने बहुत प्रयास किया लेकिन मुझे सुकून नहीं मिला। मेरे जीवन की जटिलताएँ बढ़ती गयीं, जैसे – जटाएँ बढ़ती जाती हैं और परस्पर उलझती जाती हैं। प्रेम की स्मृतियों ने मेरे मन और व्यवहार को समस्याओं से भर दिया था। मेरा हृदय मानो उड़ती हुई धूल से भरा था। यह धूल मेरे प्रियतम की स्मृतियों से जुड़ी हुई भावनाएँ थीं जो उड़–उड़कर मेरे मन के वातावरण को दुःख के ऐश्वर्य से भर दे रही थीं। मेरी पीड़ा धीरे–धीरे गहरी होती जा रही थी, जैसे बादल घने होते जाते हैं। ये पीड़ाएँ यादों के रूप में मेरे मन में बसी हुई थीं। अब तक इन स्मृतियों को मैंने सँभाल कर अपने नियंत्रण में रखा था। मगर आज उन सब पर मेरा नियंत्रण नहीं रहा। जैसे घनीभूत बादल एक सीमा के बाद आकाश में रुक नहीं पाते और बरस जाते हैं। वैसे ही आज वे यादें आँसू बनकर बरस जाना चाहती हैं। मेरे ये दुर्दिन मानो बरसात के मौसम की तरह हैं।

कवि की प्रेम–वेदना प्रियतम को सम्बोधित करती हुई कविता में प्रकट हो रही है। उसका प्रियतम कुछ इस भाव से सुन रहा है मानो किसी वीणा का मधुर संगीत झंकृत हो रहा हो! वह पूछता है कि मेरे क्रंदन में तुम्हें वीणा का संगीत तो सुनाई पड़ रहा है, मगर उसमें बसी हुई मेरी तकलीफ को क्या तुम सुन पा रहे हो? मेरे आँसुओं को देखकर तुम्हारे मन में करुणा तो उत्पन्न हो रही है, मगर मेरे आँसुओं के धागों से बुनी हुई तुम्हारी करुणा की चादर मेरे लिए तो है नहीं! तुम दुखी तो हो रहे हो, मगर यह नहीं समझ पा रहे हो कि दुःख देनेवाले तुम्हीं हो और पीड़ित मैं हूँ! मैं रो–रोकर और सिसक–सिसककर अपनी दुःख–भरी कहानी सुनाता जाता हूँ और तुम जान–बूझकर अनजान बने सुनते रहते हो! मुझे लगता है कि तुम सब जानते हो! मगर बताना नहीं चाहते हो कि तुम्हें यह सब पता है! मेरी कहानी सुनते समय तुम हाथ में फूल लेकर

उसकी पंखुड़ियों को नोचते भी रहते हो! तुम्हारे ऐसा करने पर मुझे लगता है कि वह 'फूल' कोई फूल नहीं; बल्कि 'सु–मन' है, मेरा सुंदर मन है जिसे तुम बेदर्दी से नोंच रहे हो!

मैं बल खाता जाता था

मोहित बेसुध बलिहारी;

हाँ, कौन बरसा जाता था

रस बूँद हमारे मन में?

मेरी मानसिक दशा अच्छी नहीं थी। मैं प्रेम के भावावेग में जीता था और प्रियतम की उपेक्षा मुझे दुःख से भर देती थी। मैं अपनी बेसुध चेतना के कारण लड़खड़ाता हुआ जीवन गुजार रहा था। प्रियतम के प्रति मोहित, अपने प्रति बेसुध और अपने प्रेम पर बलिहारी होने कारण मैं अपने वश में नहीं था। इन सारी बातों में कोई असंगति उत्पन्न नहीं होती यदि प्रियतम की उपेक्षा नहीं मिलती! मेरे मन–रूपी वीणा के तार अपनी अंतिम सीमा तक खिंच चुके थे, इसलिए मेरी भावनाओं को व्यक्त करनेवाली काव्यात्मक भाषा राग–रागिनी के उच्चतम स्तर पर तान खींच रही थी। उस स्तर पर जाकर गायन करना जैसे कठिन होता है, वैसे ही मेरी वाणी भी तीक्ष्ण होकर थकती जा रही थी! मेरा हृदय धीरे–धीरे निःशब्द हो चला था। उसमें सूनापन बढ़ता जा रहा था। आकाश के सूनेपन में जैसे तेज हवा, गर्जना, बिजली, बादल आदि आकर अपना डेरा डाल लेते हैं, वैसे ही मेरे हृदय के सूनेपन में असफल प्रेम की विकटताएँ आ धमकीं!

मेरा मन आशंकाओं से भरा था। ऐसा लगता था कि प्रलय की घटाएँ चारों तरफ घिरी हैं और मेरे पास अपनी रक्षा के लिए केवल मेरी कुटिया है। एक कुटिया में रहकर प्रलय की घटाओं से अपनी रक्षा कर पाना भला कैसे सम्भव था? फिर मुझे लगता था कि अँधेरा ऐसे बरस रहा था जैसे कोई काला चूर्ण बरस रहा हो! कुल मिलाकर मेरे आस–पास अँधेरा गहरा होता जा रहा था। इसी अँधेरे वातावरण में बिजली चमक उठती थी और मुझे क्षण–भर के लिए लगता था कि बिजली की चमकदार माला पहने कोई मुस्कुरा रहा है। वे शायद मेरे प्रियतम थे!! उसके बाद बरसनेवाली बारिश की बूँदें रस की बूँदों की तरह मेरे मन को आनन्दित कर देती थीं।

तुम सत्य रहे चिर सुन्दर!

मेरे इस मिथ्या जग के;

परिचित–से जाने कब के

तुम लगे उसी क्षण हमको।

तुम मेरे लिए 'चिर सुंदर' थे, सदा–सदा से सुंदर! मानो यही मेरे जीवन का 'सत्य' बन गया था। हालाँकि दार्शनिकों ने इस संसार को 'मिथ्या' बताया है। दार्शनिक चाहे जो कहें, संसार में रहनेवाले लोग दुनिया की चीजों को 'सत्य' मानकर ही व्यवहार रखते हैं। सब जानते हुए भी मैं यही मानता था कि तुम मेरे इस मिथ्या जग के सत्य और सुंदर थे! तुम्हारा साथ मेरे लिए कल्याणकारी था। कल्याण के भाव से निर्मित जीवन के प्रेम–पथ पर तुम मेरे लिए जीवन–साथी की तरह थे! मैंने न जाने कितनी सुनसान रातों में चमकते हुए तारों को, तुम्हारी अभ्यर्थना में, अपने द्वारा जलाए गए दीपक की तरह समझा था! सुना है कि गंगा की एक धारा आकाश–मार्ग से होकर प्रवाहित होती है। मैंने अपनी मन्नतों को पूरी करने के लिए न जाने कितनी बार तारों के इन दीपकों

BHDE-144_2nd Proof.indd 179 3/23/2022 12:54:37 PM

को उस धारा में उज्ज्वल उपहार की तरह प्रवाहित किया है। मैंने बार–बार यह मन्नत मानी है कि शायद मेरे उपहार सही जगह तक पहुँच जाएँ और मेरी मुराद पूरी हो जाए!

मुझे ऐसा भी महसूस हुआ कि मेरे प्रियतम मुझसे मिलने मेरे पास आ रहे हैं। यह मेरे लिए गौरव की बात थी। उनका मेरे करीब आना कुछ इस तरह था जैसे कोई महत्तर किसी लघुतर से मिलने नीचे उतर कर आए। मैं गर्व से भर उठा और मेरे व्यवहार से उत्कंठा–सी छलक गयी, मानो मैं इतरा रहा था। लेकिन यह सब वैसे ही था जैसे सुबह का सपना देखकर कोई खुश हो जाए कि अब तो इसे पूरा होना ही है! यह सपना कुछ अर्थ में पूरा हुआ भी। जब पहली बार मैंने अपने प्रियतम को देखा था तब वह वसंत ऋतु की रात थी। तुम्हें देखकर ऐसा लगा था कि हमारा परिचय बहुत पुराना है। हालाँकि वह हमारी पहली मुलाकात थी। फिर भी क्षण–भर में ही लगा कि न जाने हम कब से परिचित हैं! तुम्हारा व्यक्तित्व अपनापन लिए हुए था!

परिचय राका जलनिधि का

जैसे होता हिमकर से;

____

प्रतिभा डाली भर लाता

कर देता दान सुकवि को।

हमारा–तुम्हारा मिलना प्रकृति के विराट आँगन में होनेवाले मिलन की तरह महसूस होता था। जैसे, रात के अँधेरे में समुद्र और चाँद का परिचय होता है; ऊपर से चाँदनी आती है और समुद्र की लहरों से गले लग जाती है। ऐसा लगता है कि इनका परिचय बहुत पुराना है। तुम से जब मेरी मुलाकात हुई तो मैं एकटक तुम्हारी सुंदरता को देखता रह गया। ऐसा करना केवल चेहरे को देखना–भर नहीं था। मैं तुम्हारी 'छवि' को देख रहा था। 'छवि' का अर्थ हुआ पूरा व्यक्तित्व! मैं उस 'छवि' को निरखता जाता था और अपनी समस्त काव्य–प्रतिभा अपने व्यक्तित्व में स्थित 'कवि' को सौंपता जाता था। जैसे, उपहारों से भरकर 'डाली' सजाते हैं और नजराना पेश करते हैं; उसी तरह मैं अपनी पूरी काव्य–क्षमता से अपने भीतर बैठे 'सुकवि' को समर्थन दे बैठा कि वह इस सुंदर क्षण को कविता में ढाल सके!

कठिन शब्द

करुणा कलित हृदय – करुण भाव से भरे हुए हृदय में; **कलित** – भरा हुआ, युक्त; **विकल रागिनी** – व्याकुल मनःस्थिति, रुदन मानो संगीत की तरह बज रहा हो; **वेदना असीम** – गहरी पीड़ा; **मानस सागर** – मन मानो समुद्र की तरह विशाल है; **लोल लहर** – स्मृतियाँ मानो चंचल लहरें हैं; **शून्य क्षितिज** – मन का सूनापन क्षितिज में आभासित हो रहा है; **बिलखाती** – रुलाती हुई; **व्यथित व्योम–गंगा** – मन में मानो आकाश–गंगा की तरह अमूर्त रूप में दुःख प्रवाहित हो रहा है; **चेतना तरंगिनी** – चेतना मानो तरंगों से भरी नदी की तरह उठती–गिरती और दौड़ती रहती है; **तरंगिनी** – नदी; **विभूति** – वैभव; **घनीभूत पीड़ा**–पीड़ा का संघनित रूप, दुःख का दीर्घकालिक होकर गहरा हो जाना; **दुर्दिन** – बुरा वक्त, बरसात को भी 'दुर्दिन' कहते हैं; **वीणा** – मेरे रुदन में वीणा की ध्वनि थोड़े ही है; **करुणा–पट** – करुणा–रूपी चादर; **करुण कहानी** – दुःख से भरी आत्मकथा; **सुमन नोचते सुनते** – फूल की पंखुड़ियों को नोचते हुए मेरे दुःख को तुम सुनते हो; वह 'सुमन' मानो मेरा सु–मन है जिसे तुमने तार–तार नोंच दिया; **जानी अनजानी** – समझते हुए भी न समझने का अभिनय करना; **बल खाता जाता** – चलते हुए लहराना, नशे में बहकते हुए चलना; **बेसुध बलिहारी**– सुध–बुध खोकर न्योछावर हो जाना; **अन्तर के तार खिंचे** – हृदय का कोना–कोना भावनाओं से उत्तेजित था; **झंझा झकोर** – शोर करती हुई चलनेवाली वायु झकझोर दे रही थी, मानसिक उथल–पुथल; **नीरदमाला** – बादलों की शृंखला, मेघों का जमावड़ा; **शून्य हृदय** – हृदय मानो सूने आकाश की तरह खाली हो गया था; **प्रलय घटाएँ** – जिन बादलों में प्रलय मचा देनेवाली बारिश की क्षमता हो, हृदय में प्रलय–तुल्य बेचैनी हो; **तम–चूर्ण** – अँधेरा मानो चूर्ण की तरह बरस

BHDE-144_2nd Proof.indd 180 3/23/2022 12:54:37 PM

रहा था, अँधेरा क्रमशः घना हो रहा था; **कल्याण कलित** – कल्याण की भावना से युक्त, उदारतापूर्ण; **मग** – रास्ता, जीवन की राहें; **निर्जन रजनी** – सुनसान रात, विरह की रात का अकेलापन; **तारों के दीप** – सितारे मानो आकाश–गंगा की जलधारा में प्रवाहित किये हुये दीपक हैं; **स्वर्गगंगा की धारा** – कवि–कल्पित आकाश–गंगा की जलधारा; **उज्ज्वल उपहार** – सितारे मानो चमकीले उपहार की तरह हैं; **गौरव** – मेरे लिए यह गर्व का विषय था; **अकिंचन** – गरीब, नगण्य, बेचारा प्रेमी; **मधुराका**–मधुर रात; **राका जलनिधि** – रात और समुद्र; **हिमकर**– चाँद; **निरखा** – ध्यान से टकटकी लगाकर देखना; **डाली भर** – नजराना या चढ़ावे के रूप में उपहार देना; **सुकवि** – अपने भीतर के सुन्दर कवि–मन को।

काव्य सौष्ठव / विशेष

- 'आँसू' छायावाद की पहली प्रबंधनुमा पुस्तक है। यह पूरी तरह प्रबंधात्मक पुस्तक तो नहीं है, किन्तु एक भाव–प्रवाह में लिखी गयी इतने बड़े आकार की छायावादी रचना इससे पहले नहीं लिखी गयी थी।
- यह पुस्तक 'सखी' छन्द में रची गयी है। इस छन्द में 14–14 मात्राओं की चार पंक्तियों का उपयोग किया गया है। दूसरी और चौथी पंक्ति में दीर्घ मात्रा के साथ तुकबंदी है।
- व्यक्तिगत वेदना के माध्यम से संसार की वेदना को समझने का प्रयास इस पुस्तक की निर्मिति का आधार है।
- प्रसाद ने प्रियतम के लिए पुलिंग शब्दों का प्रयोग किया है। यह एक प्रकार की शैली है। लेकिन अर्थ की दृष्टि से प्रियतम में स्त्री होने की पहचान बनी हुई है।

सारांश

आँसू' के प्रस्तुत अंश में जयशंकर प्रसाद ने विरह की व्याकुलता को प्रकट किया है। प्रेम की पीड़ा को स्मृतियों के रूप में व्यक्त करनेवाली ये पंक्तियाँ विह्वलता से भरी हुई हैं। कवि उन बीते प्रसंगों को प्रकृति के उपादानों के सहारे सांकेतिक रूप से कहने की कोशिश कर रहा है, जैसे – वह कहता है कि मैंने उसके लिए तारों के दीप जलाए, हमारा मिलना वैसे ही था जैसे समुद्र की लहरों का चाँद की किरणों से मिलन होता है आदि। कवि ने अपने प्रियतम को अपूर्व सौन्दर्य से भरा हुआ गौरवशाली व्यक्तित्व का धनी बताया है। उसके व्यक्तित्व से प्रभावित होकर उसकी कविता की धारा प्रवाहित हो उठी है।

बोध प्रश्न–1

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

i. 'आँसू' का पहला प्रकाशन कब हुआ था?

क) 1936 ख) 1925 ग) 1935 घ) 1918

ii. 'हिमकर' का क्या अर्थ है?

क) हिमालय ख) शिशिर ऋतु ग) चाँद घ) मुकुट

iii. 'मानस सागर' में कौन–सा अलंकार है ?

क) रूपक ख) उपमा ग) उत्प्रेक्षा घ) असंगति

iv. 'आँसू' पुस्तक में किस छन्द का प्रयोग हुआ है ?

क) सखी ख) हरिगीतिका ग) दोहा घ) आल्हा

v. 'आँसू' का दूसरा संशोधित प्रकाशन कब हुआ था?

क) 1936 ख) 1933 ग) 1935 घ) 1918

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

vi. 'क्यों लोल लहर की घातें' में 'लहर' किसका प्रतीक है?

क) प्रेम   ख) स्मृति   ग) मृत्यु   घ) तूफान

vii. 'आँसू' की पंक्तियों में कितनी मात्राओं का उपयोग हुआ है?

क) 16   ख) 14   ग) 18   घ) 12

बोध प्रश्न– 2

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दें

1. 'आँसू' की विषय–वस्तु पर प्रकाश डालें?

....

....

....

2. 'घनीभूत पीड़ा' से कवि का क्या आशय है?

....

....

....

3. कवि अपनी 'करुण कहानी' सुनाता है तब प्रियतम की क्या प्रतिक्रिया होती है?

....

....

....

4. छायावाद के इतिहास में 'आँसू' पुस्तक का क्या महत्त्व है?

....

....

....

7.3 उपयोगी पुस्तकें

1. जयशंकर प्रसाद – नंददुलारे वाजपेयी, लोकभारती प्रकाशन, दरियागंज, नयी दिल्ली
2. प्रसाद का काव्य – प्रेमशंकर, राधाकृष्ण प्रकाशन, नयी दिल्ली
3. जयशंकर प्रसाद ग्रन्थावली – सं.– ओमप्रकाश सिंह, प्रकाशन संस्थान, नयी दिल्ली
4. प्रसाद काव्य–कोश – कमलेश वर्मा, सुचिता वर्मा, द मर्जिनलाइज्ड पब्लिकेशन, इग्नू रोड, दिल्ली
5. छायावादी काव्य–कोश – कमलेश वर्मा, सुचिता वर्मा, द मर्जिनलाइज्ड पब्लिकेशन, इग्नू रोड, दिल्ली

BHDE-144_2nd Proof.indd 182   3/23/2022 12:54:37 PM

7.4 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न–1

i. ख

ii. ग

iii. क

iv. क

v. ख

vi. ख

vii. ख

बोध प्रश्न – 2

1. 'आँसू' का विषय है विरह–वेदना की अभिव्यक्ति, दूसरे विरह काव्यों की तुलना में इसकी विशेषता यह है कि इसमें व्यक्तिगत दुःख को संसार की वेदना में तिरोहित करने का प्रयास किया गया है। अपने दुःख को सम्बोधित करते हुए अंत में यही कहा गया है कि तुम ओस की बूँद बनकर पूरे विश्व के दुःख पर बरस जाओ और शीतलता प्रदान करो।

2. 'घनीभूत पीड़ा' से कवि का आशय है कि उसकी विरह वेदना स्मृतियों के रूप जमा हो रही थी। वह जमती हुई घनी हो गयी, जैसे बादल जमते हुए घने हो जाते हैं।

3. कवि 'रो–रोकर' अपनी 'करुण कहानी' सुना रहा था प्रियतम अपने हाथ में लिए फूल को नोंच–नोंचकर फेंकता जाता था। कवि को ऐसा लग रहा था कि फूल को नहीं, उसके 'सु–मन' (सुंदर–भावुक मन) को नोंचा जा रहा है।

4. 'आँसू' का पहला प्रकाशन 1925 में हुआ था। इसकी रचना दो–तीन वर्ष पहले ही हो गयी थी। 'जयशंकर प्रसाद ग्रन्थावली' की भूमिका से पता चलता है कि मैथिलीशरण गुप्त के पास प्रकाशन के लिए यह पुस्तक साल–दो साल तक रखी रह गयी थी। छायावाद की अन्य रचनाओं को ध्यान में रखते हुए कहा जा सकता है कि यह पुस्तक छायावाद की पहली प्रबंधनुमा पुस्तक है। यह पूरी तरह प्रबंधात्मक पुस्तक तो नहीं है, किन्तु एक भाव–प्रवाह में लिखी गयी इतने बड़े आकार की छायावादी रचना इससे पहले नहीं लिखी गयी थी। यह पुस्तक छायावाद की विश्व–दृष्टि को भी व्यक्त करती है। व्यष्टि से समष्टि की यात्रा को मनुष्य का लक्ष्य बताने की प्रवृत्ति छायावाद की एक पहचान है। इस पहचान को बनाने में 'आँसू' की भूमिका ऐतिहासिक रूप से पहले से शुरू हो गयी थी।

BHDE-144_2nd Proof.indd 183 3/23/2022 12:54:37 PM

इकाई 8 काव्य–वाचन एवं विश्लेषण : 'जुही की कली' और 'संध्या सुंदरी'

इकाई की रूपरेखा

8.0 उद्देश्य

8.1 प्रस्तावना

8.2 चयनित कविताओं का पाठ और विश्लेषण

8.3 उपयोगी पुस्तकें

8.4 बोध प्रश्नों के उत्तर

8.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आपः

- सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' की कविताओं की विस्तृत व्याख्या समझ सकेंगी/सकेंगे;
- निराला की कविताओं की व्याख्या की दिशाओं को जान सकेंगी/सकेंगे;
- इन कविताओं के माध्यम से छायावाद की विशिष्टताओं को समझ सकेंगी/सकेंगे;
- निराला की काव्य–भाषा को समझने का प्रयास कर सकेंगी/सकेंगे; और
- निराला की शब्द–योजना और शब्दावली को जान सकेंगी/सकेंगे;

8.1 प्रस्तावना

सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' का जन्म 1898 या 1899 में हुआ था। उनका परिवार उत्तर प्रदेश के जिला उन्नाव में गढ़ाकोला का रहनेवाला था। मगर उनका जन्म बंगाल के मेदिनीपुर जिले में हुआ था। उनकी औपचारिक शिक्षा हाई स्कूल तक हुई थी। अपनी जीविका के लिए निराला ने महिषादल रजवाड़े (बंगाल) के अंतर्गत छोटी–सी नौकरी की थी। उसके बाद उन्होंने इस तरह की नौकरी छोड़ दी और लेखन–सम्पादन को अपनी जीविका का साधन बनाने का प्रयास किया। वे जीवन भर लेखन–सम्पादन करते रहे और आर्थिक मामले में अभाव झेलते रहे। उन्होंने अर्थोपार्जन को ध्यान में रखकर बड़े पैमाने पर अनुवाद का काम भी किया। 'समन्वय', 'मतवाला', 'सुधा' आदि पत्रिकाओं के लिए उन्होंने काम किया। निराला इन पत्रिकाओं के लिए जी–जान से लगे रहे, मगर इनके सम्पादक होने का गौरव उन्हें प्राप्त नहीं हुआ। निराला का व्यक्तिगत–पारिवारिक जीवन अनेक संकटों से गुजरता रहा। उनकी पत्नी मनोहरा देवी की मृत्यु उस समय हो गयी थी जब निराला मुश्किल से 22 साल के थे और उनकी बेटी सरोज की उम्र सवा साल की थी। सरोज भी 18 साल की होकर मृत्यु को प्राप्त हो गयी थी। व्यक्तिगत क्षति, अत्यधिक संवेदनशील मानसिक बनावट और आर्थिक अभाव से बना हुआ निराला का व्यक्तित्व हिन्दी के दूसरे कवियों से कई अर्थों में भिन्न था। लगभग 62–63 साल की उम्र में 15 अक्टूबर, 1961 ई. को बीमारी की हालत में निराला की मृत्यु हो गयी थी। उनकी रचनाओं की सूची इस प्रकार है –

BHDE-144_2nd Proof.indd 184 3/23/2022 12:54:37 PM

काव्य–कृतियाँ

अनामिका (1923 / 1939), परिमल (1929), गीतिका (1936), तुलसीदास (1934 / 1939), कुकुरमुत्ता (1943 / 1948), अणिमा (1943), बेला (1946), नये पत्ते (1946), अर्चना (1950), आराधना (1953), गीत–गुंज(1954), सान्ध्य काकली (मरणोपरांत 1969 में प्रकाशित)।

कहानी–संग्रह

लिली (1934), सखी / चतुरी चमार (1935 / 1945), सुकुल की बीवी (1941), देवी (कुल 10 में से 01 कहानी नयी – 1948)

उपन्यास

अप्सरा (1931), अलका (1933), प्रभावती (1936), निरुपमा (1936), कुल्ली भाट (1939), बिल्लेसुर बकरिहा (1942), चोटी की पकड़ (1946), काले कारनामे (1950), चमेली (अपूर्ण), इन्दुलेखा(अपूर्ण)।

निबन्ध

प्रबन्ध–प्रतिमा (1940), प्रबन्ध–पद्म (1934), रवीन्द्र–कविता–कानन (1929), रस–अलंकार (1926), चाबुक (1941 या 1942), चयन (1957), संग्रह (1963)।

निराला छायावाद के चार श्रेष्ठ कवियों में से एक हैं। उनके लेखन का एक बड़ा हिस्सा छायावादी दौर (1918–36) का है। मगर उन्होंने छायावाद के बाद के अपने 25 वर्षों में विपुल साहित्य की रचना की। निराला ने अपने लेखन काल में छायावाद, प्रगतिवाद, प्रयोगवाद और कुछ हद तक नयी कविता के दौर को न केवल देखा था, बल्कि अपनी रचनाओं के द्वारा प्रभावित किया था। मौलिकता निराला की पहचान थी। इसलिए वे अपने दौर की विभिन्न काव्य–प्रवृत्तियों को जान–समझ कर अपनी रचनाओं में अपना भी रहे थे और उन्हें अतिक्रमित भी कर रहे थे। उन्होंने प्रत्येक दौर में नये प्रयोगों को महत्त्व दिया। वे निरंतर नवोन्मेष को पसंद करनेवाले रचनाकार थे।

निराला ने भाव, भाषा और छंद की दृष्टि से कई नए प्रयोग किए। मुक्त छंद के लिए निराला के द्वारा किया गया संघर्ष बार–बार याद किया जाता है। 'राम की शक्ति–पूजा' और 'सरोज–स्मृति' जैसी क्लैसिक कविता लिखकर निराला ने 'लम्बी कविता' को एक काव्य–विधा का दर्जा दिलाया। 'तुलसीदास' जैसी संघनित और सामासिक भाषा में रची पुस्तक सुबोध तो नहीं है, मगर इस पुस्तक को हम निराला की श्रेष्ठ काव्य–प्रतिभा के प्रमाण के रूप में रेखांकित कर सकते हैं। छायावादी कवियों में सर्वाधिक गीत निराला ने रचे। उन्होंने प्रत्येक दौर में गीतों की रचना की। छायावादी ढंग के उपन्यासों के वे अकेले रचयिता है। उन्होंने यथार्थवादी उपन्यास भी रचे।

निराला की बौद्धिक क्षमता का प्रमाण उनके निबंधों में खुलकर प्रकट हुआ है। इन निबंधों में निराला की आलोचनात्मक क्षमता को देखकर कभी–कभी आश्चर्य होता है। क्योंकि वे मूलतः कवि थे और जरूरत पड़ने पर ही आलोचना लिखा करते थे। संस्कृत के कवि कुलगुरु कालिदास, उर्दू के शायर गालिब, बांगला के कवि रवीन्द्रनाथ टैगोर, ब्रजभाषा के कवि बिहारी और अपने समय के कवि सुमित्रानंदन पन्त की जैसी आलोचना निराला ने अपने विभिन्न निबंधों में की है उसका स्तर उच्च कोटि का है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने निराला की प्रतिभा के इस पक्ष को पहचानते हुए लिखा था कि 'बहुवस्तुस्पर्शिनी प्रतिभा निराला जी में हैं।

BHDE-144_2nd Proof.indd 185 3/23/2022 12:54:37 PM

8.2 चयनित कविताओं का पाठ और विश्लेषण

एक

जुही की कली

जुही की कली
विजन–वन–वल्लरी पर
सोती थी सुहाग–भरी –स्नेह–स्वप्न–मग्न–
अमल–कोमल–तनु तरुणी – जुही की कली,
दृग बन्द किये, शिथिल, –पत्राङ्क में,
वासन्ती निशा थी;
विरह–विधुर–प्रिया–संग छोड़
किसी दूर देश में था पवन
जिसे कहते हैं मलयानिल।
आयी याद बिछुड़न से मिलन की वह मधुर बात,
आयी याद चाँदनी की धुली हुई आधी रात,
आयी याद कान्ता की कम्पित कमनीय गात,
फिर क्या? पवन
उपवन–सर–सरित गहन–गिरि–कानन
कुञ्ज–लता–पुञ्जों को पार कर
पहुँचा जहाँ उसने की केलि
कली–खिली–साथ।
सोती थी,
जाने कहो कैसे प्रिय–आगमन वह ?
नायक ने चूमे कपोल,
डोल उठी वल्लरी की लड़ी जैसे हिण्डोल।
इस पर भी जागी नहीं,
चूक–क्षमा माँगी नहीं,
निद्रालस वंकिम विशाल नेत्र मूँदे रही–
किंवा मतवाली थी यौवन की मदिरा पिये,
कौन कहे?
निर्दय उस नायक ने
निपट निठुराई की
कि झोंकों की झड़ियों से
सुन्दर सुकुमार देह सारी झकझोर डाली,
मसल दिये गोरे कपोल गोल–
चौंक पड़ी युवती–
चकित चितवन निज चारों ओर फेर,
हेर प्यारे को सेज–पास,
नम्रमुख हँसी–खिली,
खेल रंग, प्यारे संग।

BHDE-144_2nd Proof.indd 186 3/23/2022 12:54:38 PM

'आदर्श', मासिक, कलकत्ता, मार्गशीर्ष, संवतः 1979 वि. (नवम्बर–दिसम्बर, 1922) पहले प्रथम अनामिका में, फिर परिमल में संकलित,

सन्दर्भ और प्रसंग

'जुही की कली' एक प्रसिद्ध कविता है। इस कविता के बारे में कई तरह की मौखिक बातें प्रचलित हैं। कहा जाता है कि महावीर प्रसाद द्विवेदी ने 'सरस्वती' पत्रिका में इसे प्रकाशित करने से मना कर दिया था। इस कविता में निहित शृंगारिकता उन्हें पसंद नहीं आयी थी। यह भी बताया जाता रहा है कि यह कविता 1916 में लिखी गयी थी, मगर 'निराला रचनावली' के अनुसार यह कविता 1922 में प्रकाशित हुई थी। 1920 के पहले निराला द्वारा रचित किसी कविता की जानकारी नहीं मिलती है। मुक्त छंद के प्रयोगों के क्रम में 'जुही की कली' कविता कवित्त छन्द को तोड़कर रची गयी थी। इसके वाचिक पाठ पर बांग्ला उच्चारण का प्रभाव है। हिन्दी उच्चारण के अनुसार इस कविता के पाठ में वैसा ध्वनि सौन्दर्य उत्पन्न नहीं हो पाता जैसा बांग्ला उच्चारण से होता है। रामविलास शर्मा ने इस बात का जिक्र किया है कि निराला इस कविता का पाठ अत्यंत प्रभावशाली तरीके से करते थे। इस कविता के भाव–बोध पर विवाद होने के कारण निराला ने स्वयं इसका अर्थ भी लिखा था।

व्याख्या

'जुही की कली' कविता में नायक–नायिका की प्रेम कहानी की तरह कुछ बातें कहने की कोशिश की गयी है। इस कविता में जुही की कली नायिका है और पवन नायक है। मानवीकरण की सहायता से यह कहानी कही गयी है। यह अपनी शब्दावली में प्रकृति के क्रिया–व्यापार से जुड़ी है, मगर भाव–योजना का सम्बन्ध मनुष्य की काम–चेतना से है। इस कविता में प्रयुक्त रूपक को समझते हुए ही अर्थ के दोनों आयामों को समझा जा सकता है।

कविता इस तरह शुरू होती है कि निर्जन जंगल में जुही की लता थी। उस पर जुही की कली खिली थी। कवि वसंत की एक रात की कहानी बता रहा है कि वह कली पत्तों की गोद में सो रही थी। वह सोती हुई बहुत सुन्दर लग रही थी। यूँ लग रहा था कि वह सौभाग्य से भरी हुई है। वह तरुणी कली प्रेम के सपनों में तल्लीन होकर सो रही थी। उसकी देहयष्टि निर्मल और कोमल थी। वह आँखें बंद करके, निश्चिन्त भाव से, तन की सुध–बुध खोकर सो रही थी।

वह वसंत की रात थी। पवन किसी दूर देश में था। वह अपनी प्रिया जुही की कली से दूर था। विरह में डूबा हुआ पवन, अपनी प्रिया का साथ छूटने से, वैधुर्य भाव से भरा था। छायावादी कविता में 'वियोगी' के अर्थ में 'विधुर' शब्द का प्रयोग हुआ है। हालाँकि सामान्य रूप से 'विधुर' का अर्थ होता है – 'जिसकी पत्नी मर गयी हो'। निराला आगे बताते हैं कि वह पवन अपनी प्रिया से दूर था। इस पवन को 'मलयानिल' भी कहा जाता है। मानो निराला नायक का एक और नाम बता रहे हों! यह 'पवन' मलय पवन है। अपनी प्रेमिका से दूर रहते हुए आज उसे पुरानी बातें याद हो आयीं। वियोग की टीस ने मिलन के पुराने मधुर प्रसंगों की याद दिला दी। उसे मिलन की वह रात याद आ गयी जो चाँदनी से धुलकर चमक रही थी। उसे यह बात भी याद आ गयी कि मिलन के समय जुही की कली किस तरह रोमांचित होकर काँप रही थी।

इन स्मृतियों ने पवन को उत्तेजना से भर दिया। फिर क्या था? वह चल पड़ा अपनी प्रिया से मिलने के लिए। रास्ते में कई बाधाएँ मिलीं, लेकिन वह सबको पार कर गया। उपवन, सरोवर, नदी, दुर्गम पर्वत, घने जंगल, कुंज, लताओं के समूह आदि न जाने कितनी बाधाएँ मिलीं जिन्हें पार करते हुए पवन उस जगह पर पहुँचा जहाँ उसकी प्रेमिका जुही की कली खिली थी। यही वह जगह थी जहाँ उसने पिछले साल भी इसी

BHDE-144_2nd Proof.indd 187 3/23/2022 12:54:38 PM

मौसम में जुही के साथ प्रेम की घड़ियाँ बितायी थीं। यहाँ उसने रोमांचित जुही के साथ 'केलि' (प्रेम–सम्बन्धी क्रिया–कलाप) की थी।

पवन दूर देश से आया था बाधाओं को पार करते हुये। जब पहुँचा तो देखा कि जुही सो रही थी। वह स्नेह के सपनों में मग्न थी। वह पत्तों के बने पलंग पर सो रही थी। वह अमल–कोमल–तनु थी। नींद में खोयी जुही भला कैसे जान पाती कि उसका प्रियतम 'पवन' उसके करीब आ गया है! वह बेखबर सोयी रही। पवन प्रेम की स्मृति से रोमांचित था। उसने बिल्कुल प्रतीक्षा नहीं की, जुही को जगाया भी नहीं और उसके कोमल कपोल पर चुंबन जड़ दिया। इस व्याकुल चुंबन ने जुही की नींद में रोमांचित चेतना का संचार किया। लड़ी की तरह फैली हुई जुही की लता झूले की तरह डोल उठी। लेकिन वह नींद का बहाना करके सोयी रही। जान–बूझकर जागी नहीं। प्रिय के आ जाने के बावजूद न जाग पाने के लिये जुही ने माफी भी नहीं माँगी।

जानबूझकर जुही ने आँखें नहीं खोलीं। उसने अपनी बड़ी–बड़ी तीखी आँखों को ऐसे मूँदे रखा मानो नींद से अलसायी हो! उसकी आँखों में आलस्य ऐसे लग रहा था मानो यौवन की मदिरा पीकर मतवाली हो गयी हो! नींद थी या नशा था? कौन जाने? खैर।।। नायक अपनी व्याकुलता से अनियंत्रित था। उसने थोड़ा बल–प्रयोग कर दिया। वस्तुतः यह बल–प्रयोग नहीं था, यह व्यग्रता थी। निराला ने 'निर्दय' शब्द का प्रयोग इसी तरह के व्यग्र व्यवहार के कारण किया है। नायक ने प्रणयाकुलता के वशीभूत होकर जो एकतरफा उग्र व्यवहार किया उसे निराला 'निपट निठुराई' कह रहे हैं। कविता के इस हिस्से में जो चित्र निराला खींच रहे थे वह निश्चित रूप से 'उद्दाम श्रृंगार' से जुड़ा है। द्विवेदी–युगीन सौन्दर्यबोध से इसकी असहमति का होना स्वाभाविक था। आगे निराला लिखते हैं कि पवन ने 'झोंकों की झड़ियाँ' लगा दीं और जुही की 'सुन्दर सुकुमार देह' को झकझोर दिया। उसके गोरे और गोल कपोल को अपने कपोल से मसल दिया। 'मसल दिये गोर कपोल गोल' के बारे में निराला ने यह स्पष्टीकरण दिया है कि कपोल को कपोल से मसलते हैं! उस दौर में भी और आज स्त्री–विमर्श के दौर में भी इस चित्र पर आपत्ति जतायी गयी है। उस समय 'नैतिकता' का सवाल था और आज सवाल है कि स्त्री को 'सेकेण्ड सेक्स' न समझा जाए! इन आपत्तियों के बीच यह कविता अपने कुछ पक्ष लिए खड़ी है। ये पक्ष हैं – स्त्री–पुरुष का उद्दाम काम–सम्बन्ध, प्रकृति का मानवीकरण, हिन्दी कविता में कल्पना का प्रयोग, स्त्री–पुरुष के रिश्ते को सामाजिक दबावों से मुक्त करने का प्रयास आदि। यह कविता स्त्री के व्यक्तित्व के तिरस्कार की कविता नहीं है। प्रकृति के उपादानों के सहारे सामाजिक बन्धनों को तोड़ते हुए सामान्य स्त्री–पुरुष के अकुंठ जीवन की तस्वीर बनाने का काम यह कविता करती है।

कविता में आगे निराला लिखते हैं कि अब वह युवती अर्थात् जुही चौंक कर आँखें खोल देती है। वह चकित दृष्टि से चारों ओर देखने लगती है, हालाँकि वह सब कुछ जानती है। उसका इस तरह से देखना बहुत सुंदर मालूम पड़ता है। जुही देखती है कि उसका प्यारा पवन उसकी सेज के पास है। पत्तों की सेज पर अलसायी हुई जुही ने इतने करीब से पवन को बहुत दिनों के बाद देखा था। वह अभी के प्रसंगों से शरमायी हुई–सी लग रही थी। उसका झुका हुआ चेहरा खिला हुआ लग रहा था। वह हँस रही थी। अपने प्यारे पवन के साथ प्रेम के रंग में डूबनेवाला जो खेल उसने खेला था, उसका प्रभाव उसके चेहरे पर झलक रहा था।

कठिन शब्द

विजन–वन–वल्लरी – निर्जन जंगल में फैली हुई लता; **सुहाग–भरी** – सौभाग्य से भरी हुई; **स्नेह–स्वप्न–मग्न** – प्रेम के सपनों में लीन; **अमल–कोमल–तनु** – सुंदर–सुकोमल शरीर; **पत्रांक** – पत्तों से बनी हुई गोद; **वासन्ती निशा** – वसंत ऋतु की रात; **विरह–विधुर** – विरही, अपनी प्रिया के बिना; **मलयानिल** – मलय पवन, वसंत ऋतु की वायु जो शीतल और मंद है तथा सुगंध

BHDE-144_2nd Proof.indd 188 3/23/2022 12:54:38 PM

से भरी हुई है; **कान्ता** – प्रेमिका; **कमनीय गात** – सुंदर–सुकुमार देहयष्टि; **उपवन–सर–सरित** – बाग–बगीचा, तालाब और नदी; **गहन–गिरि–कानन** – दुर्गम पर्वत और घने जंगल; **केलि** – प्रेम–व्यापार, रतिकर्म; **वल्लरी** – लता, **हिण्डोल** –झूला; **चूक–क्षमा** – अपनी गलती के लिए माफी माँगना; **निद्रालस** – नींद में अलसाया हुआ; **वंकिम** – सौन्दर्यवर्द्धक तीखापन; **किंवा** – अथवा; **निपट निठुराई** – काम–क्रीड़ा के क्रम में किया गया उग्र व्यवहार; **कपोल** – गाल; **चितवन** – निगाह, दृष्टि; **हेर** – देखकर; **सेज–पास** – अपनी शय्या के नजदीक; **नम्रमुख** – प्रिया का सुंदर–कोमल चेहरा लज्जा–संकोच से झुका हो; **रंग** – प्रणय–क्रीड़ा

काव्य सौष्ठव / विशेष

- 'निराला रचनावली' के अनुसार यह निराला की तीसरी कविता थी।
- मानवीकरण के माध्यम से यह कविता स्त्री–पुरुष के अकुंठ सम्बन्ध को व्यक्त करती है।
- कल्पना का सशक्त प्रयोग इस कविता में दिखायी पड़ता है।
- छायावाद की कई विशेषताएँ इस कविता में मौजूद हैं, जैसे–कल्पना, प्रकृति, स्त्री, मुक्त छन्द, मानवीकरण आदि।

सारांश

'जुही की कली' शीर्षक कविता छायावाद की प्रतिनिधि कविताओं में से एक कही जा सकती है। निराला की यह पहली सशक्त छायावादी कविता है। मानवीकरण और रूपक के प्रयोग के माध्यम से निराला ने जुही और पवन के बीच के प्रेम को चित्रित किया है। यह चित्रण वास्तव में पुरुष–स्त्री के अकुंठ प्रेम से जुड़ा है।

दो

सन्ध्या–सुन्दरी

दिवसावसान का समय
मेघमय आसमान से उतर रही है
वह सन्ध्या–सुन्दरी परी–सी
धीरे धीरे धीरे,
तिमिरांचल में चंचलता का नहीं कहीं आभास,
मधुर–मधुर हैं दोनों उसके अधर –
किंतु गंभीर,–नहीं है उनमें हास–विलास।

हँसता है तो केवल तारा एक
गुँथा हुआ उन घुँघराले काले बालों से,
हृदय–राज्य की रानी का वह करता है अभिषेक।

अलसता की–सी लता
किन्तु कोमलता की वह कली,
सखी नीरवता के कन्धे पर डाले बाँह,
छाँह सी अम्बर–पथ से चली।

नहीं बजती उसके हाथों में कोई वीणा,
नहीं होता कोई अनुराग–राग–आलाप,
नूपुरों में भी रुन–झुन रुन–झुन रुन–झुन नहीं,

BHDE-144_2nd Proof.indd 189 3/23/2022 12:54:38 PM

सिर्फ एक अव्यक्त शब्द–सा "चुप चुप चुप"
है गूँज रहा सब कहीं,–
व्योममण्डल में–जगती–तल में–
सोती शान्त सरोवर पर उस अमल कमलिनी–दल में–
सौन्दर्य–गर्विता–सरिता के अति विस्तृत वक्षःस्थल में–
धीर वीर गम्भीर शिखर पर हिमगिरि–अटल–अचल में–
उत्ताल–तरंगाघात,–प्रलय–घन–गर्जन–जलधि–प्रबल में–
क्षिति में–जल में–नभ में–अनिल–अनल में–
सिर्फ एक अव्यक्त शब्द–सा "चुप चुप चुप"
है गूँज रहा सब कहीं,–
और क्या है? कुछ नहीं।

मदिरा की वह नदी बहाती आती,
थके हुए जीवों को वह सस्नेह,
प्याला वह एक पिलाती।
सुलाती उन्हें अंक पर अपने,
दिखलाती फिर विस्मृति के वह कितने मीठे सपने।

अर्द्धरात्रि की निश्चलता में हो जाती जब लीन,
कवि का बढ़ जाता अनुराग,
विरहाकुल कमनीय कण्ठ से
आप निकल पड़ता तब एक विहाग।

('मतवाला', साप्ताहिक, कलकत्ता, 24 नवम्बर, 1923, परिमल में संकलित)

सन्दर्भ और प्रसंग

'सन्ध्या–सुन्दरी' निराला की एक प्रसिद्ध कविता है। इसका प्रकाशन साप्ताहिक पत्रिका 'मतवाला' में हुआ था। बाद में यह कविता 'परिमल' (1929) में संकलित हुई। इस कविता में निराला ने शाम की सुंदरता का वर्णन किया है। इसकी मुख्य विशेषता यह है कि इसमें शाम को एक 'सुन्दरी' के रूपक में ढाला गया है। प्रकृति में मनुष्य को देखने की प्रवृत्ति – छायावाद की मुख्य विशेषता है। इस लिहाज से 'सन्ध्या–सुन्दरी' छायावाद की एक प्रतिनिधि कविता है।

व्याख्या

दिन समाप्ति की तरफ चल पड़ा है। आसमान बादलों से भरा है। ऐसा लग रहा है कि मेघमय आसमान से संध्या धरती पर धीरे–धीरे उतर रही है! उसका उतरना इतना सुन्दर लग रहा है मानो वह संध्या एक सुन्दरी की तरह हो। आसमान से धरती पर उसका सौन्दर्यपूर्ण तरीके से उतरना ऐसा आभास दे रहा है मानो कोई परी उतर रही हो! उसके आँचल का रंग अँधेरे के रंग से मिलता जुलता है। या यूँ कहें कि शाम का अँधेरा ही उसका आँचल है। सन्ध्या–सुन्दरी के तिमिरांचल में किसी तरह की चंचलता या गति का आभास नहीं हो रहा है। आशय यह है कि शाम के समय हवा बिल्कुल रुकी हुई है और अँधेरा धीरे–धीरे गहरा रहा है। उस सन्ध्या सुन्दरी का आगमन पूरी तरह से निःशब्द है। यह संध्या चूँकि सुन्दरी है इसलिए उसके दोनों होंठ निश्चित रूप से मधुर हैं। किन्तु उनमें गम्भीरता भरी है, उनमें अभी किसी तरह की हँसी का सुंदर विलास प्रकट नहीं हो रहा है।

BHDE-144_2nd Proof.indd 190 3/23/2022 12:54:38 PM

पश्चिम दिशा में निकला हुआ शुक्र ग्रह 'एक तारा' की तरह दिखाई पड़ रहा है और वह हँस रहा है। वह भला प्रसन्न क्यों न हो! ऐसा लग रहा है मानो सन्ध्या–सुन्दरी के, अँधरे की तरह काले, घुँघराले बालों में उसे गुँथे जाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है! वह अपने ह्रदय के राज्य की रानी की तरह सन्ध्या–सुन्दरी का अपनी चमक से अभिषेक कर रहा है।

सन्ध्या–सुन्दरी के सौंदर्य के लिए निराला ने इस कविता में दो उपमाओं का उपयोग किया है – 'अलसता की–सी लता' और 'कोमलता की वह कली'। सन्ध्या–सुन्दरी में परी की तरह का लास्य–भाव है मानो शृंगारोचित मादक आलस्य से वह भरी है। उसकी कोमलता और लचक किसी लता की तरह है। निराला दूसरी उपमा में कहते हैं कि वह ऐसी दिख रही है मानो कोमलता ने कली का रूप धारण कर लिया हो! रूपक के भीतर रूप बनाना – छायावादी काव्य–भाषा की एक विशेषता है। निराला इस रूपक को आगे बढ़ाते हुए कुछ और रूपक गढ़ते हैं। सन्ध्या–सुन्दरी अपनी सखी 'नीरवता' के कंधे पर अपनी बाँह डालकर किसी छाया की तरह आकाश मार्ग से चल पड़ी है। शाम की खामोशी के साथ संध्या का विस्तार हो रहा है।

सन्ध्या–सुन्दरी आसमान से परी की तरह उतर जरूर रही है, मगर उसके हाथों में कोई वीणा नहीं है। वह प्रेम के किसी राग–रागिनी का आलाप भी नहीं ले रही है। उस परी के नूपुरों की भी कोई आवाज नहीं आ रही है। मतलब यह कि वह परी की तरह तो है, मगर उसके हाथों में न तो वीणा है और न ही उसके कंठ से प्रेम का आलाप है। परी होने के बावजूद उस सन्ध्या–सुन्दरी के नूपुरों की कोई आवाज सुनाई नहीं पड़ रही है। पूरे वातावरण में केवल एक शब्द अव्यक्त रूप से गूँज रहा है– 'चुप चुप चुप'। अर्थात् चारों तरह खामोशी छायी है। खामोशी के साथ अनुगूँज की तरह 'चुप चुप चुप' की ध्वनि मानो पूरे आकाश में फैली है। वह धरती पर भी फैली है।

सोये हुए की तरह, शान्त तालाब में खिली हुई कमलिनियों की पंखुड़ियों पर भी मानो वही ध्वनि छायी हुई है। अपनी सुंदरता से गौरवान्वित होकर प्रवाहित होती हुई नदी के चौड़े पाट–जैसी छाती पर भी मानो यह ध्वनि अवयक्त भाव से मौजूद है। अटल रूप में खड़े हिमालय पर्वत की, धीर–वीर की तरह गम्भीर चोटियों पर, भी यही ध्वनि मौजूद है। प्रलय के बादलों–जैसी गर्जना को, अपने भीतर समेटे हुए समुद्र की ऊँची लहरों के आघात में भी यह ध्वनि मौजूद है। धरती, जल, नभ, वायु और आकाशीय बिजली के आवेशित कणों में भी 'चुप चुप चुप' की अव्यक्त ध्वनि मौजूद है। ये शब्द सब तरफ गूँजते हुए मालूम पड़ रहे हैं, परन्तु इस बात में कुछ तथ्य भी है क्या? निराला कहते हैं कि इस बात में कोई तथ्यात्मक सत्य नहीं है –"और क्या है? कुछ नहीं।"

सन्ध्या–सुन्दरी मदिरा की नदी बहाती हुई–सी आती है। उसका आना मानो एक तरह की मादकता को वातावरण में घोल देता है। वह सन्ध्या–सुन्दरी थके हुए प्राणियों को मानो स्नेह का एक प्याला पिला देती है। फिर उन्हें अपनी गोद में लेकर सुलाने लगती है। प्राणियों को सुलाने के क्रम में, चेतना की पीड़ा से मुक्त करने के लिए, विस्मृति के मीठे सपने दिखाती है।

इस तरह धीरे–धीरे संध्या की जगह अब रात लेने लगती है। वह रात की गहराई में लीन होती जाती है। आधी रात के निश्चल वातावरण में मानो सन्ध्या–सुन्दरी एकदम–से खोकर लीन हो जाती है। इन तमाम प्रकरणों से गुजरते हुए कवि के मानसिक जगत में प्रेम का भाव जागृत अवस्था में आ जाता है। आधी रात गुजर जाने पर, विरह से आकुल–व्याकुल उसके सुंदर–कोमल कंठ से, विहाग का राग अपने आप निकल पड़ता है।

BHDE-144_2nd Proof.indd 191 3/23/2022 12:54:38 PM

'सन्ध्या–सुन्दरी' का महत्त्व इस बात में है कि इसमें प्रकृति में मनुष्य को देखने का एक सुंदर प्रयास किया गया है। मनुष्य के कोमल भावों को व्यक्त करने का यह रोमानी तरीका निश्चय की मनोरम है।

कठिन शब्द

सन्ध्या–सुन्दरी – संध्या मानो सुन्दरी की तरह है; **दिवसावसान** – दिवस अवसान, दिन की समाप्ति, शाम; **दिवसावसान का समय** – शाम ढल रही थी; **मेघमय** – बादलों से भरा हुआ (आकाश); **तिमिराञ्चल** – अँधेरा मानो संध्या–सुन्दरी के आँचल की तरह है; **हास–विलास** –हँसी और मुस्कुराहट का सौंदर्य; **हृदय–राज्य की रानी** –संध्या मानो उस सितारे के मन–रूपी साम्राज्य की रानी है; **अभिषेक** –मस्तक का शृंगार; **अलसता की–सी लता** –संध्या मानो मादक आलस्य से बनी कोमलांगिनी लता के समान है; **सखी नीरवता** –शाम में फैली हुई खामोशी मानो संध्या–सुन्दरी की सखी की तरह है; **अम्बर–पथ** –आकाश के रास्ते से; **अनुराग–राग–आलाप** –प्रेम के भाव को व्यक्त करने वाली किसी राग–रागिनी को प्रारंभ करने के लिए किया गया सुर का उतार–चढ़ाव; **नूपुरों** –पैर का एक आभूषण जिसमें घूँघरू लगे होते हैं; **व्योममण्डल** –आकाश का पूरा विस्तार; **जगती–तल**–धरती; **अमर कमलिनी**–दल –सदा खिली रहनेवाली कमलिनियों की पंखुड़ियाँ; **सौन्दर्य–गर्विता–सरिता** –मानो अपनी सुंदरता के गौरव–भाव के कारण सदा इठला कर प्रवाहित होनेवाली नदी; **अति विस्तृत वक्षःस्थल** –नदी का चौड़ा पाट मानो उसका प्रशस्त और आकर्षक वक्षस्थल है; **हिमगिरि–अटल–अचल** –अटल हिमालय पर्वत; **उत्ताल–तरंगाघात**–ऊँची लहरों का उठना–गिरना और चोट करना; **जलधि–प्रबल**– विशाल समुद्र; **प्रलय–घन–गर्जन** –प्रलय के बादलों की तरह की गर्जना में क्षिति –धरती; **अनिल–अनल** –हवा और विद्युत् के आवेश में; **मदिरा** –मादकता; **विस्मृति** – चेतना की पीड़ा से मुक्त हो जाना; **विरहाकुल कमनीय कण्ठ** –विरह से व्याकुल कवि की वाणी; **विहाग** –रात्रि के तीसरे प्रहर में गया जानेवाला वियोग का एक राग।

काव्य सौष्ठव / विशेष

- संध्या को सुन्दरी के रूपक में प्रस्तुत करते हुए यह कविता रची गयी है।
- पूरी कविता मानवीकरण का सुन्दर उदाहरण है।
- छायावाद की प्रकृतिपरकता को व्यक्त करनेवाली यह एक श्रेष्ठ कविता है।
- इसकी पंक्तियों में छंद की एकरूपता नहीं है। मात्रा या वर्ण की दृष्टि से कोई क्रम नहीं अपनाया गया है, मगर मात्रिक छन्द का प्रवाह पूरी कविता में मौजूद है।
- यह कविता प्रकृति–चित्रण मात्र नहीं है। छायावाद की प्रवृत्ति की तरह ही इसमें प्रकृति केवल उद्दीपन की तरह नहीं आयी है, बल्कि वह आलंबन की तरह चित्रित हुई है।

सारांश

निराला ने इस कविता में संध्या का चित्रण किया है। इसके लिए उन्होंने सुन्दरी के रूपक का उपयोग किया है। संध्या के क्रमशः विस्तार को प्रकृति के विभिन्न घटकों में दिखाते हुए सौन्दर्य की सृष्टि करना इस कविता का लक्ष्य है। कविता के अंत में एक भावुक माहौल बनाया गया है और उसे कवि की रचनात्मकता से जोड़ा गया है।

बोध प्रश्न – 1

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

i. 'जुही की कली' कविता का पहला प्रकाशन कब हुआ था?

क) 1916 ख) 1920 ग) 1922 घ) 1924

ii. 'किंवा' शब्द का क्या अर्थ है ?

क) क्यों ख) अथवा ग) क्योंकि घ) कहाँ

iii. 'जुही की कली' कविता किस काव्य–संग्रह में संगृहीत है ?

क) अनामिका ख) अणिमा ग) गीतिका घ) परिमल

iv. 'जुही की कली' कविता में किस ऋतु की चर्चा है?

क) वसंत ख) ग्रीष्म ग) वर्षा घ) शरद

v. 'सन्ध्या–सुन्दरी' शीर्षक कविता किस काव्य–संग्रह में संगृहीत है?

क) अनामिका ख) परिमल ग) गीतिका घ) बेला

vi. 'सन्ध्या–सुन्दरी' किस प्रकार की कविता है?

क) छायावादी ख) प्रगतिवादी ग) प्रयोगवादी घ) रीतिवादी

vii. सन्ध्या–सुन्दरी' में कौन–सा अलंकार है?

क) उपमा ख) रूपक

ग) रूपकातिशयोक्ति घ) उत्प्रेक्षा

viii. 'क्षिति' का क्या अर्थ है?

क) सुबह ख) क्षितिज ग) आकाश घ) धरती

बोध प्रश्न – 2

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दें।

1. 'जुही की कली' कविता का क्या महत्त्व है?

....

....

....

2. सन्ध्या–सुन्दरी आसमान से किस रूप में उतर रही है?

....

....

....

3. 'सन्ध्या–सुन्दरी' कविता का क्या महत्त्व है?

....

....

....

8.3 उपयोगी पुस्तकें

1. निराला – नंददुलारे वाजपेयी, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, नई दिल्ली
2. निराला की साहित्य–साधना – रामविलास शर्मा, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली
3. निराला – कृति से साक्षात्कार – नंद किशोर नवल, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली
4. निराला काव्य–कोश –कमलेश वर्मा, संस्कृति प्रकाशन, भागलपुर
5. छायावादी काव्य–कोश – कमलेश वर्मा, सुचिता वर्मा, द मार्जिनलाइज्ड प्रकाशन, मैदान गढ़ी, दिल्ली

BHDE-144_2nd Proof.indd 193 3/23/2022 12:54:38 PM

8.4 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न –1

i. ग

ii. ख

iii. घ

iv. क

v. ख

vi. क

vii. ख

viii. घ

बोध प्रश्न–2

1. 'जुही की कली' शीर्षक कविता 1922 में प्रकाशित हुई थी। यह छायावाद की प्रतिनिधि कविताओं में से एक कही जा सकती है। निराला की यह पहली सशक्त छायावादी कविता है। मानवीकरण और रूपक के प्रयोग के माध्यम से निराला ने जुही और पवन के बीच के प्रेम को चित्रित किया है। यह चित्रण वास्तव में पुरुष–स्त्री के अकुंठ प्रेम से जुड़ा है। इस तरह की कविता उस दौर में प्रायः नहीं लिखी जा सकी थी। पंत की कविताएँ निश्चित रूप से परिपक्व काव्य–भाषा में सामने आ रही थीं। मगर स्त्री–पुरुष की काम–चेतना की जैसी अभिव्यक्ति निराला इस कविता में कर रहे थे उस स्तर को पंत की कविताएँ नहीं छू पाती थीं।

2. सन्ध्या–सुन्दरी आसमान से परी की तरह उतर रही है। उतरते समय उसका काला आँचल मानो अँधेरा फैला रहा हैं। वह अत्यंत शान्त भाव से उतर रही है। वह अलसायी हुई–सी है। वह अपनी सखी 'नीरवता' के कंधे का सहारा लेकर आकाश–मार्ग से उतर रही है।

3. 'सन्ध्या–सुन्दरी' कविता में छायावादी शैली की सुंदर अभिव्यक्ति हुई है। प्रकृति पर मनुष्य का आरोप करके कविता लिखने की प्रवृत्ति का यह सुंदर उदाहरण है। शाम होना प्रकृति की घटना है। शाम के विवरण में 'सुन्दरी' का आरोप करते हुए कविता का विस्तार किया गया है। शाम का आना किसी सुन्दरी के आगमन की तरह सुंदर और रोमानी बनाया गया है।

BHDE-144_2nd Proof.indd 194 3/23/2022 12:54:38 PM

इकाई 9 काव्य–वाचन एवं विश्लेषण : 'जागो फिर एक बार' और 'बाँधो न नाव इस ठाँव, बंधु'

इकाई की रूपरेखा

9.0 उद्देश्य

9.1 प्रस्तावना

9.2 चयनित कविताओं का पाठ और विश्लेषण

9.3 उपयोगी पुस्तकें

9.4 बोध प्रश्नों के उत्तर

9.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आपः

- सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' की दो कविताओं की विस्तृत व्याख्या कर सकेंगी / सकेंगे;
- निराला की कविताओं की व्याख्या की दिशाओं को जान सकेंगी / सकेंगे;
- इन कविताओं के माध्यम से छायावाद और उसके बाद के दौर की विशिष्टताओं को जान सकेंगी / सकेंगे;
- निराला की काव्य–भाषा को समझने का प्रयास कर सकेंगी / सकेंगे और
- निराला की शब्द–योजना और शब्दावली को समझ सकेंगी / सकेंगे।

9.1 प्रस्तावना

सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' का जन्म 1898 या 1899 में हुआ था। उनका परिवार उत्तर प्रदेश के जिला उन्नाव में गढ़ाकोला का रहनेवाला था। मगर उनका जन्म बंगाल के मेदिनीपुर जिले में हुआ था। उनकी औपचारिक शिक्षा हाई स्कूल तक हुई थी। अपनी जीविका के लिए निराला ने महिषादल रजवाड़े (बंगाल) के अंतर्गत छोटी–सी नौकरी की थी। उसके बाद उन्होंने इस तरह की नौकरी छोड़ दी और लेखन–सम्पादन को अपनी जीविका का साधन बनाने का प्रयास किया। वे जीवन भर लेखन–सम्पादन करते रहे और आर्थिक मामले में अभाव झेलते रहे। उन्होंने अर्थोपार्जन को ध्यान में रखकर बड़े पैमाने पर अनुवाद का काम भी किया। 'समन्वय', 'मतवाला', 'सुधा' आदि पत्रिकाओं के लिए उन्होंने काम किया। निराला इन पत्रिकाओं के लिए जी–जान से लगे रहे, मगर इनके सम्पादक होने का गौरव उन्हें प्राप्त नहीं हुआ। निराला का व्यक्तिगत–पारिवारिक जीवन अनेक संकटों से गुजरता रहा। उनकी पत्नी मनोहरा देवी की मृत्यु उस समय हो गयी थी जब निराला मुश्किल से 22 साल के थे और उनकी बेटी सरोज की उम्र सवा साल की थी। सरोज भी 18 साल की होकर मृत्यु को प्राप्त हो गयी थी। व्यक्तिगत क्षति, अत्यधिक सम्वेदनशील मानसिक बनावट और आर्थिक अभाव से बना हुआ निराला का व्यक्तित्व हिन्दी के दूसरे कवियों से कई अर्थों में भिन्न था। लगभग 62–63 साल की उम्र में 15 अक्टूबर, 1961 ई। को बीमारी की हालत में निराला की मृत्यु हो गयी थी। उनकी रचनाओं की सूची इस प्रकार है –

काव्य–कृतियाँ

अनामिका (1923 / 1939), परिमल (1929), गीतिका (1936), तुलसीदास (1934 / 1939), कुकुरमुत्ता (1943 / 1948), अणिमा (1943), बेला (1946), नये पत्ते (1946), अर्चना (1950), आराधना(1953), गीत–गुंज(1954), सान्ध्य काकली (मरणोपरांत 1969 में प्रकाशित)

BHDE-144_2nd Proof.indd 195 3/23/2022 12:54:38 PM

कहानी–संग्रह

लिली (1934), सखी/चतुरी चमार (1935/1945), सुकुल की बीवी (1941), देवी (कुल 10 में से 01 कहानी नयी – 1948)

उपन्यास

अप्सरा (1931), अलका (1933), प्रभावती (1936), निरुपमा (1936), कुल्ली भाट (1939), बिल्लेसुर बकरिहा (1942), चोटी की पकड़(1946), काले कारनामें (1950), चमेली (अपूर्ण), इन्दुलेखा (अपूर्ण)

निबन्ध

प्रबन्ध–प्रतिमा (1940), प्रबन्ध–पद्म (1934), रवीन्द्र–कविता–कानन (1929), रस–अलंकार (1926), चाबुक (1941 या 1942), चयन (1957), संग्रह (1963)

निराला छायावाद के चार श्रेष्ठ कवियों में से एक हैं। उनके लेखन का एक बड़ा हिस्सा छायावादी दौर (1918–36) का है। मगर उन्होंने छायावाद के बाद के अपने 25 वर्षों में विपुल साहित्य की रचना की। निराला ने अपने लेखन काल में छायावाद, प्रगतिवाद, प्रयोगवाद और कुछ हद तक नयी कविता के दौर को न केवल देखा था, बल्कि अपनी रचनाओं के द्वारा प्रभावित किया था। मौलिकता निराला की पहचान थी। इसलिए वे अपने दौर की विभिन्न काव्य–प्रवृत्तियों को जान–समझ कर अपनी रचनाओं में अपना भी रहे थे और उन्हें अतिक्रमित भी कर रहे थे। उन्होंने प्रत्येक दौर में नये प्रयोगों को महत्त्व दिया। वे निरंतर नवोन्मेष को पसंद करनेवाले रचनाकार थे।

निराला ने भाव, भाषा और छंद की दृष्टि से कई नए प्रयोग किए। मुक्त छंद के लिए निराला के द्वारा किया गया संघर्ष बार–बार याद किया जाता है। 'राम की शक्ति–पूजा' और 'सरोज–स्मृति' जैसी क्लैसिक कविता लिखकर निराला ने 'लम्बी कविता' को एक काव्य–विधा का दर्जा दिलाया। 'तुलसीदास' जैसी संघनित और सामासिक भाषा में रची पुस्तक सुबोध तो नहीं है, मगर इस पुस्तक को हम निराला की श्रेष्ठ काव्य–प्रतिभा के प्रमाण के रूप में रेखांकित कर सकते हैं। छायावादी कवियों में सर्वाधिक गीत निराला ने रचे। उन्होंने प्रत्येक दौर में गीतों की रचना की। छायावादी ढंग के उपन्यासों के वे अकेले रचयिता है। उन्होंने यथार्थवादी उपन्यास भी रचे।

निराला की बौद्धिक क्षमता का प्रमाण उनके निबंधों में खुलकर प्रकट हुआ है। इन निबंधों में निराला की आलोचनात्मक क्षमता को देखकर कभी–कभी आश्चर्य होता है, क्योंकि वे मूलतः कवि थे और जरूरत पड़ने पर ही आलोचना लिखा करते थे। संस्कृत के कवि कुलगुरु कालिदास, उर्दू के शायर गालिब, बांगला के कवि रवीन्द्रनाथ टैगोर, ब्रजभाषा के कवि बिहारी और अपने समय के कवि सुमित्रानंदन पन्त की जैसी आलोचना निराला ने अपने विभिन्न निबंधों में की है उसका स्तर उच्च कोटि का है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने निराला की प्रतिभा के इस पक्ष को पहचानते हुए लिखा था कि 'बहुवस्तुस्पर्शिनी प्रतिभा निरालाजी में है'।

9.2 चयनित कविताओं का पाठ और विश्लेषण

एक

जागो फिर एक बार !

जागो फिर एक बार !

समर में अमर कर प्राण,
गान गाये महासिन्धु–से,

सिन्धु–नद–तीरवासी!–
सैंधव तुरंगों पर
चतुरंग–चमू–संगय
"सवा–सवा लाख पर
एक को चढ़ाऊँगा,
गोविन्द सिंह निज
नाम जब कहाऊँगा।"
किसने सुनाया यह
वीर–जन–मोहन अति
दुर्जय संग्राम–राग,
फाग का खेला रण
बारहों महीनों में ?
शेरों की माँद में,
आया है आज स्यार
जागो फिर एक बार!

सत् श्री अकाल,
भाल–अनल धक–धक कर जला,
भस्म हो गया था काल–
तीनों गुणकृताप त्रय,
अभय हो गए थे तुम,
मृत्युञ्जय व्योमकेश के समान,
अमृत–सन्तान ! तीव्र
भेदकर सप्तावरण–मरण–लोक,
शोकहारी! पहुँचे थे वहाँ
जहाँ आसन है सहस्रार–
जागो फिर एक बार !

सिंही की गोद से
छीनता रे शिशु कौन?
मौन भी क्या रहती वह
रहते प्राण? रे अजान!
एक मेषमाता ही
रहती है निर्निमेष–
दुर्बल वह–
छिनती सन्तान जब
जन्म पर अपने अभिशप्त
तप्त आँसू बहाती है; –
किंतु क्या,
योग्य जन जीता है,
पश्चिम की उक्ति नहीं–

BHDE-144_2nd Proof.indd 197 3/23/2022 12:54:38 PM

गीता है, गीता है–
स्मरण करो बार–बार–
जागो फिर एक बार !

पशु नहीं, वीर तुम,
समर–शूर क्रूर नहीं,
काल–चक्र में हो दबे
आज तुम राजकुँवर! – समर सरताज!
पर, क्या है,
सब माया है– माया है,
मुक्त हो सदा ही तुम,
बाधा–विहीन–बन्ध छन्द ज्यों,
डूबे आनन्द में सच्चिदानन्द रूप।
महामन्त्र ऋषियों का
अणुओं–परमाणुओं में फूँका हुआ–
"तुम हो महान, तुम सदा हो महान,
है नश्वर यह दीन भाव,
कायरता, कामपरता,
ब्रह्म हो तुम,
पद–रज–भर भी है नहीं
पूरा यह विश्व–भार–"
जागो फिर एक बार!

('मतवाला', साप्ताहिक, कलकत्ता, 27 मार्च, 1926, परिमल में संकलित)

सन्दर्भ और प्रसंग

'जागो फिर एक बार' शीर्षक से निराला ने दो कविताएँ लिखी थीं। 'निराला रचनावली' के अनुसार दोनों कविताएँ 'मतवाला' में 1926 में छपी थीं। पहली कविता 16 जनवरी को और दूसरी कविता 27 मार्च को। प्रस्तुत कविता दूसरी कविता है।

'जागो फिर एक बार' मूलतः पुनर्जागरण और पुनरुत्थान के भाव को समेटे हुए है। स्वतंत्रता आन्दोलन के दौर में यह भाव हिन्दी की अनेक कविताओं में व्यक्त हुआ है कि हम पहले महान् थे, किन्तु आज पराधीन हैं। यदि हम प्रयास करें तो पराधीनता को समाप्त कर सकते हैं और एक बार फिर से अपने महान् होने के प्रमाण दे सकते हैं। निराला ने सिक्खों की वीरता, धार्मिक मान्यताओं में मृत्यु को जीत लेने की अवधारणा, सिंह की तरह भारतीयों की वीरता और आध्यात्मिक स्तर पर मुक्ति की परिकल्पना आदि को आधार बनाकर पुनर्जागरण और पुनरुत्थान के भाव को इस कविता में व्यक्त किया है।

छायावादी कविता मुक्ति की कामना करती रही है। मुक्ति के प्रयास में वह इतिहास, धर्म, अध्यात्म, संस्कृति, काव्य आदि से शब्दावली लेती रही है। इन बातों को इतिहास के तथ्यों के रूप में व्याख्यायित करना उचित नहीं है। जैसे – इस कविता में सिक्खों के संघर्ष की चर्चा है। उसमें गुरु गोविन्द सिंह का भी नाम आया है। हम सब जानते हैं कि सिक्खों की ये लड़ाइयाँ मुगलों से हुई थीं। मगर निराला इस बात को सिक्ख–मुस्लिम की लड़ाई के रूप में चित्रित नहीं कर रहे हैं, बल्कि मुक्ति की लड़ाई के रूप में याद

कर रहे हैं। वे कहना चाहते हैं कि हमें पराधीन बनानेवाली ताकत चाहे कितनी ही बड़ी क्यों न हो, हमें उससे मुकाबला करना चाहिए।

व्याख्या

यह कविता चार चरणों में पूरी हुई है। कविता की शुरुआत होती है पंजाबवासियों की वीरता को याद करते हुए। निराला लिखते हैं कि सिंधु नदी के तट पर रहनेवाले पंजाब के लोगों ने युद्ध में लड़ते हुए अपने प्राणों को अमर कर दिया था। उन्होंने युद्ध में महासागर की तरह गर्जना की थी। सिंध क्षेत्र के उम्दा घोड़ों और चतुरंगिणी सेना के साथ पूरी तैयारी से पंजाबवासियों ने लड़ाई लड़ी थी। सिक्खों के दसवें गुरु गोविन्द सिंह ने खालसा पंथ के योद्धाओं में उत्साह भरते हुये कहा था कि एक–एक खालसा सवा–सवा लाख दुश्मन के बराबर है। मैं अपने एक–एक लड़ाका को इस योग्य बनाने के बाद ही अपने को 'गुरु' कहे जाने के लायक मानूँगा। निराला कहते हैं कि वीरता से भरी हुई यह गर्जना एक भारतवासी ने ही की थी। इस गर्जना में दुर्जय संग्राम–राग भरा हुआ था। मानो यह गर्जना एक युद्ध–गीत की तरह थी जिसमें हारने का भाव था ही नहीं। इन भारतवासियों ने युद्ध में खून की होली का खेल खेला था। वे युद्ध को भी क्रीड़ा–भाव से अंजाम दे रहे थे। होली तो साल भर में एक बार खेलते हैं, किन्तु इन लोगों ने वीरता की होली बारहों महीने खेली थी। वे निरंतर बहादुरी से तत्पर रहे। भारत के ये लोग शेर की मानिंद थे। इन शेरों की माँद में आज चुनौती देने कुछ सियार आ गये हैं। अर्थात् वीर भारतवासियों को चुनौती देते हुए अँग्रेज आ धमके हैं। निराला भारत के लोगों को वीरता की पुरानी कहानी सुनाकर प्रेरित करते हुये कहते हैं कि तुम एक बार फिर वीरता के उसी भाव के साथ जाग जाओ! यदि तुम जाग गये तो पराधीनता दूर होते देर नहीं लगेगी!

सत् श्री अकाल,

भाल–अनल धक–धक कर जला,

कविता के दूसरे चरण में निराला सिक्ख धर्म, शैव दर्शन और योग मार्ग से शब्दावली लेते हुए पुनः जागरण का सन्देश देते हैं। सिक्खों ने ईश्वर के नाम–स्मरण का एक नारा दिया – 'सत् श्री अकाल'। इस आध्यात्मिक नारे ने उन्हें उत्साह से भर दिया। संघर्ष की प्रेरणा से वे भर उठे। उनके तेजस्वी ललाट ऐसे चमके जैसे आग चमकती है। उस आग में मानो मृत्यु का भय जल कर समाप्त हो गया था। तीनों गुण और तीनों ताप की सीमा भी समाप्त हो गयी थी। तुम वैसे ही भयमुक्त हो गये थे मानो तुम स्वयं भगवान् शंकर हो गये हो! शंकर को 'मृत्युंजय' भी कहा जाता है – मृत्यु को जीत लेनेवाला। उनकी विराटता को प्रकट करने के उद्देश्य से उन्हें 'व्योमकेश' भी कहा जाता है – जिसकी केशराशि आकाश की तरह फैली हो! निराला कहना चाहते हैं कि हे भारतवासियो! तुम मृत्यु–भय को जीतने वाले अपने पूर्वजों और प्रेरक प्रतीकों को याद करो! तुम अमर वीरों की अमृत–सन्तान हो! इस बात को बार–बार याद रखने की और याद दिलाते रहने की जरूरत है। तुम उस योग–परंपरा को भी याद करो जिसमें योगी कुण्डलिनी–जागरण की साधना करता है। वह अपने शरीर में स्थित सात चक्रों (मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपूर, अनाहत, विशुद्ध, आज्ञा और सहस्रार) को पार करने की साधना करता है। उसकी कुण्डलिनी एक–एक कर सात चक्रों को पार करती है और वह उस जगह पहुँच जाती है जहाँ हजार पंखुड़ियों वाला 'सहस्रार' कमल–जैसा आसन है। इस लक्ष्य को प्राप्त करके योगी सिद्ध हो जाता है, वह 'शोक' को हर लेने की क्षमता प्राप्त कर लेता है। निराला इन तमाम बातों को याद दिलाते हुए कहना चाहते हैं कि हे भारतवासियो! तुम्हारी पृष्ठभूमि अमरता की है। तुम्हारे पूर्वज यशःकाया में विश्वास करनेवाले रहे हैं। उन सब को याद करते हुए तुम एक बार फिर से उत्साह से भर उठो!

BHDE-144_2nd Proof.indd 199 3/23/2022 12:54:38 PM

सिंही की गोद से

छीनता रे शिशु कौन?

कविता के तीसरे चरण में निराला आत्मरक्षा के लिए सजगता को जरूरी मानते हुए शेरनी और मेषमाता के उदाहरण देते हैं। वे कहते हैं कि शेरनी की गोद से उसके बच्चे को कोई छीनने नहीं जाता। यदि किसी ने कोशिश की तो वह तब तक प्रतिरोध करती है जब तक उसमें जान बाकी है। निराला बहुत प्यार से उन लोगों को 'अजान' (अज्ञानी) कहते हैं जो संघर्ष से भागना चाहते हैं। ये अपने लोग ही हैं। इन्हें प्रेरित करने की जरूरत है। निराला अब मादा भेड़ का उदाहरण देते हैं और कहते हैं कि वह 'मेषमाता' टुकुर–टुकुर देखती रह जाती है, जब उसकी संतान को उससे छीन लिया जाता है। वह बेचारी अपनी 'दुर्बलता' को स्वीकार कर चुकी होती है। संतान के छीन लिए जाने का वह दुःख मनाती है और अपने जीवन को ऐसी घटना के लिए अभिशप्त मान लेती है। मगर ऐसा मान लेने से क्या जीवन बदल जाएगा? नहीं। सच्चाई तो यही है कि इस संसार में वही रह पाता है जिसमें योग्यता होती है। यह बात भारतीय परंपरा में हमेशा से सिखायी गयी है। गीता में कृष्ण ने अर्जुन को इसी आशय का उपदेश दिया था कि अपने कर्त्तव्य का पालन करो और अपने अधिकारों के लिए चाहे जिसके खिलाफ संघर्ष करना पड़े, करो! यह अवधारणा पश्चिमी देशों से बाद में भले ही वैज्ञानिक रूप धारण करके आयी है। इसे 'सरवाइल ऑफ द फिटेस्ट' कहा गया है। यह बात अँग्रेजी कहावत बन गयी है। डार्विन ने विकासवाद का एक पक्ष रखा था कि वही बचेगा जिसमें बचे रहने की क्षमता होगी। निराला इसी 'सरवाइल ऑफ द फिटेस्ट' के लिए वाक्य गढ़ते हैं – 'योग्य जन जीता है'। इन सब बातों की याद दिलाते हुये वे कहते हैं कि पराधीनता की इन विषम परिस्थितियों में तुम एक बार फिर से जाग जाओ!

पशु नहीं, वीर तुम,

समर–शूर क्रूर नहीं

कविता के अंतिम चरण में निराला अध्यात्म और काव्य से शब्दावली लेकर 'मुक्त' होने की प्रेरणा दे रहे हैं। शेरनी का उदाहरण देने के बाद निराला इस बात की भी याद दिलाते हैं कि हे भारतवासियों! तुम वीर रहे हो! पशुबल से बचते हुये तुमने युद्ध में वीरता दिखायी है। तुम क्रूरता से हमेशा बचते रहे हो! आज की दुःअवस्था के बारे में यही कहा जा सकता है कि तुम समय के चक्र में फँस गये हो, जिसे दुर्भाग्य कह सकते हैं। अन्यथा तुम तो राजकुमार की तरह वीर और अधिकार–सम्पन्न रहे हो! युद्ध में वैसे ही प्रमुख रहे हो जैसे सिर पर सुशोभित मुकुट महत्त्वपूर्ण होता है। आज की विपरीत स्थितियों के बारे में क्या कहा जाये? इन सारी बाधाओं को माया की तरह मान लो। माया का काम ही है ईश्वर–प्राप्ति के मार्ग में भ्रम और मिथ्या फैलाना। सच तो यही है कि तुम सदा–सदा से 'मुक्त' आत्मा की तरह बंधन–विहीन रहे हो। निराला 'मुक्ति' के प्रश्न को कविता से जोड़ते हुये कहते हैं कि काव्य–पद्धति और छंद से 'मुक्त' होकर ही कविता विकसित हो सकती है। पुनः आध्यात्मिक पक्ष की तरफ मुड़ते हुये वे कहते हैं कि 'मुक्त' स्वभाव का मनुष्य सत्, चित् और आनन्द में डूबकर ईश्वर–तुल्य हो जाता है। तुम्हारे पूर्वजों ने 'मुक्ति' की साधना करके ईश्वरत्व को प्राप्त करने का प्रयास हमेशा किया था। याद करो उन महामन्त्रों को, जिन्हें ऋषियों ने यहाँ के अणुओं–परमाणुओं में प्रसारित किया था कि तुम महान् हो, तुम सदा–सदा से महान् हो! अपनी दुर्बल मानसिक स्थितियों को नश्वर मानकर चलो! तात्कालिक भय और मोहग्रस्तता को भी नश्वर मानकर अपने रास्ते पर चलते रहो! याद रखो कि तुम ब्रह्म का अंश हो! उस उद्घोष को याद रखो कि 'अहं ब्रह्मास्मि!' गौर करोगे तो पाओगे कि पूरे विश्व का भार उतना भी नहीं है जितना वजन पैर में लगी धूल का होता है। पूरे विश्व की जिम्मेदारी उठाने की क्षमता तुम्हारे भीतर है। बस तुम्हें इतना ही करना है कि तुम जागरण के भाव से भर उठो!

BHDE-144_2nd Proof.indd 200 3/23/2022 12:54:38 PM

कठिन शब्द

महासिन्धु–से – महासागर या महान सिन्धु नदी की (गर्जना) की तरह; **सन्धु–नद–तीरवासी** – सिंधु नदी के तट पर रहने वाले पंजाबवासी; **सैन्धव तुरंग** – सिन्धु क्षेत्र के घोड़े; **चतुरंग चमू** –चतुरंगी सेना – पैदल, घुड़सवार, रथ–सेना, गज–सेना; **वीर–जन–मोहन** – वीरों को अच्छा लगने वाला, वीरों को भाने वाला; **दुर्जय** – जिसे जीतना कठिन हो; **संग्राम–राग** – युद्ध का राग, युद्ध–गान; **फाग** – होली; सत् श्री अकाल – ईश्वर का नाम (सिख धर्म); **भाल–अनल** – तेजस्वी ललाट, तप के तेज से चमकता ललाट; **काल** – मृत्यु, समय का शासन; **तीनों गुण** – तीन गुण – सत, रज, तम; **ताप त्रय** – तीन ताप – दैहिक, दैविक, भौतिक; **मृत्युंजय व्योमकेश** – मृत्यु को जीतने वाले भगवान् शंकर (व्योम–रूपी केश); **अमृत–सन्तान** – अमर संतान, यशस्वी संतान जिनकी यशरूकाया हमेशा जीवित रहे; **सप्तावरण–मरण–लोक** – मरण–लोक के सातों आवरण (सात चक्र) पारकर योगी आठवें सहस्रार चक्र में महाकुंडलिनी को प्रवेश कराता है और मृत्यु के भय से मुक्त होकर अमरत्व को प्राप्त करता है; **शोकहारी** – शोक मिटाने वाले; आसन है सहस्रार – सहस्र दल वाले कमल के आकार का आठवाँ सहस्रार चक्र जहाँ महाकुंडलिनी पहुँचती है तो साधक को ब्रह्म का साक्षात्कार होता है; **अजान** – अज्ञानी; मेषमाता – भेड़ की माता; **निर्निमेष** – अपलक, एकटक; **अभिशप्त** – अभिशाप से ग्रस्त, दुर्भाग्यशाली; **तप्त आँसू** – अफसोस के गर्म आँसू; **योग्य जन जीता है** –'सरवाइल ऑफ द फिटेस्ट'– अँग्रेजी कहावत, डार्विन के विकासवाद का एक पक्ष – वही बचेगा जिसमें बचे रहने की क्षमता होगी; **समर–शूर** – युद्धवीर, जो युद्ध के नियमों का पालन करते हुए लड़ता हो; **काल–चक्र** – समय की गति, समय का फेर; **राजकुँवर** – राजपुत्र; **समर–सरताज** – युद्ध के महान् योद्धा; **माया** – जिसके मूल में भ्रम और मिथ्या–जैसी बातें हों; **मुक्त** – स्वतंत्र, जो हर तरह के बन्धनों को तोड़ चुका हो; **बन्ध** – कविता की एक कड़ी, परिच्छेद; **छन्द** – कविता की पंक्तियों को मापने की पद्धति; **सच्चिदानन्द रूप** – ईश्वर सत, चित् एवं आनन्द से पूर्ण है; **दीन भाव** – हीनता का बोध; **कामपरता** –आसक्ति; **पद–रज** – पगधूलि (के वज़न के) बराबर।

काव्य सौष्ठव / विशेष

- 'जागो फिर एक बार' मूलतः पुनर्जागरण और पुनरुत्थान के भाव को समेटे हुए है।
- इस कविता में स्वाधीनता आन्दोलन को मुक्ति की लड़ाई के रूप में देखा गया है।
- मुक्ति के प्रयास में यह कविता इतिहास, धर्म, अध्यात्म, संस्कृति, काव्य आदि से शब्दावली लेकर अपनी बात कह रही है।
- भारतीय परंपरा को संघर्ष की परंपरा के रूप में देखने का प्रयास किया गया है।
- 'परिमल' की भूमिका में निराला ने अपनी इस कोटि की कविताओं की छंद–योजना के बारे में लिखा है, "मुक्त छन्द तो वह है, जो छन्द की भूमि में रहकर भी मुक्त है। इस पुस्तक के तीसरे खण्ड में जितनी कविताएँ हैं, सब इसी प्रकार की हैं। उनमें नियम कोई नहीं। केवल प्रवाह कवित्त–छन्द का–सा जान पड़ता है।"

सारांश

'जागो फिर एक बार' शीर्षक प्रस्तुत कविता स्वतंत्रता आन्दोलन की ऊर्जा से प्रेरित होकर लिखी गयी एक छायावादी कविता है। इसकी काव्य–भाषा और विवरण में राजनीतिक भाषा का प्रयोग तो नहीं हुआ है, मगर इसकी भाव–योजना के भीतर स्वतंत्रता आन्दोलन की सक्रियता बनी हुई है। छायावादी कवियों ने अंग्रेजों का नाम लिए बगैर विदेशी सत्ता के खिलाफ प्रतिरोध की कविताएँ अपने ढंग से लिखी थीं।

दो

बाँधो न नाव इस ठाँव, बन्धु!

बाँधो न नाव इस ठाँव, बन्धु!

पूछेगा सारा गाँव, बन्धु!

यह घाट वही जिस पर हँसकर,
वह कभी नहाती थी धँसकर,
आँखें रह जाती थीं फँसकर,
कँपते थे दोनों पाँव, बन्धु!

वह हँसी बहुत कुछ कहती थी,
फिर भी अपने में रहती थी,
सबकी सुनती थी, सहती थी,
देती थी सबके दाँव, बन्धु!

(रचनाकाल : 22 जनवरी, 1950, 'देशदूत', साप्ताहिक, प्रयाग, 11 फरवरी, 1951, में प्रकाशितय अर्चना में संकलित)

सन्दर्भ और प्रसंग

'बाँधो न नाव इस ठाँव, बन्धु!' एक गीत है। 'अर्चना' गीतों का संग्रह है। निराला ने इसकी भूमिका 'स्वयोक्ति' में लिखा है, "प्रचलित कुल तालों से समन्वित 'अर्चना' नामक आधुनिक गीतों का संग्रह"। ताल के अनुसार ये गीत लिखे गये हैं। प्रस्तुत गीत में एक लड़की की चर्चा है। वह नदी के एक घाट पर नहाती थी। वह उन्मुक्त भाव से नहाती और हँसती थी। उसे देखने वाले देखते रह जाते थे। उस लड़की के बारे में कही गयी सभी बातों का सम्बन्ध भूतकाल से है। मगर कहने वाला नाव वाले को सावधान कर रहा है कि इस घाट पर नाव मत बाँधो!

व्याख्या

यह गीत शुरू होता है एक सलाह से। नाव चलाने वाले को सलाह दी जा रही है कि इस जगह पर अपनी नाव मत बाँधो! सलाह देनेवाला व्यक्ति एक खतरे की तरफ इशारा कर रहा है कि यदि तुमने इस जगह पर अपनी नाव बाँध दी तो गाँव के लोग तुमसे कई तरह के सवाल पूछेंगे!

अगली पंक्तियों में सलाह देनेवाला व्यक्ति कारण बता रहा है कि इस घाट पर नाव क्यों नहीं बाँधना चाहिए। वह एक लड़की का जिक्र करता है जो इसी घाट पर नहाया करती थी। यह बात स्पष्ट है कि अब वह लड़की नहीं है – 'वह कभी नहाती थी धँसकर'। एक समय था जब वह लड़की यहाँ नहाया करती थी। गीत में यह बात साफ तौर पर नहीं बतायी गयी है कि अब वह लड़की कहाँ है? वह मर चुकी है या किसी दुर्घटना का शिकार हो गयी है या कहीं चली गयी है – इस गीत से कुछ पता नहीं चलता! केवल यही बताया गया है कि यह वही घाट है जहाँ वह लड़की नहाया करती थी।

आगे उस लड़की के नहाने के कुछ विवरण हैं। सलाह देनेवाला बताता है कि बन्धु! यह वही घाट है जहाँ वह हँस–हँसकर नहाती थी। नहाते हुए वह पानी के काफी भीतर तक चली जाती थी। 'धँसकर' का अर्थ हुआ गहरे पानी तक में उतरना। उसे नहाते हुए बहुत लोग देखते थे। देखनेवालों की आँखें उसे देखती रह जाती थीं। उनकी आँखें उन दृश्यों में मानो 'फँसकर' रह जाती थीं। इतनी बेबाकी से उसे नहाते हुए देखकर देखनेवालों के दोनों पाँव कभी–कभी काँप उठते थे।

नहाती हुई उस लड़की की हँसी में कई विशेषताएँ थीं। उसकी हँसी मानो बहुत कुछ कहती थी। देखनेवालों को लगता था कि वह हँस–हँसकर शायद 'यह' कह रही है या 'वह' कह रही है। अपने–अपने ढंग से लोग अर्थ लगाते थे। पर एक बात थी कि तमाम खुलेपन के बावजूद वह आत्म–नियंत्रण बनाए रखती थी। उसके व्यक्तित्व से ऐसा प्रकट नहीं होता था कि वह यह सब किसी स्वार्थ की पूर्ति के लिए कर रही है।

एक लड़की का नदी के किनारे इस तरह से नहाना कोई साधारण घटना नहीं थी। ग्रामीण इलाके में लड़कियाँ नदियों में नहाने जाया करती थीं, मगर समूह में या किसी पर्व–त्यौहार पर या अन्य किसी अवसर पर। यह लड़की तो अपने ढंग के कारण बहुतों के ध्यान का केंद्र बन गयी थी। जाहिर–सी बात है कि देखनेवालों में ज्यादातर पुरुष थे। वे न केवल उसे घूर–घूरकर देखते थे, बल्कि उस पर टीका–टिप्पणी भी करते थे। वह लड़की इन सब बातों को सुनती थी और बर्दाश्त करती थी। वह ऐसा जाहिर करती थी, मानो उसे इन बातों से कोई फर्क नहीं पड़ता। वह अपनी निश्चिंतता प्रकट करती हुई सबको बोलने और देखने के मौके दे दिया करती थी। इतनी बातों के साथ यह कविता समाप्त हो जाती है।

टेक की पंक्तियों को दुहराएँ तो कह सकते हैं कि इन सब बातों को बताने के बाद नाविक को सलाह दी जा रही है कि इस घाट पर नाव मत लगाओ! यदि यहाँ नाव लगाओगे तो हो सकता है कि गाँव के लोग तुमसे कुछ सवाल–जवाब करने लगें! उन्हें शक हो सकता है कि उस लड़की से जुड़ी किसी घटना से तुम्हारा सम्बन्ध तो नहीं है। यह घाट संशयग्रस्त है, यहाँ मत रोको, आगे चलकर कहीं रोकना!

कठिन शब्द

ठाँव – स्थान; **पूछेगा** – जिरह करना; **दाँव** – मौका

काव्य सौष्ठव / विशेष

- यह ताल पर आधारित गीत है।
- इसमें 16–16 मात्राओं की पंक्तियों का उपयोग किया गया है।
- यह छायावाद के बाद का गीत है, इसलिए यथार्थ चित्र पर जोर है। इसमें कल्पना का उपयोग नहीं हुआ है। इस विषय पर यदि छायावादी गीत लिखा जाता तो कल्पना का भरपूर उपयोग किया जाता।

सारांश

1950 में लिखा गया यह गीत निराला के प्रसिद्ध गीतों में से एक है। एक लड़की का खुलेआम नहाना और फिर गायब हो जाना – इस गीत का विषय है। 1956 में फणीश्वरनाथ रेणु की प्रसिद्ध कहानी लिखी गयी – 'मारे गये गुलफाम' उर्फ 'तीसरी कसम'। उस कहानी में एक पात्र है – महुआ घटवारिन। कहानी में जिक्र है कि "परमार नदी में महुआ घटवारिन के कई पुराने घाट हैं।" हिरामन महुआ की लोक प्रचलित कथा हीराबाई को सुनाता है। इस कहानी में महुआ के साथ जुल्म होता है और वह आत्महत्या कर लेती है। इन दोनों रचनाओं में बारीक–सी समानता है – नदी का घाट और एक लड़की। लड़कियों का 'होने के बाद न होना' इस समाज की एक सच्चाई रही है। 'बाँधो न नाव इस ठाँव, बन्धु!' शीर्षक गीत अपनी मनोहरता के बावजूद एक दुर्घटना का संशय अपने अर्थ में लिये हुए है।

बोध प्रश्न – 1

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

i. 'जागो फिर एक बार' कविता का पहला प्रकाशन कब हुआ था?

क) 1928   ख) 1920   ग) 1926   घ) 1924

ii. 'चमू' शब्द का क्या अर्थ है ?

क) लगाम   ख) सेना   ग) घोड़ा   घ) चाबुक

BHDE-144_2nd Proof.indd 203 3/23/2022 12:54:38 PM

iii. ''जागो फिर एक बार' कविता किस काव्य–संग्रह में संगृहीत है ?

क) अनामिका ख) अणिमा ग) गीतिका घ) परिमल

iv. 'जागो फिर एक बार' कविता में किन योद्धाओं की चर्चा है?

क) सिक्ख ख) जाट ग) मराठा घ) राजपूत

v. 'बाँधो न नाव इस ठाँव, बन्धु!' शीर्षक कविता किस काव्य–संग्रह में संगृहीत है?

क) अणिमा ख) अर्चना

ग) सांध्य–काकली घ) आराधना

vi. 'अर्चना' का प्रकाशन कब हुआ था?

क) 1950 ख) 1940 ग) 1945 घ) 1960

vii. 'बाँधो न नाव इस ठाँव, बन्धु!' में कितनी मात्राओं की पंक्तियाँ है?

क) 18 ख) 16 ग) 14 घ) 12

viii. 'ठाँव' का क्या अर्थ है?

क) घाट ख) धारा ग) आकाश घ) स्थान

बोध प्रश्न –2

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दें।

1. 'जागो फिर एक बार' कविता में 'मुक्ति' की चेतना किस रूप में प्रकट हुई है?

....

....

....

2. 'जागो फिर एक बार' कविता में सिक्खों का उल्लेख किस रूप में हुआ है?

....

....

....

3. 'बाँधो न नाव इस ठाँव, बन्धु!' शीर्षक गीत का सारांश बताएँ?

....

....

....

9.3 उपयोगी पुस्तकें

1. **निराला** – नंददुलारे वाजपेयी, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद,नई दिल्ली
2. **निराला की साहित्य–साधना** – रामविलास शर्मा, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली
3. **निराला – कृति से साक्षात्कार** – नंद किशोर नवल, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली
4. **निराला काव्य–कोश** – कमलेश वर्मा, संस्कृति प्रकाशन, भागलपुर
5. **छायावादी काव्य–कोश** – कमलेश वर्मा, सुचिता वर्मा, द मार्जिनलाइज्ड प्रकाशन, मैदानगढ़ी, दिल्ली

BHDE-144_2nd Proof.indd 204 3/23/2022 12:54:38 PM

9.4 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न –1

i. ग	ii. ख	iii. घ	iv. क
v. ख	vi. क	vii. ख	viii. घ

बोध प्रश्न –2

1. 'जागो फिर एक बार' कविता में भारतीयों को प्रेरित किया गया है कि तुम्हारा अतीत गौरवशाली रहा है। सिक्खों ने आजादी की लड़ाई लड़ी थी। उन्होंने अपने एक योद्धा को सवा लाख दुश्मन से भी भिड़ जाने की इच्छा–शक्ति पैदा की थी। आध्यात्मिक क्षेत्र से उदाहरण लेकर निराला प्रेरित कर रहे हैं कि तुम मृत्युंजय शिव को याद करो! योग–बल से मृत्यु–भय पर विजय पानेवाले आने पूर्वजों को याद करो! तुम शेर की तरह हो! आज धोखे से तुम्हें सियार चुनौती दे रहे हैं। अपनी शक्ति को पहचानो और विश्वास करो कि तुम पूरे संसार में महान् हो! इस तरह की प्रेरक बातों की सहायता से निराला 'मुक्ति' की बात करते हुए अवान्तर से भारतीयों में स्वतंत्रता आन्दोलन के प्रति जागरुकता पैदा कर रहे हैं।

2. 'जागो फिर एक बार' कविता में सिक्खों को स्वतंत्रता के लिए संघर्ष करनेवालों के रूप में याद किया गया है। पंजाबवासियों की वीरता को याद करते हुए निराला लिखते हैं कि सिंधु नदी के तट पर रहनेवाले पंजाब के लोगों ने युद्ध में लड़ते हुए अपने प्राणों को अमर कर दिया था। उन्होंने युद्ध में महासागर की तरह गर्जना की थी। सिंध क्षेत्र के उम्दा घोड़ों और चतुरंगिणी सेना के साथ पूरी तैयारी से पंजाबवासियों ने लड़ाई लड़ी थी। सिक्खों के दसवें गुरु गोविन्द सिंह ने खालसा पंथ के योद्धाओं में उत्साह भरते हुये कहा था कि एक–एक खालसा सवा–सवा लाख दुश्मन के बराबर है। मैं अपने एक–एक लड़ाका को इस योग्य बनाने के बाद ही अपने को 'गुरु' कहे जाने के लायक मानूँगा। निराला कहते हैं कि वीरता से भरी हुई यह गर्जना एक भारतवासी ने ही की थी। इस गर्जना में दुर्जय संग्राम–राग भरा हुआ था। मानो यह गर्जना एक युद्ध–गीत की तरह थी जिसमें हारने का भाव था ही नहीं। इन भारतवासियों ने युद्ध में खून की होली का खेल खेला था। वे युद्ध को भी क्रीड़ा–भाव से अंजाम दे रहे थे। होली तो साल भर में एक बार खेलते हैं, किन्तु इन लोगों ने वीरता की होली बारहों महीने खेली थी। वे निरंतर बहादुरी से तत्पर रहे। भारत के ये लोग शेर की मानिंद थे।

3. 'बाँधो न नाव इस ठाँव, बन्धु!' शीर्षक गीत का सार–संक्षेप यही है कि एक लड़की नदी के एक तट पर स्वच्छन्दतापूर्वक नहाया करती थी। उसे इस तरह नहाते देखकर काफी लोगों का ध्यान उसकी तरफ जाता था। लोग टीका–टिप्पणी भी करते थे। वह सब की बातों को सुनती थी और बर्दाश्त करती थी। ऐसा भी लगता था कि लोगों के बोलने–देखने की वह ज्यादा परवाह नहीं करती थी। मगर, आज वह उस घाट पर नहीं आ रही है। गीत में उसके अनुपस्थित होने का कोई कारण नहीं बताया गया है। यह कहा गया है कि इस घाट पर नाव बाँधना ठीक नहीं है। यहाँ रुकने पर गाँव के लोग उस लड़की के बारे में पूछताछ कर सकते हैं। वे विवाद कर सकते हैं। यह गीत संशय के साथ समाप्त होता है।

BHDE-144_2nd Proof.indd 205 3/23/2022 12:54:39 PM

इकाई 10 काव्य वाचन एवं विश्लेषण : 'मोह' और 'नौका विहार'

इकाई की रूपरेखा

10.0 उद्देश्य

10.1 प्रस्तावना

10.2 चयनित कविताओं का पाठ और विश्लेषण

10.3 उपयोगी पुस्तकें

10.4 बोध प्रश्नों के उत्तर

10.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आपः

- सुमित्रानंदन पंत की कविता 'मोह' और 'नौका–विहार' की विस्तृत व्याख्या समझ सकेंगी / सकेंगे;
- व्याख्या की दिशाओं को जान सकेंगी / सकेंगे;
- छायावाद की विशिष्टताओं को समझ सकेंगी / सकेंगे;
- पंत की काव्य–भाषा को समझने का प्रयास कर सकेंगी / सकेंगे; और
- पंत की शब्द–योजना और शब्दावली को जान सकेंगी / सकेंगे।

10.0 प्रस्तावना

सुमित्रानंदन पन्त का जन्म 20 मई, 1900 को हुआ था। वे कौसानी, अल्मोड़ा (उत्तराखंड) के रहनेवाले थे। उनके बचपन का नाम गोसाईंदत्त था। जन्म के समय माँ की मृत्यु हो जाने के कारण पंत का बचपन भावनात्मक रूप से एक खास प्रकार की दशा में गुजरा था। एक समृद्ध परिवार में जन्म लेने के कारण उन्हें पढ़ाई–लिखाई की समुचित व्यवस्था मिली थी। अत्यंत कम उम्र से ही उनमें काव्य–प्रतिभा दिखाई पड़ने लगी थी। स्कूल के कार्यक्रमों में कविता के कई पुरस्कार उन्होंने कम ही उम्र में प्राप्त किए। अल्मोड़ा और इलाहाबाद में उनकी पढ़ाई–लिखाई हुई। 1921 में असहयोग आन्दोलन से प्रभावित होकर उन्होंने कॉलेज की पढ़ाई छोड़ दी। इस तरह उनकी औपचारिक शिक्षा इंटरमीडिएट तक ही हो पायी।

अपना नाम उन्होंने खुद बदला था। महज 10 साल की उम्र में उन्होंने अपना नाम गोसाईंदत्त से बदलकर सुमित्रानंदन रख लिया था। साहित्य के प्रति अत्यधिक लगाव के कारण 15 साल की उम्र में ही उन्होंने स्थायी लेखन की शुरुआत कर दी थी। उनकी कविताओं के प्रकाशन की शुरुआत 'सुधाकर' नामक हस्तलिखित पत्रिका से हुई। और जल्दी ही 'अलमोड़ा अखबार', 'मर्यादा' आदि पत्रिकाओं में उनकी रचनाएँ छपने लगीं। उन्होंने 'रूपाभ' नामक पत्रिका का संपादन भी किया। उनकी वैचारिकी पर कार्ल मार्क्स, महात्मा गाँधी, रवीन्द्रनाथ टैगोर तथा अरविन्द के विचारों का असर अलग–अलग समय पर पड़ा। उन्हें ढेर सारे पुरस्कार और सम्मान प्राप्त हुए – भारतीय ज्ञानपीठ पुरस्कार, साहित्य अकादमी पुरस्कार, सोवियत लैंड नेहरु पुरस्कार, पद्मभूषण, डालमिया पुरस्कार, देव पुरस्कार, द्विवेदी पदक आदि।

BHDE-144_2nd Proof.indd 206 3/23/2022 12:54:39 PM

उनकी रचनाओं की सूची इस प्रकार है –

काव्य–कृतियाँ

वीणा (1927) , ग्रन्थि(1920 / 1929), पल्लव (1926), गुंजन (1932) , युगान्त (1936), युगपथ (1949), युगवाणी (1939), ग्राम्या (1940), स्वर्णकिरण (1947), स्वर्णधूलि (1947), मधुज्वाल (1947), उत्तरा (1949), रजत–शिखर (1952), शिल्पी (1952), सौवर्ण (1956), अतिमा (1955), किरण–वीणा (1967), वाणी (1958), कला और बूढ़ा चाँद (1959), पौ फटने से पहिले (1967), पतझर (एक भाव–क्रान्ति – 1967), गीतहंस (1969), लोकायतन (1965) शंखध्वनि (1971), शशि की तरी (1971), समाधिता (1973), आस्था (1973), सत्यकाम (1975), गीत–अगीत (1977), संक्रांति (1977)

नाट्य–कृतियाँ

ज्योत्स्ना (1934), परी (जनवरी, 1925), जिन्दगी का चौराहा (1939), अस्पृश्या (1937), स्रष्टा (1938), करमपुर की रानी (1949), चौराहा (1948), शकुन्तला (1948), युग–पुरुष (1948), छाया (1948)

कहानी–संग्रह

पाँच कहानियाँ (1936)

उपन्यास

हार (1917)

निबन्ध

छायावाद – पुनर्मूल्यांकन (1965), शिल्प और दर्शन (1961), कला और संस्कृति (1965), साठ वर्ष : एक रेखांकन (1969)

10.2 चयनित कविताओं का पाठ और विश्लेषण

एक

मोह

छोड़ द्रुमों की मृदु छाया,
तोड़ प्रकृति से भी माया,
बाले! तेरे बाल जाल में कैसे उलझा दूँ लोचन?
भूल अभी से इस जग को!
तज कर तरल तरंगों को,
इन्द्रधनुष के रंगों को,
तेरे भरू भ्रंगों से कैसे बिंधवा दूँ निज मृग–सा मन?
भूल अभी से इस जग को!
कोयल का वह कोमल बोल,
मधुकर की वीणा अनमोल,
कह, तब तेरे ही प्रिय स्वर से कैसे भर लूँ सजनि, श्रवन?
भूल अभी से इस जग को!
ऊषा–सस्मित किसलय–दल,

BHDE-144_2nd Proof.indd 207 3/23/2022 12:54:39 PM

सुधारश्मि से उतरा जल,
ना, अधरामृत ही के मद में कैसे बहला दूँ जीवन?
भूल अभी से इस जग को!

(जनवरी, 1918, पल्लव)

सन्दर्भ और प्रसंग

'मोह' शीर्षक कविता पंत ने जनवरी, 1918 में लिखी थी। यह कविता उनके काव्य–संग्रह 'पल्लव' (1926) में संगृहीत है। छायावाद के शुरुआती दौर की कविता होने के बावजूद अपनी विशेषताओं के कारण इसे बार–बार पढ़ा गया और उद्धृत किया गया। इस कविता में छायावाद का प्रकृति–प्रेम स्पष्ट शब्दों में व्यक्त हुआ है। प्रकृति–प्रेम की पराकाष्ठा इस रूप में यहाँ सिद्ध हुई है कि कवि ने इसके लिए स्त्री–प्रेम को द्वितीयक बताया है। वह कहता है कि तुमसे आकर्षित होने के बजाय प्रकृति के प्रति ज्यादा आकर्षित हूँ।

व्याख्या

कविता की शुरुआत इस रूप में होती है कि मैं वृक्षों की कोमल छाया को छोड़कर और प्रकृति की सुंदरता से नाता तोड़कर हे सुन्दरी! तुम्हारी केश–राशि के सुन्दर विन्यास में अपनी आँखों को व्यस्त करना नहीं चाहता हूँ। प्रकृति की सुंदरता से निर्मित यह संसार मेरे लिए ज्यादा महत्त्वपूर्ण है।

इसी भावबोध को व्यक्त करते हुए पंतजी अगली पंक्तियों में कहते हैं कि पानी में उठनेवाली तरंगों की तरलता मुझे इतनी सुन्दर मालूम पड़ती है कि मैं इन्हें छोड़ नहीं सकता! इन्द्रधनुष के रंग मुझे इतने चटक और आकर्षक लगते हैं कि मेरे मन से ये निकल नहीं सकते! इन दृश्यों से आँखें मोड़कर तुम्हारे भौंहों की भंगिमाओं से मैं उलझना नहीं चाहता! मैं अपने मृग–से चंचल और कोमल मन को तुम्हें भरू–भंगों के तीर से चोटिल करना नहीं चाहता! मेरा मन तरल तरंगों और इन्द्रधनुषी रंगों को भुला नहीं पाता है।

कोयल की कोमल कूक और भौंरों की वीणा–जैसी अनमोल अनुगूँज, मेरे कानों को बहुत भाती हैं। माना कि तुम्हारी आवाज मुझे प्रिय लगती है, किन्तु अपने कानों को कैसे समझाऊँ? उन्हें तो कोयल और भौंरों की ध्वनियाँ ज्यादा प्रिय हैं!

प्रभात काल में मुस्कुराते हुए नये पत्ते ओस की बूँदों के साथ बहुत अच्छे लगते हैं। ऐसा लगता है मानो चाँद की किरणों के सहारे ओस की बूँदें आकाश से उतर कर धरती पर आती हैं। दूसरी तरफ तुम्हारे होंठों में बसे अमृत–तुल्य मदिरा के नशे को भी जानता हूँ। मगर मुझे लगता है कि तुम्हारे अधरामृत में जीवन का वह विस्तार नहीं है जो मुस्कुराते हुए नये पत्तों पर ढलकती ओस की बूँदों में है।

यह कविता मनुष्य की तुलना में प्रकृति के आकर्षण की प्रबलता को व्यक्त करती है। प्रकृति में मनुष्य के आरोप को छायावाद ने कई तरह से व्यक्त किया। इस काम को छायावाद के चारों कवियों ने अपने–अपने ढंग से संपन्न किया। छायावाद की शुरुआत 1918 से मान ली गयी है और यह कविता इसी वर्ष जनवरी में लिखी गयी थी। इस दृष्टि से देखें तो छायावादी प्रवृत्ति को परिपक्व ढंग से व्यक्त करने में इस कविता को कालक्रम से पहले सफलता मिली है। छायावाद के शेष तीनों कवियों की कविताएँ जनवरी, 1918 तक इस कोटि की नहीं मिलती हैं। 'निराला रचनावली' के अनुसार निराला की पहली कविता 'मातृभूमि' 1920 की है। महादेवी ने और बाद में शुरुआत की! केवल जयशंकर प्रसाद 1918 से पहले से लिख रहे थे, मगर 1918 तक उन्होंने छायावाद की अपनी श्रेष्ठ कविताएँ नहीं लिखी थीं। चारों कवियों में उम्र के लिहाज से

BHDE-144_2nd Proof.indd 208 3/23/2022 12:54:39 PM

तीसरे स्थान पर होने के बावजूद पंत की छायावादी कविताएँ सबसे पहले परिपक्व रूप में हमारे सामने आ गयी थीं।

कठिन शब्द

द्रुमों – वृक्षों; **मृदु छाया** – कोमल छाया; **प्रकृति से भी माया** – प्रकृति के प्रति लगाव; **बाले** – बाला (लड़की) को संबोधन; **बाल–जाल** – केश–राशि; **भरू–भंगों** – भौंहों की भंगिमाएँ; **श्रवन** – कान; **सस्मित** – मुस्कुराता हुआ; **किसलय दल** – नये पत्ते; **सुधारश्मि** – चाँद की किरणें, अधरामृत– होंठों पर प्रेम की मादकता का आकर्षण; **मद** – नशा

काव्य सौष्ठव / विशेष

- प्रकृति के प्रति अटूट आकर्षण को व्यक्त करनेवाली यह कविता प्रकृति की अनिवार्यता को स्थापित करती है।
- प्रकृति के विभिन्न पक्षों को व्यक्त करती हुई यह कविता बताती है कि प्रकृति मनुष्य से ज्यादा विविध और आकर्षक है।
- प्रकृति की उपेक्षा करके मनुष्य को महत्त्व नहीं दिया जा सकता है।
- इस कविता की ज्यादातर पंक्तियों का निर्माण 14 मात्राओं से हुआ है। केवल चार पंक्तियों में 30–30 मात्राएँ हैं जहाँ 16 और 14 मात्राओं पर यति है।

सारांश

छायावादी कविता का एक रूप स्त्रीमय है। प्रकृति में मनुष्य का आरोप करने वाली छायावादी कविता स्त्री बोधक भाषा का पर्याप्त सहारा लेती है। मगर पंत की प्रस्तुत कविता यह बताने का प्रयास करती है कि प्रकृति का आकर्षण अटूट और स्थायी है। प्रकृति को स्थगित करके मनुष्य की महत्ता स्थापित नहीं की जा सकती है।

दो

नौका विहार

नौका विहार
शान्त, स्निग्ध, ज्योत्स्ना उज्ज्वल!
अपलक अनन्त, नीरव भूतल!
सैकत शय्या पर दुग्ध धवल, तन्वंगी गंगा, ग्रीष्म विरल,
लेटी हैं श्रान्त, क्लान्त, निश्चल!
तापस बाला गंगा निर्मल, शशि–मुख से दीपित–मृदु करतल,
लहरे उर पर कोमल कुंतल!
गोरे अंगों पर सिहर–सिहर, लहराता तार–तरल सुन्दर
चंचल अंचल–सा नीलाम्बर!
साड़ी की सिकुड़न सी जिस पर, शशि की रेशमी विभा से भर,
सिमटी हैं वर्तुल, मृदुल लहर!

चाँदनी रात का प्रथम प्रहर,
हम चले नाव लेकर सत्वर!
सिकता की सस्मित–सीपी पर मोती की ज्योत्स्ना रही विचर,
लो, पालें चढ़ीं, उठा लंगर!
मृदु मन्द–मन्द, मन्थर–मन्थर, लघुतरणि, हंसिनी–सी सुन्दर,
तिर रही, खोल पालों के पर!

BHDE-144_2nd Proof.indd 209 3/23/2022 12:54:39 PM

निश्चल–जल के शुचि–दर्पण पर बिम्बित हो रजत पुलिन निर्भर
दुहरे ऊँचे लगते क्षण–भर!
कालाकाँकर का राजभवन सोया जल में निश्चिन्त, प्रमन
पलकों में वैभव–स्वप्न सघन!

नौका से उठतीं जल–हिलोर,
हिल पड़ते नभ के ओर–छोर!
विस्फारित नयनों से निश्चल कुछ खोज रहे चल तारक दल
ज्योतित कर नभ का अन्तस्तल;
जिनके लघु दीपों को चंचल, अंचल की ओट किये अविरल
फिरतीं लहरें लुक–छिप पल–पल!
सामने शुक्र की छवि झलमल, पैरती परी–सी जल में कल,
रुपहरे कचों में ही ओझल!
लहरों के घूँघट से झुक–झुक, दशमी का शशि निज तिर्यक–मुख
दिखलाता, मुग्धा–सा रुक–रुक!

अब पहुँची चपला बीच धार,
छिप गया चाँदनी का कगार!
दो बाहों–से दूरस्थ–तीर, धारा का कृश कोमल शरीर
आलिंगन करने को अधीर!
अति दूर, क्षितिज पर विटप–माल, लगती भ्रू–रेखा–सी अराल,
अपलक–नभ नील–नयन विशालय
मा के उर पर शिशु–सा, समीप, सोया धारा में एक द्वीप,
ऊर्मिल प्रवाह को कर प्रतीप,
वह कौन विहग? क्या विकल कोक, उड़ता हरने निज विरह–शोक?
छाया की कोकी को विलोक!

पतवार घुमा, अब प्रतनु भार
नौका घूमी विपरीत–धार!
डाँड़ों के चल करतल पसार, भर–भर मुक्ताफल फेन–स्फार,
बिखराती जल में तार–हार!
चाँदी के साँपों–सी रलमल नाचतीं रश्मियाँ जल में चल
रेखाओं–सी खिंच तरल–सरल!
लहरों की लतिकाओं में खिल, सौ–सौ शशि, सौ–सौ उडु झिलमिल
फैले फूले जल में फेनिल!
अब उथला सरिता का प्रवाह, लग्गी से ले–ले सहज थाह
हम बढ़े घाट को सहोत्साह!

ज्यों–ज्यों लगती है नाव पार
उर में आलोकित शत विचार!
इस धारा–सा ही जग का क्रम, शाश्वत इस जीवन का उद्गम,
शाश्वत है गति, शाश्वत संगम!

BHDE-144_2nd Proof.indd 210 3/23/2022 12:54:39 PM

शाश्वत नभ का नीला विकास, शाश्वत शशि का यह रजत हास,
शाश्वत लघु लहरों का विलास!
हे जग–जीवन के कर्णधार! चिर जन्म–मरण के आर–पार,
शाश्वत जीवन–नौका विहार!
मै भूल गया अस्तित्व–ज्ञान, जीवन का यह शाश्वत प्रमाण
करता मुझको अमरत्व–दान!

(1932, गुंजन)

सन्दर्भ और प्रसंग

सुमित्रानंदन पंत अपने मित्र कुँवर सुरेश सिंह के राजमहल में लंबे समय तक रहे। 1931 में वे कालाकाँकर (जिला – प्रतापगढ़, उत्तर प्रदेश) के राजमहल में आ गये थे। यहीं से उन्होंने 1938 में 'रूपाभ' नाम की प्रगतिशील पत्रिका का संपादन–प्रकाशन किया था। साहित्यिक रुचि के कुँवर सुरेश सिंह ने पंत को काफी सहयोग प्रदान किया था। गंगा के किनारे बने इस राजमहल की चर्चा 'नौका–विहार' कविता में हुई है। जुलाई, 1932 में लिखी गयी यह कविता हर तरह से छायावादी भावबोध और विन्यास से जुड़ी है। विस्तृत विवरणों की ललित अभिव्यक्ति करती हुई यह कविता अंत में जीवन के दार्शनिक प्रश्नों पर बात करती हुई समाप्त होती है। चाँदनी रात में मित्रों के साथ गंगा में नौका–यात्रा करते हुये जो दृश्य दिखे उन्हें अपनी भाव–प्रवणता के साथ पंत ने काव्यात्मक ऊँचाई दी है।

व्याख्या

गर्मी का मौसम है और गंगा की धारा पतली हो चली है। रात में चाँदनी बिखरी है और शुक्ल–पक्ष की दशमी तिथि का चाँद आकाश में खिला है। पंत कविता की शुरुआत करते हुये कहते हैं कि शान्त और स्निग्ध चाँदनी चमक रही है। आकाश चाँद की रोशनी से उज्ज्वल नजर आ रहा है। आकाश एकटक सब कुछ देख रहा है। धरती चुपचाप है। गंगा की धारा धीमी गति से बह रही है। यूँ लगता है कि गंगा एक तपस्विनी की तरह बालू की शय्या पर लेटी है। वह दूध–धुली गुराई (गौर वर्ण) से युक्त है, वह सुंदर छरहरे शरीर की स्वामिनी है, वह गर्मी के कारण दुबली हो गयी है, वह ऐसे लेटी है मानो थक चुकी है। उसका व्यक्तित्व श्रम के कारण थोड़ा बुझा हुआ–सा (क्लांत) है और वह निश्चेष्ट–सी लेटी हुई है।

गंगा की निर्मलता ऐसी लग रही है मानो किसी व्रती युवती का कांतिमय व्यक्तित्व हो! चाँद की परछाई पानी में बन रही है तो ऐसा लगता है कि चाँद गंगा का चेहरा है और उस चेहरे के आस–पास उठती लहरें गंगा की चमकती हुई हथेलियाँ हैं। कभी यूँ लग रहा है कि गंगा की छाती पर लहरें कोमल केश–राशि की तरह लहरा रही हैं। आकाश की नीली छाया गंगा की धारा में बन रही है जिसे देखकर लग रहा है कि गंगा के गोरे अंगों पर नीले रंग का वस्त्र (साड़ी) सिहर–सिहर कर लहरों के रूप में हिल–डुल रहा है। नीले रंग का उसका आँचल भी अपनी चंचलता में सरकता हुआ मालूम पड़ रहा है! गंगा में उठनेवाली लहरें कोमल और वर्तुल (लंबाई में गोलाकार) हैं। इन लहरों को देखकर ऐसा लगता है मानो ये गंगा की साड़ी की सिकुड़न (तह, चुनट, परत) हैं और उस पर चाँदनी रेशमी चमक की तरह मालूम पड़ रही है।

चाँदनी रात का प्रथम प्रहर,
हम चले नाव लेकर सत्वर!

वह शुक्ल–पक्ष की दशमी तिथि की रात थी। इसलिए रात को 9 बजे तक चाँद निकल आया था। पंत लिखते हैं कि चाँदनी रात का वह पहला प्रहर था। हमलोग नाव लेकर

BHDE-144_2nd Proof.indd 211 3/23/2022 12:54:39 PM

शीघ्रतापूर्वक चल पड़े। गंगा के तट पर सफेद रेती फैली हुई थी। रेत में बनी आकृतियाँ सीपी की तरह लग रही थीं। उन पर चाँदनी पड़ रही थी। कुल मिलाकर यह लग रहा था कि रेत की मुस्कुराती सीपियों में ज्योत्स्ना के मोती विचरण कर रहे हैं। पालें चढ़ा दी गयी थीं और लंगर उठा दिये गये थे। नौका धीमी गति से नदी में चलने लगी थी। यहाँ नाव की गति को पंत ने जिन सुंदर लयात्मक शब्दावलियों में व्यक्त किया है, उसकी प्रशंसा अनेक बार हुई है – 'मृदु मन्द–मन्द......। वह छोटी–सी नौका हंसिनी की तरह, अपने पालों के पंख के सहारे, जल में संतरण करने लगी। मंद–मंद और मंथर–मंथर गति से वह छोटी–सी नौका सुंदर हंसिनी की तरह तैरने लगी। अब नाव तट को छोड़ चुकी थी और गंगा की धारा में तैर रही थी। थोड़ी दूरी से देखने पर तट पर के स्थिर पानी में तट की छाया दिखाई पड़ रही थी। क्षण–भर के लिए ऐसा लग रहा था कि तट की ऊँचाई दो गुणी हो गयी है। तट की ऊँचाई और छाया को मिलाकर यह दृश्य उत्पन्न हो रहा था। तट से दूरी बढ़ने पर अब गंगा के पानी में कालाकाँकर के राजभवन की परछाईं दिखाई पड़ने लगी थी। ऐसा लग रहा था कि यह राजभवन पानी में निश्चिन्त होकर पूरे मन से सो रहा है। यह भी लग रहा था कि उसके पलकों पर वैभव के घनीभूत सपने सो रहे हों!

"नौका से उठतीं जल–हिलोर,
हिल पड़ते नभ के ओर–छोर!"

अब नाव नदी के गहरे जल–प्रवाह की तरफ बढ़ रही थी। नाव के चलने से पानी में हिलोरें उठ रही थीं। पानी में आकाश की छाया पड़ रही थी और जल–हिलोर से यह लग रहा था कि आकाश के ओर–छोर हिल रहे हों। आकाश का हिलता–डुलता प्रतिबिम्ब सौन्दर्य उत्पन्न कर रहा था। पानी में तारे ऐसे दिख रहे थे मानो वे अपनी आँखें फैला–फैलाकर कुछ खोज रहे हों और इस क्रम में वे आकाश के अंतस्तल को प्रकाशित करके खोजने का काम कर रहे हों! कभी–कभी ऐसा दृश्य उपस्थित हो रहा था मानो लहरें आँचल की तरह हैं। तारे छोटे–छोटे दीपों की तरह हैं। आँचल की ओट में जलते दीपक कभी दिखते हैं तो कभी मंद होकर अदृश्य भी हो जाते हैं। आकाश में पश्चिम दिशा में शुक्र ग्रह तारे की तरह झिलमिलाता हुआ दिखाई पड़ रहा था। उसकी छवि जल में तैरती हुई परी–जैसी लग रही थी, जिसके रुपहले बाल इतने घने थे कि चेहरा ढँक जा रहा था। लहरों से बनते–बिगड़ते घूँघट के बीच दशमी तिथि का चन्द्रमा अपना चेहरा कभी दिखाता था तो कभी छिपा लेता था। चाँद अपनी बंकिम और तीखी मुख–छवि के कारण सुन्दर मालूम पड़ता था। वह मुग्धा नायिका की तरह कभी लजा रहा था तो कभी उत्सुक होकर देखने के क्रम में अपना चेहरा दिखा भी रहा था।

अब पहुँची चपला बीच धार,
छिप गया चाँदनी का कगार!

धीरे–धीरे नाव गंगा की बीच धारा में पहुँची। तट से दूरी बढ़ जाने के कारण चाँदी की तरह चमकता हुआ नदी का किनारा अब दिखाई नहीं दे रहा था। नदी के किनारों को दूर तक देखते हुए ऐसा लग रहा था कि दो बाँहें फैली हुई हैं और नदी की धारा के कोमल छरहरे शरीर को आलिंगन में बाँध लेने को बेचैन हैं। बहुत दूर स्थित वृक्षों की पंक्तियाँ ऐसी लग रही थीं मानो वे भौंहों की तिरछी रेखाएँ हों! वहाँ फैला हुआ आकाश नीली आँखों की तरह दिखाई पड़ रहा था और क्षितिज पर स्थित वृक्षों की पंक्तियाँ भौंहों की तरह लग रही थीं। रास्ते में एक द्वीप मिला। ऐसा लगा मानो नदी उसकी माँ है और वह उसका शिशु। वह माँ की छाती से लग कर सोये हुये बच्चे की तरह लग रहा था। नदी की धारा उस द्वीप के करीब जाकर विपरीत दिशा में घूम जा रही थी। धारा का यूँ घूमना सुंदर लग रहा था। इसी बीच एक पक्षी उड़ता हुआ दिखाई पड़ा। रात में

BHDE-144_2nd Proof.indd 212 3/23/2022 12:54:39 PM

उड़ता हुआ यह पक्षी शायद चकवा है। कहते हैं कि वह वियोग की व्याकुलता में रात को भटकता है। पंत का अनुमान है कि शायद उसने अपनी छाया को अपनी चकई के रूप में पहचान लिया हो और उससे मिलने के लिए उड़ रहा हो!

पतवार घुमा, अब प्रतनु भार

नौका घूमी विपरीत–धार!

इतनी यात्रा करने के बाद लौटने का विचार बना और नाव घुमा ली गयी। पतवार के सहारे जब नाव को घुमाया गया तो वह छोटी–सी नौका भारी मालूम पड़ने लगी क्योंकि अब विपरीत धारा में नाव को चलना था। पतवार तेजी से चलने लगे और लगा कि कोई अपनी हथेलियों को पसारकर भर–भर मुट्ठी मोती बिखेर रहा है। पतवार के तेज संचालन के कारण पानी मोती की तरह उछल रहा था, बुलबुले भी बन कर बिखर रहे थे। इस प्रक्रिया को चाँदनी रात में देखता हुआ कवि महसूस कर रहा है मानो मोती के हार टूटकर बिखर रहे हों! चंचल और लहरदार पानी में चाँदनी के पड़ने से यूँ लग रहा है कि चाँदी के साँप झलमल–झलमल करते हुए तैर रहे हों! उनका तैरना सरल रेखाओं के तरल रूप धारण कर लेने की तरह लग रहा है। लहरें कभी लताओं की तरह दिख रही हैं। पानी की विविध छवियों में सौ–सौ चाँद और तारे इन लताओं में खिले फूलों की तरह लग रहे हैं। यह बात जरूर है कि यह छवि पानी में झिलमिल और फेनिल रूप में दिखाई पड़ रही है। मतलब यह कि कभी दिखती है तो कभी गायब हो जाती है। अब पानी का प्रवाह स्थिर होने लगा है क्योंकि नाव तट की तरह ले जायी जा रही है। 'उथला' का अर्थ है जहाँ तट पर गहराई हो। ऐसे तट पर ही नाव को लगाया जाता है ताकि नाव पानी में तैरती रहे। कम पानी रहने पर नाव बालू में बैठ जाएगी, फिर उसे गतिशील करना कठिन होगा। लम्बे बाँस से गहराई को देख–देखकर नाव उथले तट पर ले जायी जा रही है। यात्रा पूरी कर लेने के उत्साह से भर वह पूरी मित्र मंडली घाट की तरफ बढ़ने लगी।

ज्यों–ज्यों लगती है नाव पार

उर में आलोकित शत विचार!

कविता के अंतिम हिस्से में पंत ने दार्शनिकता को जोड़ दिया है। वे इस यात्रा को जीवन–यात्रा का रूपक बनाकर प्रस्तुत करते हैं। वे कहते हैं कि नाव जैसे–जैसे किनारे की तरफ लग रही है, मेरे मन में सैकड़ों विचार प्रकाश की तरह चमक रहे हैं। मुझे लगता है कि नदी की धारा की तरह ही इस संसार का क्रम है। इस संसार में जीवन की उत्पत्ति और स्थिति शाश्वत सत्य की तरह है। धारा की गति की तरह जीवन की गति भी शाश्वत है। चाहे कुछ हो जाए जीवन की गति को कोई रोक नहीं सकता है। इसी तरह जिन्हें मिलना है, वे मिलकर रहेंगे! संगम भी शाश्वत है! पंत शाश्वत सत्य के उदाहरण के तौर पर कुछ और पक्षों को भी रखते हैं – नभ का नीला विकास, शशि का रजत हास, लहरों का विलास। पंत ने नौका–विहार करते हुये नीले आकाश की सुंदरता को आँख भरकर देखा है, चाँद की चमकीली हँसी के साथ अपनी हँसी को घुलते–मिलते देखा है और लहरों की विलासता में अपने मन की अनुरक्ति को महसूस किया है। पंत को लगता है कि ये सारी चीजें अमर हैं, इन्हें कोई नष्ट नहीं कर सकता। अंतिम पंक्तियों तक पहुँचते हुये वे मानो ईश्वर को संकेतित करते हैं और 'जग–जीवन के कर्णधार' के रूप में उन्हें याद करते हैं। उन्हें साक्षी मानकर पंत कहते हैं कि जीवन की यात्रा जन्म–मरण के आर–पार चलती है। जैसे नौका–विहार अनुकूल और प्रतिकूल धारा में सम्पन्न हुआ वैसे जीवन की यात्रा जन्म और मृत्यु को अपनाती हुई सम्पन्न होती है। यह सब शाश्वत सत्य की तरह है। इस यात्रा को सम्पन्न करते हुए कवि को ऐसा लगा कि वह अपने वर्तमान अस्तित्व को भूल कर यात्रा की दार्शनिकता में लीन

BHDE-144_2nd Proof.indd 213 3/23/2022 12:54:39 PM

हो गया है। नौका–यात्रा में जीवन–यात्रा की शाश्वतता को अनुभूत करने के कारण कवि को लगा कि वह जीवन–मरण की सीमा को अतिक्रमित करके अमरता के चरण तक पहुँच गया है।

कठिन शब्द

नौका–विहार – मनोरंजन के लिए नाव से की गयी यात्रा; **ज्योत्स्ना** – चाँदनी; **अपलक** – एकटक; **अनन्त** – आकाश; नीरव – निःशब्द; **भूतल** – धरती; **सैकत शय्या** – बालू की सेज; **दुग्ध धवल** – दूध से धुली हुई; **तन्वंगी** – सुंदर–छरहरी स्त्री; **ग्रीष्म विरल** – गर्मी के कारण जो दुबली हो गयी है; **श्रान्त** – थकी हुई; **क्लान्त** – निश्तेज, आभाहीन; **निश्चल** – गतिहीन; तापस बाला – **व्रती स्त्री**; दीपित – चमकता हुआ; **करतल** – हथेली; **कुन्तल** – स्त्री के लंबे बाल; **तार–तरल** – तरल तार की तरह दिखने वाले बाल; **नीलाम्बर** – नीले रंग का वस्त्र या आकाश; **विभा** – चमक; वर्तुल – लंबाई में गोलाकार; **प्रथम प्रहर** – शाम 6 से 9 बजे रात का समय; **सत्वर** – शीघ्र; **सिकता** – रेती, सफेद बालू; **सस्मित** – मुस्कुराता हुआ; **पालें** – हवा का दबाव प्राप्त करने के लिए नाव पर इस्तेमाल किया जानेवाला कपड़ा; **लंगर** – नाव को तट पर बाँधकर रखने के लिए इस्तेमाल की जानेवाली रस्सी; **लघुतरणि** – छोटी नाव; **तर रही** – तैर रही; **पालों के पर** – पाल–रूपी पंख; **निश्चल जल** – स्थिर पानी; **शुचि** – साफ; **रजत पुलिन** – चाँदी की तरह सफेद तट; **प्रमन** – पूरे मन से; **विस्फारित नयनों** – पूरी तरह आँखें खोलकर चल – चंचल, गतिशील; **तारक दल** – सितारों के समूह; **शुक्र** – शुक्र ग्रह; **पैरती** – तैरती; **कल** – सुंदर; **रुपहरे कचों** – चाँदी की तरह चमकते बाल; **तिर्यक् मुख** – तीखी सुंदरता लिए हुए चेहरा; **मुग्धा** – एक नायिका–भेद, यौवन को प्राप्त कर रही और अपनी सुंदरता के प्रति मुग्ध रहनेवाली लड़की; **चपला** – छोटी नाव; **कगार** – तट; **दूरस्थ** – दूर स्थित; **कृश** – दुबला; **विटप–माल** – वृक्षों की पंक्तियाँ; **भरू–रेखा** – भौंहों की रेखा; **अराल** – टेढ़ा, बंकिम; **उर्मिल** – लहरों से युक्त; **प्रतीप** – उल्टा; **विहग** – पक्षी; **विकल** – व्याकुल; **कोक** – चकवा पक्षी; **कोकी** – चकई पक्षी; **विलोक** – देखकर; **पतवार** – चप्पू; **प्रतनु** – दुबला; **मुक्ताफल** – मोती; **फेन–स्फार** – बुलबुलों का फैलना; **तार–हार** – माला का क्रम; **रलमल** – चमकती–बुझती; **उडु** – नक्षत्र, तारे; **उथला** – छिछला, किनारे पर गहराई; **लग्गी** – लंबा बाँस; **सहोत्साह** – उत्साह के साथ; **शाश्वत** – सदा–सर्वदा से रहनेवाला, अपरिवर्तनीय; **रजत हास** – चाँदी की तरह सफेद हँसी; **कर्णधार** – पतवार चलानेवाला, नियंता, ईश्वर

काव्य सौष्ठव / विशेष

- यह कविता नौका–विहार करते हुए दिखाई पड़ने वाली विभिन्न छवियों का अद्भुत् संग्रह प्रस्तुत करती है।
- पंत ने इस कविता में जितने चित्र शब्दों के माध्यम से बनाए हैं, वे दुर्लभ हैं।
- बिम्ब–विधान और औपम्य–विधान की दृष्टि से इस कविता में ढेर सारे उदाहरण मौजूद हैं।
- नौका–विहार के क्रम में इस तरह के दृश्यों के संयोजन करती हुई यह कविता हिन्दी में इससे पहले नहीं लिखी गयी थी। हिन्दी कविता में नदियों का जिक्र तो खूब है, मगर नए–नए दृश्यों की कल्पना करके विवरणों के साथ लिखी गयी ऐसी कविता पहले नहीं लिखी गयी थी।
- भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने 'नव उज्ज्वल जलधार हार हीरक......' कविता बनारस की गंगा को ध्यान में रखकर लिखी थी, मगर उसमें भी गंगा की न तो इतनी छवियाँ हैं और न ही इतने विवरण। उसमें कल्पना का भी उपयोग इस स्तर पर नहीं हो पाया है। उस कविता में धार्मिक–आध्यात्मिक भावना का भी उपयोग किया गया है।
- पंत ने बिना किसी तरह की धार्मिकता के, गंगा में की गयी नौका–यात्रा की, कविता लिखी है।

BHDE-144_2nd Proof.indd 214 3/23/2022 12:54:39 PM

- यह कविता 6 चरणों में सुगठित है। प्रत्येक चरण में 10–10 पंक्तियाँ हैं। इन चरणों की 6 पंक्तियों में 16–16 मात्राएँ हैं और 4 पंक्तियों में 32–32 मात्राएँ। हालाँकि 32 मात्राओं की इन पंक्तियों में भी 16–16 मात्राओं पर यति है। कहा जा सकता है कि पूरी कविता मूलतः 16 मात्राओं की पंक्तियों से बनी है जिनके अंत में ह्रस्व की मात्रा है।

सारांश

'नौका–विहार' शीर्षक कविता जीवन–यात्रा पर विचार करती है। यात्रा के क्रम में आनेवाले दृश्यों और परिस्थितियों को चित्रित करती हुई यह कविता बताती है कि जीवन–यात्रा में भी तरह–तरह की परिस्थितियों का सामना करना पड़ता है। जीवन–क्रम में अच्छे–बुरे प्रसंग आते–जाते रहते हैं। कविता के अंत में इस मान्यता को स्थापित किया गया है कि जीवन का क्रम शाश्वत है। जन्म और मृत्यु के बंधन के बीच जीवन को सीमित नहीं किया जा सकता है।

बोध प्रश्न–1

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

i. 'नौका–विहार' शीर्षक कविता पंत के किस काव्य–संग्रह में है?

क) पल्लव ख) वीणा ग) गुंजन घ) ग्राम्या

ii. 'मोह' शीर्षक कविता किस दौर की कविता है?

क) छायावादी ख) प्रगतिवादी ग) प्रयोगवादी घ) रीतिवादी

iii. 'बाले! तेरे बाल जाल में' में प्रयुक्त 'बाल जाल' में कौन–सा अलंकार है?

क) उपमा ख) रूपक ग) अन्योक्ति घ) उत्प्रेक्षा

iv. 'सुधारश्मि' का क्या अर्थ है?

क) अमृत ख) चन्द्रमा ग) धूप घ) चाँदनी

v. 'सैकत शय्या पर दुग्ध धवल.....'काव्य–पंक्ति में आया हुआ विशेषण 'दुग्ध धवल' किसके लिए प्रयुक्त हुआ है?

क) चाँदनी ख) आकाश ग) गंगा घ) झरना

vi. 'गुंजन' काव्य–संग्रह का प्रकाशन कब हुआ था?

क) 1925 ख) 1932 ग) 1936 घ) 1945

vii. 'मोह' शीर्षक कविता पंत के किस काव्य–संग्रह में है?

क) पल्लव ख) वीणा ग) गुंजन घ) ग्राम्या

viii. 'नौका–विहार' कविता में कहाँ के राजभवन का उल्लेख हुआ है?

क) जयपुर ख) इलाहाबाद ग) कालाकाँकर घ) चुनार

ix. 'लघुतरणि' का क्या अर्थ है?

क) पतली धारा ख) छोटी नदी ग) छोटी नाव घ) छोटी पतवार

x. 'नौका–विहार' शीर्षक कविता में कुल कितने चरण या हिस्से हैं?

क) 6 ख) 5 ग) 7 घ) 4

BHDE-144_2nd Proof.indd 215 3/23/2022 12:54:39 PM

बोध प्रश्न– 2

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दें।

1. 'मोह' शीर्षक कविता में किस विषय पर विचार किया गया है ?

   ....

   ....

   ....

2. 'नौका–विहार' शीर्षक कविता में मूल रूप से किस तरह के विचार निहित हैं?

   ....

   ....

   ....

3. 'नौका–विहार' शीर्षक कविता के महत्त्व को कविता के इतिहास में किस तरह से देखा जा सकता है?

   ....

   ....

   ....

10.3 उपयोगी पुस्तकें

1. **छायावाद** – नामवर सिंह, राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली
2. **आधुनिक साहित्य की प्रवृत्तियाँ** – नामवर सिंह, लोकभारती प्रकाशन, नयी दिल्ली
3. **सुमित्रानंदन पंत ग्रन्थावली (कुल सात खंड)** – राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली
4. **छायावादी काव्य–कोश** – कमलेश वर्मा, सुचिता वर्मा, द मार्जिनलाइज्ड प्रकाशन, मैदानगढ़ी, दिल्ली

10.4 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न–1

i. ग

ii. क

iii. ख

iv. घ

v. ग

vi. ख

vii. क

viii. ग

ix. ग

x. क

BHDE-144_2nd Proof.indd 216 3/23/2022 12:54:39 PM

बोध प्रश्न – 2

1. 'मोह' शीर्षक कविता में पंत ने यह कहने का प्रयास किया है कि प्रकृति की सुंदरता मुझे स्त्री की सुंदरता से ज्यादा आकर्षक लगती है। प्रस्तुत कविता यह बताने का प्रयास करती है कि प्रकृति का आकर्षण अटूट और स्थायी है। प्रकृति को स्थगित करके मनुष्य की महत्ता स्थापित नहीं की जा सकती है। यह कविता स्त्री–विरोधी नहीं है, बल्कि सौन्दर्य के उन रूपों पर विचार करने का आग्रह करती है जो स्त्री–पुरुष की काम–चेतना की परिधि से बाहर जाकर निर्मित होते हैं।

2. 'नौका–विहार' शीर्षक कविता जीवन–यात्रा पर विचार करती है। यात्रा के क्रम में आनेवाले दृश्यों और परिस्थितियों को चित्रित करती हुई यह कविता बताती है कि जीवन–यात्रा में भी तरह–तरह की परिस्थितियों का सामना करना पड़ता है। जीवन–क्रम में अच्छे–बुरे प्रसंग आते–जाते रहते हैं। कविता के अंत में इस मान्यता को स्थापित किया गया है कि जीवन का क्रम शाश्वत है। जन्म और मृत्यु के बंधन के बीच जीवन को सीमित नहीं किया जा सकता है।

3. 'नौका–विहार' कविता 1932 में लिखी गयी थी। इस कविता की विशेषता इसके दृश्यों में है। शब्द–चित्र बनाने की अद्भुत क्षमता का परिचय पंत ने दिया है। नौका–विहार के क्रम में इस तरह के दृश्यों के संयोजन करती हुई यह कविता हिन्दी में इससे पहले नहीं लिखी गयी थी। हिन्दी कविता में नदियों का जिक्र तो खूब है, मगर नए–नए दृश्यों की कल्पना करके विवरणों के साथ लिखी गयी ऐसी कविता पहले नहीं लिखी गयी थी। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने 'नव उज्ज्वल जलधार हार हीरक.......' कविता बनारस की गंगा को ध्यान में रखकर लिखी थी, मगर उसमें भी गंगा की न तो इतनी छवियाँ हैं और न ही इतने विवरण। उसमें कल्पना का भी उपयोग इस स्तर पर नहीं हो पाया है। उस कविता में धार्मिक–आध्यात्मिक भावना का भी उपयोग किया गया है। पंत ने बिना किसी तरह की धार्मिकता के, गंगा में की गयी नौका–यात्रा की, कविता लिखी है।

BHDE-144_2nd Proof.indd 217 3/23/2022 12:54:39 PM

इकाई 11 काव्य वाचन एवं विश्लेषण : 'भारतमाता'

इकाई की रूपरेखा

11.0 उद्देश्य

11.1 प्रस्तावना

11.2 चयनित कविता का पाठ और विश्लेषण

11.3 उपयोगी पुस्तकें

11.4 बोध प्रश्नों के उत्तर

11.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आपः

- सुमित्रानंदन पंत की कविता 'भारतमाता' की विस्तृत व्याख्या कर सकेंगी/सकेंगे;
- व्याख्या की दिशाओं को जान सकेंगी/सकेंगे;
- प्रगतिवाद की विशिष्टताओं को समझ सकेंगी/सकेंगे;
- पंत की काव्य–भाषा को समझने का प्रयास कर सकेंगी/सकेंगे; और
- पंत की शब्द–योजना और शब्दावली को जान सकेंगी/सकेंगे।

11.0 प्रस्तावना

सुमित्रानंदन पन्त का जन्म 20 मई, 1900 को हुआ था। वे कौसानी, अल्मोड़ा (उत्तराखंड) के रहनेवाले थे। उनके बचपन का नाम गोसाईंदत्त था। जन्म के समय माँ की मृत्यु हो जाने के कारण पंत का बचपन भावनात्मक रूप से एक खास प्रकार की दशा में गुजरा था। एक समृद्ध परिवार में जन्म लेने के कारण उन्हें पढ़ाई–लिखाई की समुचित व्यवस्था मिली थी। अत्यंत कम उम्र से ही उनमें काव्य–प्रतिभा दिखाई पड़ने लगी थी। स्कूल के कार्यक्रमों में कविता के कई पुरस्कार उन्होंने कम ही उम्र में प्राप्त किए। अल्मोड़ा और इलाहाबाद में उनकी पढ़ाई–लिखाई हुई। 1921 में असहयोग आन्दोलन से प्रभावित होकर उन्होंने कॉलेज की पढ़ाई छोड़ दी। इस तरह उनकी औपचारिक शिक्षा इंटरमीडिएट तक ही हो पायी।

अपना नाम उन्होंने खुद बदला था। महज 10 साल की उम्र में उन्होंने अपना नाम गोसाईंदत्त से बदलकर सुमित्रानंदन रख लिया था। साहित्य के प्रति अत्यधिक लगाव के कारण 15 साल की उम्र में ही उन्होंने स्थायी लेखन की शुरुआत कर दी थी। उनकी कविताओं के प्रकाशन की शुरुआत 'सुधाकर' नामक हस्तलिखित पत्रिका से हुई। और जल्दी ही 'अलमोड़ा अखबार', 'मर्यादा' आदि पत्रिकाओं में उनकी रचनाएँ छपने लगीं। उन्होंने 'रूपाभ' नामक पत्रिका का संपादन भी किया। उनकी वैचारिकी पर कार्ल मार्क्स, महात्मा गाँधी, रवीन्द्रनाथ टैगोर तथा अरविन्द के विचारों का असर अलग–अलग समय पर पड़ा। उन्हें ढेर सारे पुरस्कार और सम्मान प्राप्त हुए – भारतीय ज्ञानपीठ पुरस्कार, साहित्य अकादमी पुरस्कार, सोवियत लैंड नेहरु पुरस्कार, पद्मभूषण, डालमिया पुरस्कार, देव पुरस्कार, द्विवेदी पदक आदि।

उनकी रचनाओं की सूची इस प्रकार है –

BHDE-144_2nd Proof.indd 218 3/23/2022 12:54:39 PM

काव्य–कृतियाँ

वीणा (1927) , ग्रन्थि(1920/1929), पल्लव (1926), गुंजन (1932) , युगान्त (1936), युगपथ (1949), युगवाणी (1939), ग्राम्या (1940), स्वर्णकिरण (1947), स्वर्णधूलि (1947), मधुज्वाल (1947), उत्तरा (1949), रजत–शिखर (1952), शिल्पी (1952), सौवर्ण (1956), अतिमा (1955), किरण–वीणा (1967), वाणी (1958), कला और बूढ़ा चाँद (1959), पौ फटने से पहिले (1967), पतझर (एक भाव–क्रान्ति दृ 1967), गीतहंस (1969), लोकायतन (1965) शंखध्वनि (1971), शशि की तरी (1971), समाधिता (1973), आस्था (1973), सत्यकाम (1975), गीत–अगीत (1977), संक्रांति (1977)

नाट्य–कृतियाँ

ज्योत्स्ना (1934), परी (जनवरी, 1925), जिन्दगी का चौराहा (1939), अस्पृश्या (1937), स्रष्टा (1938), करमपुर की रानी (1949), चौराहा (1948), शकुन्तला (1948), युग–पुरुष (1948), छाया (1948)

कहानी–संग्रह : पाँच कहानियाँ (1936)

उपन्यास : हार (1917)

निबन्ध : छायावाद पुनर्मूल्यांकन (1965), शिल्प और दर्शन (1961), कला और संस्कृति (1965), साठ वर्ष : एक रेखांकन (1969)

11.2 चयनित कविता का पाठ और विश्लेषण

एक

भारतमाता

भारतमाता
ग्रामवासिनी!
खेतों में फैला है श्यामल
धूल भरा मैला–सा आँचल,
गंगा यमुना में आँसू जल,
मिट्टी की प्रतिमा
उदासिनी!

दैन्य जड़ित अपलक नत चितवन
अधरों में चिर नीरव रोदन,
युग युग के तम से विषण्ण मन,
वह अपने घर में
प्रवासिनी!

तीस कोटि संतान नग्न तन,
अर्ध क्षुधित, शोषित निरस्त्र जन,
मूढ़, असभ्य, अशिक्षित, निर्धन,
नत मस्तक
तरु तल निवासिनी!

स्वर्ण शस्य पर–पद–तल लुण्ठित,
धरती–सा सहिष्णु मन कुण्ठित,

BHDE-144_2nd Proof.indd 219 3/23/2022 12:54:39 PM

क्रन्दन कम्पित अधर मौन स्मित,
राहु ग्रसित
शरदेन्दु हासिनी।

चिन्तित भृकुटि क्षितिज तिमिरांकित,
नमित नयन नभ वाष्पाच्छादित,
आनन श्री छाया शशि उपमित,
ज्ञान मूढ़
गीता प्रकाशिनी!

सफल आज उसका तप संयम,
पिला अहिंसा स्तन्य सुधोपम,
हरती जन–मन भय, भव तम भ्रम,
जग जननी
जीवन विकासिनी!

(जनवरी, 1940, ग्राम्या)

सन्दर्भ और प्रसंग

सुमित्रानंदन पंत ने 'भारतमाता' शीर्षक कविता की रचना जनवरी, 1940 में की थी। यह कविता 'ग्राम्या' (1940) काव्य–संग्रह में संगृहीत हुई। प्रस्तुत कविता पराधीन भारत में देश की छवि को चित्रित करने के उद्देश्य से लिखी गयी है। पंत ने भारत की दुर्दशा को माता के रूपक से प्रस्तुत किया है। बंकिम चन्द्र के उपन्यास 'आनंदमठ' में संकलित 'वन्दे मातरम' गीत में निहित भाव से भी इस कविता की तुलना की जा सकती है। बंकिम ने 'माता' की छवि में सुंदरता देखी थी, परन्तु पंत ने दुःख की कुरूपता देखी है। यह सही भी है कि पराधीन देश भला सुखी कैसे हो सकता है?

व्याख्या

सुमित्रानंदन पंत ने 'भारतमाता' शीर्षक कविता में स्वतंत्रता आन्दोलन की चेतना को व्यक्त किया है। यह कविता भारत की तत्कालीन दुर्दशा को चित्रित करती है। इस कविता में उस दौर की राजनीतिक चिंताओं को भी महसूस किया जा सकता है। गाँधी जी ने कहा था कि असली भारत गाँवों में बसता है। पंत कविता की शुरुआत इसी कथन से करते हैं कि भारतमाता 'ग्रामवासिनी' है। हमारा देश भारत हमारी माँ की तरह है और वह गाँव में रहनेवाली एक स्त्री–जैसी है। यह कविता देश और माँ के दुहरे अर्थ को समेटती हुई आगे बढ़ती है।

भारत के खेतों में खूब फसल होती है। हरी भरी खेती 'श्यामल' रंग की लगती है। लेकिन भारतमाता का आँचल धूल से भरा हुआ है। यहाँ यह बता देना प्रासंगिक होगा कि फणीश्वरनाथ रेणु ने अपने उपन्यास 'मैला आँचल' का शीर्षक इसी पंक्ति से लिया था – 'धूल भरा मैला–सा आँचल'। 'श्यामल' शब्द के दो अर्थ हैं। एक है – खूब हरा। और दूसरा अर्थ है – काला। भारत के खेतों में हरी–भरी फसल लगती है। यह भी अर्थ है कि किसानों पर हो रहे अत्याचारों के कारण खेतों में कालिमा बिखरी है, मानो फसलें जला दी गई हैं। खेतों में फैली हुई धूल मानो भारतमाता के मैले आँचल की तरह है। गंगा–जमुना जैसी नदियों में माता के आँसुओं की धारा बह रही है। उसकी छवि मिट्टी से बनी हुई उदास मूर्ति की तरह है।

अत्यधिक गरीबी की दुर्दशा ने भारतमाता के व्यक्तित्व को जड़ीभूत कर दिया है। ऐसा लगता है कि दुःख के कारण उसे काठ मार गया है। वह उदासी और निराशा के कारण

BHDE-144_2nd Proof.indd 220 3/23/2022 12:54:39 PM

निगाहें झुका कर नीचे की तरफ एकटक देख रही है। उसके होठों पर अब रुलाई भी निःशब्द हो गई है। लंबे समय से रोते रहने के कारण अब वह थक कर बे–आवाज हो गई है। अब उसके होंठों पर रुलाई तो है मगर बिना आवाज की! कई शताब्दियों की पराधीनता के अंधकार से घिरा उसका मन मानो अवसाद–विषाद में डूब चुका है। आज वह अपने घर में ही बाहर के व्यक्ति की तरह रहने को विवश है। सत्ता अँग्रेजों की है और वे इस देश के साथ निश्चित रूप से पराया व्यवहार कर रहे हैं।

भारतमाता की तीस करोड़ संतानें भोजन, वस्त्र और आवास जैसी बुनियादी सुविधाओं के लिए तरस रही हैं। भारत के लोग 'नग्न तन' हैं अर्थात् वस्त्र के अभाव से जूझ रहे हैं। वे 'अर्ध क्षुधित' हैं अर्थात् पर्याप्त भोजन न मिल पाने के कारण उनकी आधी भूख सदैव बनी रह जा रही है। वे शोषित हैं और साधनविहीन (निरस्त्र) हैं। भारत माता की संतानें गरीबी, अशिक्षा और अभाव के बीच रहते हुए अनेक प्रकार के पिछड़ेपन का शिकार हो गई हैं। वे 'मूढ़', 'असभ्य', 'निर्धन' और 'अशिक्षित'–जैसे विशेषणों से पुकारी जा रही हैं। जिस माता की संतानें इतनी सारी परेशानियों के बीच जीवन बिता रही हों वह शर्म के मारे सिर उठा नहीं पा रही है। उसका आत्मविश्वास समाप्त हो चुका है। वह स्वयं आश्रयविहीन होकर पेड़ों के नीचे निवास करने को विवश हो गयी है।

हालाँकि उसके खेतों में भरपूर उपज होती है। फसलें पक जाने के बाद सोने के रंग की मालूम पड़ती हैं। मगर दुःख की बात यही है कि किसानों को लूटने वाले देशी–विदेशी लुटेरे चारों तरफ से घेरे हुए हैं। सोने की तरह लगनेवाली इन फसलों को भारत माता से छीन लिया जाता है। 'पर–पद–तल लुण्ठित' का अर्थ हुआ – दूसरों के पैरों के नीचे रौंदा हुआ। यह सब देख कर धरती की तरह सहनशील भारतमाता का मन अवसाद से भर जाता है। दुःख की निरंतरता ने उसके होंठों की हँसी ('स्मित') को छीन लिया है और रुलाई की थकान ने अब कंपन का रूप धारण कर लिया है। ऐसा लगता है मानो शरद ऋतु के चाँद को राहु ने ग्रस लिया है। भारतमाता के चेहरे पर हँसी ऐसी लगती थी मानो शरद पूर्णिमा का चाँद खिला हो! आज राहु के ग्रस लेने से लगे चंद्रग्रहण की तरह भारतमाता की छवि निस्तेज लग रही है।

भारतमाता की भृकुटि पर चिंता की रेखाएँ आज साफ–साफ झलक रही हैं। उसे समझना हो तो क्षितिज पर फैले हुए अंधकार को देखा जा सकता है। अर्थात् क्षितिज पर फैला हुआ अँधेरा भारतमाता की भृकुटि पर खिंची हुई चिंता की रेखाओं की तरह है। आकाश में फैली हुई नमी मानो माता की झुकी हुई आँखों में आँसुओं का ताना–बाना है। चाँद की उपमा से विभूषित माता का चेहरा आज छाया के अँधेरे से ग्रसित है। यद्यपि वह गीता के ज्ञान के प्रकाश से युक्त रही है मगर आज वह ज्ञान के आगे अज्ञानी ('मूढ़') की तरह समझी जा रही है या घोषित की जा रही है। भारत की छवि एक अशिक्षित देश की बना दी गयी है।

इन तमाम निराशाओं के बीच आशा की किरणें भी दिखाई पड़ती हैं। भारत माता की संतानें दुर्दशा से मुक्त होने के लिए संघर्ष कर रही हैं। आज उसका तप और संयम मानो सफल होना चाहता है। उसने अपनी संतानों को अहिंसा का अमृततुल्य दूध ('स्तन्य') पिलाया है। यहाँ यह संकेत है कि भारतीय स्वतंत्रता संघर्ष में सत्य–अहिंसा के गाँधीवादी सिद्धांतों का उपयोग किया गया है। भारतमाता ने अपनी संतानों को सहनशील और संघर्षशील बनाया है। वह भारतवासियों के मन के भय को दूर कर रही है। वह अपनी संतानों के मन में बसे भ्रमों और संदेहों को दूर कर रही है। वह सचमुच सबकी माता है और इस तरह वह सब के जीवन के विकास की प्रेरणा बन रही है।

'भारत माता' शीर्षक कविता प्रगतिवादी दौर में लिखी गई है। इसमें यथार्थवाद की विशेषताओं को देखा जा सकता है। पंत ने भारत की दुर्दशा की सच्ची तस्वीर प्रस्तुत की है। छायावादी छाप इस कविता की भाषा पर मौजूद है, मगर अपनी भाव योजना में प्रगतिवादी रुझान लिए हुए है।

BHDE-144_2nd Proof.indd 221 3/23/2022 12:54:39 PM

कठिन शब्द

श्यामल – हरा या काला; **आँचल** – क्षेत्र, खेत साड़ी का आँचल; **दैन्य जड़ित** – गरीबी के कारण उदास और निश्चेष्ट; **नत चितवन** – निराशा से निगाहें झुकाए हुए; **चिर नीरव रोदन** – लम्बे समय से रोते रहने के कारण निःशब्द हो चुकी रुलाई; **विषण्ण मन** – अवसाद से भरा हुआ मन; **प्रवासिनी** – दूसरे के घर या क्षेत्र; **तीस कोटि** – तीस करोड़; **अर्ध क्षुधित** – जिसकी भूख पूरी तरह मिटी न हो; **निरस्त्र** – अस्त्र–विहीन, साधन विहीन; **तरु तल निवासिनी** – पेड़ के नीचे रहनेवाली, आश्रयविहीन; **पर–पद–तल लुंठित** – दूसरे के पैरों के नीचे कुचला हुआ; **राहु ग्रसित** – राहु के द्वारा जिसे ग्रास लिया गया हो, चंद्रग्रहण के अर्थ में; **शरदेन्दु हासिनी** – शरत पूर्णिमा के चाँद की तरह हँसनेवाली; **तिमिरांकित** – अंधकार से भरा हुआ; **शशि उपमित** – जिसके लिए चाँद की उपमा दी जाती हो; **ज्ञान मूढ़** – अज्ञानी गीता; **प्रकाशिनी** – गीता–जैसे महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ के ज्ञान से युक्त; **स्तन्य** – माँ का दूध; **सुधोपम** – अमृत–तुल्य।

काव्य सौष्ठव / विशेष

- यह कविता भारत की दीन–हीन छवि को दिखाकर भारतवासियों में स्वतंत्रता की चिंता पैदा करना चाहती है।
- 'वन्दे मातरम' की सुंदर छवि से भिन्न भारत की एक यथार्थ तस्वीर दिखाने का प्रयास यहाँ किया गया है।
- प्रगतिवाद की वैचारिकी ने इस कविता को जनता के बुनियादी सवालों से जोड़ा है।
- 16 मात्राओं की पंक्तियों से इस कविता का निर्माण हुआ है।

सारांश

पंत ने 'भारतमाता' के पराधीन रूप को व्यक्त करते हुए यह आशा व्यक्त की है कि सत्य–अहिंसा के मार्ग पर चलनेवाला स्वतंत्रता आन्दोलन उसके सब दुखों का अंत कर देगा।

बोध प्रश्न– 1

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

i. 'भारतमाता' शीर्षक कविता किस पुस्तक में है?

क) पल्लव   ख) वीणा   ग) गुंजन   घ) ग्राम्या

ii. 'भारतमाता' शीर्षक कविता किस दौर की कविता है?

क) छायावादी   ख) प्रगतिवादी   ग) प्रयोगवादी   घ) रीतिवादी

iii. 'भारतमाता ग्रामवासिनी' में कौन–सा अलंकार है?

क) उपमा   ख) रूपक   ग) अन्योक्ति   घ) उत्प्रेक्षा

iv. 'स्तन्य' का क्या अर्थ है?

क) सुबह   ख) क्षितिज   ग) धरती   घ) माँ का दूध

v. 'भारतमाता' कविता में 'धूल भरा मैला–सा' क्या फैला है?

क) आकाश   ख) मैदान   ग) आँचल   घ) रास्ता

vi. 'ग्राम्या' काव्य–संग्रह का प्रकाशन कब हुआ था ?

क) 1925   ख) 1940   ग) 1936   घ) 1945

BHDE-144_2nd Proof.indd 222   3/23/2022 12:54:39 PM

बोध प्रश्न –2

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दें।

1. 'भारत माता' शीर्षक कविता में किस विषय पर विचार किया गया है ?

....

....

....

2. 'भारत माता' की तीस करोड़ संतान किस अवस्था में जीवन–यापन कर रही थी?

....

....

....

3. 'भारत माता' कविता और 'वन्दे मातरम' गीत के बीच में किस तरह का सम्बन्ध देखा जा सकता है?

....

....

....

4. 'भारतमाता' कविता में छायावाद और प्रगतिवाद के रिश्ते को किस तरह से देखा जा सकता है?

....

....

....

11.3 उपयोगी पुस्तकें

1. **छायावाद** – नामवर सिंह, राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली
2. **आधुनिक साहित्य की प्रवृत्तियाँ** – नामवर सिंह, लोकभारती प्रकाशन, नयी दिल्ली
3. **सुमित्रानंदन पंत ग्रन्थावली (कुल सात खंड)** – राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली
4. **छायावादी काव्य–कोश** – कमलेश वर्मा, सुचिता वर्मा, द मार्जिनलाइज्ड प्रकाशन, मैदान गढ़ी, दिल्ली

11.4 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न – 1

i. घ

ii. ख

iii. ख

iv. घ

v. ग

vi. ख

BHDE-144_2nd Proof.indd 223 3/23/2022 12:54:39 PM

बोध प्रश्न –2

1. 'भारत माता' शीर्षक कविता 1940 में लिखी गयी थी। उस समय हमारा देश पराधीन था। देश की दुर्दशा को व्यक्त करते हुए कवि ने अंत में उम्मीद जताई है कि सत्य–अहिंसा के मार्ग पर चलते हुए हमारा देश स्वतंत्र होगा।

2. 'भारत माता' शीर्षक कविता के अनुसार इस देश की तीस करोड़ आबादी 'नग्न तन' थी अर्थात् उसके पास पर्याप्त कपड़े नहीं थे। वह आधा पेट भोजन प्राप्त कर पाती थी। वह शोषित थी और साधन–विहीन होकर अपना जीवन गुजार रही थी। शिक्षा और धन के अभाव में वह ढेर सारी बुराइयों से युक्त होकर 'मूढ़', 'असभ्य', 'अशिक्षित' और 'निर्धन' कही जा रही थी।

3. 'भारत माता' कविता में पराधीन भारत की दुर्दशा का चित्रण है, जबकि 'वन्दे मातरम' गीत में देश की प्रशंसा की गयी है. बंकिम ने 'सुजलां सुफलां शस्य श्यामलां' कह कर बताया है कि हमारी धरती जल–फल और फसल से युक्त है। पंत ने 'खेतों में फैला है श्यामल/धूल भरा मैला–सा आँचल' लिख कर यह बताया है कि हमारी धरती बदहाली से गुजर रही है।

4. 'भारत माता' कविता 1940 में लिखी गयी थी, इसलिए इसे प्रगतिवादी कालखंड की कविता मानना चाहिए। इस कविता में भारत की दुर्दशा को जिस यथार्थ चेतना के साथ व्यक्त किया गया है वह प्रगतिवाद की देन है। मगर इस कविता की काव्य–भाषा की बनावट छायावादी है।

BHDE-144_2nd Proof.indd 224 3/23/2022 12:54:39 PM

इकाई 12 काव्य वाचन एवं विश्लेषण 'मधुर मधुर मेरे दीपक जल' और 'बीन भी हूँ मैं तुम्हारी रागिनी भी हूँ'

इकाई की रूपरेखा

12.0 उद्देश्य

12.1 प्रस्तावना

12.2 चयनित कविताओं का पाठ और विश्लेषण

12.3 उपयोगी पुस्तकें

12.4 बोध प्रश्नों के उत्तर

12.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आपः

- महादेवी वर्मा की दो कविताओं की विस्तृत व्याख्या कर सकेंगी/सकेंगे;
- महादेवी वर्मा की कविताओं की व्याख्या की दिशाओं को जान सकेंगी/सकेंगे;
- इन कविताओं के माध्यम से छायावाद की विशिष्टताओं को समझ सकेंगी/सकेंगे;
- महादेवी वर्मा की काव्य–भाषा को समझने का प्रयास कर सकेंगी/सकेंगे; और
- महादेवी वर्मा की शब्द–योजना और शब्दावली को जान सकेंगी/सकेंगे।

12.1 प्रस्तावना

महादेवी वर्मा का जन्म 1907 में फर्रुखाबाद में हुआ था। इनकी पढ़ाई–लिखाई इंदौर और इलाहाबाद में हुई थी। इलाहाबाद में स्थित प्रयाग महिला विद्यापीठ में वे प्रधानाचार्या के पद पर कार्यरत रहीं। उनकी मृत्यु 1987 में हुई।

महादेवी वर्मा ने कविता के अलावा सशक्त गद्य भी लिखा था। उनकी गद्य रचनाएँ भाषा और विचार की दृष्टि से अत्यंत परिपक्व मानी जाती हैं। 'शृंखला की कड़ियाँ' के लेखों में उन्होंने स्त्री–मुक्ति के प्रश्नों को जिस स्तर पर उठाया था वह आश्चर्यजनक है। मैनेजर पाण्डेय ने इस पुस्तक को रेखांकित करते हुए लिखा है कि सिमोन द बोउवार की पुस्तक 'द सेकेण्ड सेक्स' के प्रकाशन से भी पहले महादेवी की यह पुस्तक प्रकाशित हो चुकी थी और इसके लेख तो और भी पहले प्रकाशित हो चुके थे. महादेवी वर्मा ने 'चाँद' पत्रिका के 'विदुषी अंक' का सम्पादन 1935 में किया था। यह अंक हिन्दी में हुए स्त्री–विमर्श की परम्परा में विशेष महत्त्व रखता है। यह अंक उस जमाने में आया था जब इस तरह के विषय पर सोच–विचार की प्रवृत्ति आम नहीं थी। महादेवी का वैचारिक गद्य लेखन महत्त्वपूर्ण है।

छायावाद और रहस्यवाद की कवि के रूप में महादेवी वर्मा का स्थान अक्षुण्ण है। उनके पाँच काव्य–संग्रहों की कविताओं में छायावादी–रहस्यवादी प्रवृत्तियाँ तो हैं ही, उनमें स्त्री की पीड़ा और मुक्ति के प्रसंग भरे पड़े हैं। इनमें पीड़ा का विवरण भी व्यक्तित्व की दृढ़ता को व्यक्त करने के लिए किया गया है। इनमें प्रेम और प्रेमी का जिक्र भी मुक्ति के प्रतीक के रूप में किया गया है। महादेवी कोरी भावुकता की कविताएँ नहीं लिखती हैं. उनकी कविताओं में वैचारिक दृढ़ता हमेशा बनी रही।

BHDE-144_2nd Proof.indd 225 3/23/2022 12:54:39 PM

काव्य–कृतियाँ

नीहार (1930), रश्मि (1932), नीरजा (1935), सांध्यगीत (1936), दीपशिखा (1942), हिमालय (1963), सप्तपर्णा (अनूदित – 1966), प्रथम आयाम (1982), अग्निरेखा (1990)

गद्य–कृतियाँ

अतीत के चलचित्र (रेखाचित्र – 1941), श्रृंखला की कड़ियाँ (नारी–विषयक सामाजिक निबंध – 1942), स्मृति की रेखाएँ (रेखाचित्र – 1943), पथ के साथी (संस्मरण – 1956), क्षणदा (ललित निबंध – 1956), साहित्यकार की आस्था तथा अन्य निबंध (आलोचनात्मक – 1960), संकल्पिता (आलोचनात्मक – 1969), मेरा परिवार (पशु–पक्षियों के संस्मरण – 1971), चिंतन के क्षण (1986)

संकलन

यामा (नीहार, रश्मि, नीरजा, सांध्यगीत का संग्रह – 1936), संधिनी (कविता–संग्रह – 1964), स्मृतिचित्र (गद्य–संग्रह – 1966), महादेवी साहित्य (भाग – 1 – 1969), महादेवी साहित्य (भाग – 2 – 1970), महादेवी साहित्य (भाग – 3 – 1970), गीतपर्व (कविता–संग्रह – 1970), स्मारिका (1971), परिक्रमा (कविता–संग्रह – 1974), सम्भाषण (कविता–संग्रह – 1975), मेरे प्रिय निबंध (निबंध–संग्रह – 1981), आत्मिका (कविता–संग्रह – 1983), नीलाम्बरा (कविता–संग्रह – 1983), दीपगीत (कविता–संग्रह – 1983)

12.2 चयनित कविताओं का पाठ और विश्लेषण

एक

मधुर मधुर मेरे दीपक जल

मधुर–मधुर मेरे दीपक जल!
युग युग प्रतिदिन प्रतिक्षण प्रतिपल,
प्रियतम का पथ आलोकित कर!

सौरभ फैला विपुल धूप बन,
मृदुल मोम सा घुल रे मृदु तनय
दे प्रकाश का सिन्धु अपरिमित,
तेरे जीवन का अणु गल–गल!
पुलक–पुलक मेरे दीपक जल!

सारे शीतल कोमल नूतन,
माँग रहे तुझसे ज्वाला कण
विश्व–शलभ सिर धुन कहता 'मैं
हाय, न जल पाया तुझमें मिल'!
सिहर सिहर मेरे दीपक जल!

जलते नभ में देख असंख्यक,
स्नेहहीन नित कितने दीपकय
जलमय सागर का उर जलताय
विद्युत ले घिरता है बादल!

BHDE-144_2nd Proof.indd 226 3/23/2022 12:54:40 PM

विहँस–विहँस मेरे दीपक जल!
द्रुम के अंग हरित कोमलतमय
ज्वाला को करते हृदयंगमय
वसुधा के जड़ अन्तर में भी
बन्दी है तापों की हलचल!
बिखर–बिखर मेरे दीपक जल!

मेरे निश्वासों से द्रुततर,
सुभग न तू बुझने का भय कर।
मैं अंचल की ओट किये हूँ
अपनी मृदु पलकों से चंचल!
सहज–सहज मेरे दीपक जल!

सीमा ही लघुता का बन्धन,
है अनादि तू मत घड़ियाँ गिनय
मैं दृग के अक्षय कोषों से –

तुझमें भरती हूँ आँसू–जल!
सहज–सहज मेरे दीपक जल!

तम असीम तेरा प्रकाश चिर,
खेलेंगे नव खेल निरन्तरय
तम के अणु–अणु में विद्युत–सा –
अमिट चित्र अंकित करता चल
सरल–सरल मेरे दीपक जल!

तू जल–जल जितना होता क्षय,
यह समीप आता छलनामयय
मधुर मिलन में मिट जाना तू
उसकी उज्जवल स्मित में घुल खिल!
मंदिर–मंदिर मेरे दीपक जल!
प्रियतम का पथ आलोकित कर!

सन्दर्भ और प्रसंग

'मधुर मधुर मेरे दीपक जल!' शीर्षक कविता महादेवी वर्मा के काव्य–संग्रह 'नीरजा' (1935) में संगृहीत है. महादेवी वर्मा की ज्यादातर कविताओं को गीत की कोटि में रखा जाता है। इस कविता/गीत में महादेवी वर्मा ने दीपक को साधक के प्रतीक के रूप में चित्रित किया है. उनकी कई कविताओं में दीपक को साधक के रूप में प्रतीक बनाया गया है। दीपक मानो महादेवी वर्मा की भी साधना का प्रतीक है. इस तरह यह दीपक व्यक्तिगत रूप से कवि की साधना का और सार्वजनिक रूप से किसी भी साधक की साधना का प्रतीक है। कवि ने दीपक को संबोधित करके यह बात कही है कि एक साधक को किस तरह का होना चाहिए! एक तरह से वे दीपक को या अपनी साधना को या किसी भी साधक को समझा रही हैं कि एक साधक को कैसा होना चाहिए? उसके सार्थक होने की कसौटी क्या है? उसे अपने व्यक्तित्व को कैसा बनाना चाहिए?

BHDE-144_2nd Proof.indd 227 3/23/2022 12:54:40 PM

व्याख्या

हे मेरे दीपक! तुम्हें मधुरता के साथ अपने काम में लगे रहना चाहिए! तुम मधुर भाव से प्रज्ज्वलित रहो! समय की छोटी–से–छोटी इकाई हो या बड़ी–से–बड़ी इकाई, तुम्हारा कर्तव्य यही है कि तुम अपने प्रियतम के पथ को प्रकाश से भर कर सुगम बनाए रखो! यह काम एक पल का हो या एक क्षण का या युग–युग का, इससे तुम पर कोई फर्क नहीं पड़ना चाहिए।

हे मेरे दीपक! तुम प्रेम के वशीभूत होकर जलते रहो और हर क्षण पुलक से भरे रहो! तुम्हारे जलने से जो सुगंध फैलेगी उसे धूप की तरह फैला दो! मैं जानती हूँ कि तुम कोमल हो! कोई बात नहीं, घबराने की कोई जरूरत नहीं! अपने कोमल तन को नर्म मोम की तरह पिघल जाने दो! इसी में इस शरीर की सार्थकता है। तुम अपने जीवन के कण–कण को गलाकर इतना प्रकाश फैला दो कि लगे कि रोशनी का अपार समुद्र फैला है।

इस दुनिया में जो भी शीतल है, कोमल है और नवीनता से भरा है। वे सब चाहते हैं कि तुम अपनी ज्वाला के कण उन्हें प्रदान करो! वे सब तुमसे साधना की ऊर्जा माँगते हैं। तुम्हारी साधना अब उस ऊँचाई पर पहुँच चुकी है कि तुम्हें चाहने वाले संसार के प्रेमीजन तुम्हें प्रेम भरी दृष्टि से देख रहे हैं और मानो पछता रहे हैं कि दीपक की लौ में मिलकर न्यौछावर हो जाने वाले शलभ की तरह मैं क्यों नहीं हो पाया? प्रेम की इस अलौकिक अनुभूति में हे मेरे दीपक तुम सिहर–सिहर कर जलो!

पूरा संसार जलन से भरा है। न जाने कितनी पीड़ा भरी हुई है! देखो, आकाश में असंख्य तारे हैं, वे रोज जलते हैं और निस्तेज होकर बुझ जाते हैं। अपार जलराशि से भरा हुआ समुद्र तारों के प्रतिबिम्ब के साथ ऐसा दिखता है मानो समुद्र का हृदय किसी ज्वाला में जल रहा है। बादलों को भी देखो! उनके भीतर भी बिजली की जलन कौंधती रहती है। जलन और पीड़ा से भरे हुए इस संसार को सुख पहुँचाने के लिए हे मेरे दीपक! तुम एक साधक की तरह लगे रहो, मगर मुस्कुराते हुए! साधना के मार्ग पर जलते रहना तुम्हारी नियति है, मगर मुस्कुराते रहना तुम्हारी कोशिश है!

यूँ तो पेड़–पौधे हरे–भरे होते हैं। मगर काष्ठ में अग्नि का वास होता है। यह बात बहुत पहले ही बतायी गई थी कि लकड़ी में आग बसती है। आश्चर्य होता है कि हरे पौधे के हृदय में ज्वाला बसी होती है। यह धरती ऊपर से कितनी सुंदर, सजल और सुखद लगती है मगर इसके भीतर भी सुशुप्त अवस्था में आग बसी हुई होती है। वैसे तो तापों की यह हलचल बंद पड़ी रहती है, मगर न जाने कब ज्वालामुखी बनकर फूट पड़े! इन सबके बीच हे मेरे दीपक तुम्हें पहुँचना है। तुम अपनी साधना को विस्तार देते हुए इन सबके बीच पहुँचो! इन सबको तुम्हारे स्नेह–प्रेम की आवश्यकता है।

अपने दीपक का मनोबल बढ़ाती हुई महादेवी वर्मा कहती हैं कि तुम अपने बुझ जाने के बारे में किसी प्रकार का डर मत पालो! हालाँकि जीवन–पथ पर मेरी साँसें तेज चल रही है और तुम मेरी हथेली पर हो! मगर तुम अपने आप में सौभाग्य से भरे हुए हो, तुम बुझ जाने का डर मत पालो। मैं अपने आँचल से तुम्हारे लिए ओट किए हुए हूँ। मेरी आँखों में दीपक की तरह जो पुतली प्रकाशित रहती है उसे अपनी पलकों से सुरक्षा प्रदान करती रहती हूँ इसलिए हे मेरे दीपक! तुम जरा भी मत डरो! और सहज भाव से अपने साधना–पथ पर अग्रसर रहो!

साधना अनादि काल से चली आ रही है। उस प्रियतम के लिए चलने वाली साधना का कोई ओर–छोर नहीं है। हे मेरे दीपक! सीमाओं में बँध जाना ही लघुता है अन्यथा

BHDE-144_2nd Proof.indd 228 3/23/2022 12:54:40 PM

उस प्रियतम की तरह ही साधना भी असीम और अनंत है! तुम न जाने कब से साधना में लगे हो! जब तुम अनादि काल से अपनी साधना में लीन हो ही तब यह सोचने की जरूरत क्या कि कितनी घड़ियाँ बीत गयीं या कितनी अभी बितानी हैं? तुम यह मत सोचना कि अग्नि प्रज्ज्वलित रखने के लिए ईंधन कहाँ से मिलता रहेगा? सुनो, मेरी आँखों में आँसुओं का अपार भंडार भरा हुआ है। मैं ईंधन के रूप में अपने आँसुओं को देती रहूँगी और तुम करुणा से आप्लावित होकर जलते रहना! तुम्हें कोई देखे तो समझ जाए तुम्हारी लौ में किसी की छलछलाती हुई आँखें बसी हैं!

दुनिया में असीमित अँधेरा है और तुममें न बुझनेवाला प्रकाश! इस अंधकार और प्रकाश के बीच न जाने कितने नए–नए खेल खेले जाएँगे। हे मेरे दीपक! यह संघर्ष चलता रहेगा, तुम्हारी भूमिका यही है कि तू अंधकार के प्रत्येक अणु पर प्रकाश की अमिट चित्रकारी करता चल! इसके लिए बहुत धैर्य की जरूरत है। इसलिए तुम सहज के साथ–साथ सरल बनकर अपना काम करते चलो!

यह बात सही है कि तुम जितना जलते हो उतना ही घटते जाते हो। मगर यह भी सच है तुम्हारा प्रियतम भी उसी अनुपात में तुम्हारे करीब आ जाता है। हालाँकि वह प्रियतम स्वभावतः छलनामय है, उसकी उपस्थिति को वास्तविक रूप से परिभाषित नहीं किया जा सकता, मगर अनुभूति के स्तर पर उसके समीप होने को स्वीकारा जा सकता है। हे मेरे दीपक! उस प्रियतम से जब तुम्हारा मधुर मिलन होगा तब तुम उस पर पूरी तरह न्यौछावर हो जाना। उसकी निर्मल मुस्कान में पूरी प्रसन्नता के साथ घुल–मिल जाना। इसके लिए जरूरी है कि अपने प्रियतम की प्रतीक्षा का नशा अपने भीतर उत्पन्न करना होगा! इसके लिए तुम्हें मदिर भाव से साधनारत रहना पड़ेगा और अपने अनंत प्रियतम के पथ को आलोकित रखने का संकल्प बनाए रखना होगा!

कठिन शब्द

मेरे दीपक – मेरी साधना या भावना के प्रतीक दीपक; **प्रियतम का पथ** – उस अज्ञात प्रियतम के आने के मार्ग को (प्रकाशित करो); **विश्व–शलभ** – विश्व–रूपी फतिंगा या साधक; **असंख्यक** – अनगिनत; **स्नेहहीन निस्तेज**–जलमय सागर –जल की शीतलता से युक्त विराट समुद्र; **द्रुततर** – तेज गति से चलनेवाली (साँसें); **सुभग** –सुंदर सौभाग्य; **लघुता का बंधन** – सीमा में बँधा होना, ससीमता; **मदिर** – नशे में।

काव्य सौष्ठव / विशेष

- इस कविता में दीपक साधक का प्रतीक है।
- व्यक्तिगत जीवन की साधना और सार्वजनिक जीवन की साधना – इन दोनों रूपों को यह कविता व्यक्त करती है।
- साधक को जिन प्रक्रियाओं से गुजरते हुए अपनी साधना करनी होगी उनके लिए इस कविता में आए हुए शब्द हैं – मधुर, पुलक, सिहर, विहँस, बिखर, सहज, सजल, सरल, मदिर।
- अनंत के प्रति रागात्मक भाव के साथ–साथ जीवन–संघर्ष को भी यह कविता प्रस्तुत करती है। दीपक की साधना एक सामान्य मनुष्य के जीवन–संघर्ष को भी प्रतिबिंबित कर रही है।
- 16–16 मात्राओं की पंक्तियों का प्रयोग पूरी कविता में हुआ है।
- 5–5 पंक्तियों के कुल 8 चरण इस कविता में हैं। प्रत्येक चरण की तीसरी पंक्ति की अंतिम मात्रा दीर्घ है, शेष के अंत में ह्रस्व है। अपवादस्वरूप केवल पहले चरण की तीसरी पंक्ति के अंत में ह्रस्व है – 'अपरिमित'

BHDE-144_2nd Proof.indd 229 3/23/2022 12:54:40 PM

सारांश

साधक को संकल्प के प्रति प्रतिबद्धता रखनी चाहिए। साधना के मार्ग में कठिनाइयाँ हमेशा आती रही हैं। उन सबका सामना संयम और आत्मविश्वास से करना चाहिए। अपने लक्ष्य से आत्मसात हो जाने तक यह संघर्ष चलता रहता है।

दो

'बीन भी हूँ मैं तुम्हारी रागिनी भी हूँ'

बीन भी हूँ मैं तुम्हारी रागिनी भी हूँ!
नींद थी मेरी अचल निस्पन्द कण कण में,
प्रथम जागृति थी जगत के प्रथम स्पन्दन में;
प्रलय में मेरा पता पदचिह्न जीवन में,
शाप हूँ जो बन गया वरदान बन्धन में,
कूल भी हूँ कूलहीन प्रवाहिनी भी हूँ!

नयन में जिसके जलद वह तृषित चातक हूँ,
शलभ जिसके प्राण में वह ठिठुर दीपक हूँ,
फूल को उर में छिपाये विकल बुलबुल हूँ,
एक हो कर दूर तन से छाँह वह चल हूँ,
दूर तुमसे हूँ अखण्ड सुहागिनी भी हूँ!

आग हूँ जिससे ढुलकते बिन्दु हिमजल के,
शून्य हूँ जिसको बिछे हैं पाँवड़े पल के,
पुलक हूँ वह जो पला है कठिन प्रस्तर में;
हूँ वही प्रतिबिम्ब जो आधार के उर में हूँ;
नील घन भी हूँ सुनहली दामिनी भी हूँ!

नाश भी हूँ मैं अनन्त विकास का क्रम भी,
त्याग का दिन भी चरम आसक्ति का तम भी
तार भी आघात भी झंकार की गति भी
पात्र भी मधु भी मधुप भी मधुर विस्मृत भीय
अधर भी हूँ और स्मित की चाँदनी भी हूँ!

सन्दर्भ और प्रसंग

'बीन भी हूँ मैं तुम्हारी रागिनी भी हूँ!' शीर्षक कविता महादेवी वर्मा के काव्य–संग्रह 'नीरजा' (1935) में संगृहीत है। इस कविता में महादेवी ने दार्शनिक मतों का सहारा लेकर भेद में अभेद की स्थापना की है। यह यात्रा द्वैत से अद्वैत की तरफ है। इस कविता की सुंदरता इस बात में है कि इसका एक अर्थ रहस्यवादी ढंग से ईश्वरीय प्रेम का अर्थ देता है तो दूसरी तरफ स्त्री जीवन की पूर्णता का अर्थ देता है। स्त्री के बारे में यह बात कई तरह से कही गयी है कि वह 'आधी' है या 'अधूरी' है। वह पुरुष से जुड़कर पूर्ण होती है। इन भेदों को मिटाते हुए महादेवी स्त्री के व्यक्तित्व को अभेद और अद्वैत की तरह पूर्णता प्रदान करना चाहती हैं। महादेवी की अनेक कविताओं की तरह यह कविता भी 'मैं' शैली में लिखी गयी है, जो स्त्री की तरफ से कही गयी बात का बोध कराती है।

BHDE-144_2nd Proof.indd 230 3/23/2022 12:54:40 PM

व्याख्या

इस कविता में तर्क की पद्धति यह है कि मैं यह भी हूँ और वह भी हूँ। इस 'यह' और 'वह' से मिलकर पूर्णता का निर्माण होता है। महादेवी कई उदाहरण देकर बताना चाहती हैं कि जिन पक्षों से मिलकर किसी 'पूर्णता' की अवधारणा बनती है, उन सारे पक्षों को मिलाकर मेरे (स्त्री के) व्यक्तित्व का निर्माण हुआ है। भेद को प्रकट करनेवाले जितने पक्ष हैं उन सबको मिलाकर मैं 'अभेद' के व्यक्तित्व को प्राप्त करती हूँ। मैं 'द्वैत' की संभावना किसी दूसरे के साथ नहीं रखती, बल्कि अपने आप में मैं 'अद्वैत' को धारण करती हूँ।

मैं बीन भी हूँ और उससे निकलने वाली रागिनी भी हूँ। जिस वीणा को तुमने झंकृत किया है; वह वीणा तो मैं हूँ ही, उससे निकली हुई स्वर लहरी भी मैं ही हूँ। मेरे अखंड व्यक्तित्व को समझो!

प्रकृति में बसी हुई खामोशी और नींद मेरी ही थी। सब कुछ ठहरा हुआ था। कण–कण में यह ठहराव बसा हुआ था। तभी संसार में पहली हलचल हुई और जागृति के लक्षण दिखाई पड़े। यह जागृति भी मैं ही थी। नींद और जागरण का द्वैत मेरे व्यक्तित्व का ही हिस्सा था। इस तरह मैं न केवल नींद थी और न केवल जागृति! मैं इन दोनों के अद्वैत से निर्मित हुई हूँ। मुझे पूर्ण व्यक्तित्व के साथ समझो! न तो मैं 'आधी' हूँ और न ही 'अधूरी'। अगला उदाहरण देकर महादेवी बताती हैं कि मैं प्रलय भी हूँ और प्रलय में बची रहने वाली जीवन की निशानी भी! स्त्री के जीवन को 'अभिशाप' की तरह भी बताया गया है और प्रणय–सूत्र में बँधे हुए 'वरदान' की तरह भी! स्त्री उस नदी की तरह रही है जो अपने किनारों के बीच शांतिपूर्वक प्रवाहित होती है और प्रसंग आने पर तटों को तोड़कर बह जाने का साहस और रोष रखती है। ये सभी उदाहरण बताते हैं कि स्त्री का व्यक्तित्व एकांगी या एकतरफा नहीं है, बल्कि पूर्णता की सभी शर्तों का निर्वाह करने वाला है।

इसी ढंग से यह कविता आगे बढ़ती जाती है और अपनी बात को साबित करने के लिए महादेवी कई तरह के उदाहरण देती जाती हैं। मैं उस व्याकुल चातक पक्षी की तरह हूँ जिसकी आँखों में जल से भरे हुए बादल बसते हैं। मतलब यह कि मैं प्यास भी हूँ और पानी भी! मैं वह शलभ हूँ जिसके हृदय में दीपक बसा हुआ होता है। शलभ दीपक को प्रेम करता है, मगर वही निष्ठुर दीपक मिलन के समय उसकी मृत्यु का कारण बनता है। मतलब यह कि मैं प्रेमी भी हूँ और प्रेमास्पद को अपने व्यक्तित्व में शामिल किए हुए भी हूँ। मैं उस व्याकुल बुलबुल की तरह हूँ जिसके हृदय में उसका प्रिय फूल बसा होता है। हालाँकि मैं तुमसे दूर हूँ, मगर शरीर और चंचल छाया की तरह तुमसे सदा जुड़ी हुई हूँ। सुनने में भले असंगत लगे, मगर तुमसे दूर रहकर भी अपने को अखंड सौभाग्यवती मानती हूँ। महादेवी का आग्रह है कि स्त्री का सौभाग्य पुरुष पर आश्रित नहीं है, वह अपने आप में भाग्यशालिनी है।

पुनः अपनी तर्क–पद्धति पर आते हुए वे कहती हैं कि मैं उस आग की तरह हूँ जिससे ओस की बूँदें ढुलकती रहती हैं। मैं उस शून्य की तरह हूँ जिसमें क्षण की गति मौजूद है। कहते हैं कि शून्य में समय की गति रुक जाती है। मगर मेरा व्यक्तित्व शून्य और समय के दोनों छोरों से मिलकर बना है। मैं उस सिहरन की तरह हूँ जिसका निवास पत्थर में हो! पत्थर और सिहरन भिन्न छोर हैं, एक में जड़ता है और दूसरे में सूक्ष्मतम गति – मैं इन दोनों को समेटती हुई अपने व्यक्तित्व का निर्माण करती हूँ। मैं बिम्ब और प्रतिबिम्ब दोनों हूँ। मैं नीला बादल भी हूँ और उसमे चमकने वाली सुनहली बिजली भी!

नाश और विकास के बीच यह सृष्टि चलती रही है। इस क्रम को चलाने में मेरी महती भूमिका रही है। मैं त्याग–रूपी दिन भी हूँ और आसक्ति–रूपी रात भी। राग और विराग की सीमाओं के विस्तार के बीच मेरे व्यक्तित्व का निर्माण हुआ है। मैं वीणा में लगा हुआ

तार भी हूँ, उस पर पड़नेवाला आघात भी हूँ और उससे उत्पन्न होने वाली झंकार एवं उसकी गति भी हूँ। मैं प्याला भी हूँ, मदिरा भी हूँ, मदिरा पीनेवाला/पीनेवाली भी हूँ और इन सबसे उत्पन्न होनेवाले नशे की बेसुधी भी हूँ। मैं होंठ भी हूँ और होंठों पर खेलनेवाली मुस्कुराहट की उज्ज्वल चाँदनी भी हूँ।

इस तरह कई उदाहरणों की सहायता से महादेवी वर्मा इस बात पर जोर देती हैं कि स्त्री का व्यक्तित्व अपनी पूर्णता के लिए किसी पर आश्रित नहीं है!

कठिन शब्द

बीन – वीणा, जिसमें जीवन के राग समाए हैं; **रागिनी** – राग और रागिनी, सुर–ताल–लय में गायन की पद्धति; **अचल** – स्थिर; **निस्पंद कण कण** – गतिहीन जड़वत् प्रत्येक कण; **प्रथम–स्पन्दन में** – संसार की पहली गतिशीलता में, प्रभात का जागरण; **पता** – पहचान; **कूल** – किनारा, तट, सीमाबद्ध; **कूलहीन प्रवाहिनी** – तटों को तोड़कर बहने वाली नदी, सीमाओं से मुक्त; **तृषित चातक** – प्यासा चातक पक्षी, उत्कंठित प्रेमी; **निठुर दीपक** – निष्ठुर प्रेमी–जैसा दीपक, दीपक अपने प्रेम करनेवाले फतिंगे को जला देता है; चल – अस्थिर, गतिशीलता; **अखण्ड सुहागिनी** – अपने प्रिय के प्रेम को सदा–सदा पाते रहने का सौभाग्य; बिंदु हिमजल के – ओस की बूँदें; **पाँवड़े पल के** – शून्य के लिए पल (क्षण) के पाँवड़े (प्रिय के मार्ग में बिछाई गयी दरी/गलीचा आदि) पुलक –सिहरन (जो पत्थर में पली–बढ़ी है); **कठिन प्रस्तर** – कठोर पत्थर (जिसमें सिहरन पली–बढ़ी है); **आधार के उर में** – बिम्ब के हृदय में (बसा हुआ प्रतिबिम्ब); **सुनहली दामिनी** –सुनहले रंग की सुंदर आकाशीय बिजली होकर; **चरम आसक्ति का तम** – काम–चेतना के वशीभूत होकर किसी के प्रति आसक्ति मानो अंधकार की तरह है; **पात्र** –जाम, प्याला; **मधु** –मदिरा; **मधुप** – मदिरा पीनेवाला; **मधुर विस्मृति** – मदिरा के नशे में बहुत–सी बातों को भूल जाने का सुख; **स्मित की चाँदनी** –किसी की मुस्कुराहट से जो चाँदनी–सी बिखरती मालूम पड़ती है

काव्य सौष्ठव/विशेष

- यह कविता स्त्री के अधूरे व्यक्तित्व की अवधारणा को खारिज करती है.
- प्रकृति ने पुरुष और स्त्री को परस्पर निर्भर भी बनाया है और एक–दूसरे से स्वतंत्र भी। मगर स्त्री को प्रायः दूसरे स्थान पर रखकर बात की जाती रही है। यह कविता इस समझ को गलत सिद्ध करती है।
- जेंडर के आधार पर किसी को अधूरा सिद्ध नहीं किया जा सकता है।
- इस कविता की प्रत्येक पंक्ति में 24–24 मात्राएँ हैं। प्रत्येक पंक्ति के अंत में दीर्घ की मात्रा है। इसमें 5–5 पंक्तियों के चार चरण हैं।

सारांश

महादेवी वर्मा ने 1935 से पहले इस कविता की रचना की थी। उस दौर में स्त्री के स्वतंत्र व्यक्तित्व पर लिखी गई इस तरह की कविता किसी दूसरे कवि के द्वारा लिखी हुई नहीं मिलती है। महादेवी किसी तरह की सामाजिक बहस इस कविता में नहीं करती हैं, वे प्रकृति के विभिन्न उपादानों को प्रतीक बनाकर अपनी बात कहती हैं। उन्होंने स्त्री को भी सीधे–सीधे शब्दों में व्यक्त नहीं किया है। छायावादी काव्य–भाषा के अनुकूल ही इसकी भाषा रची गयी है।

बोध प्रश्न–1

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

i. 'मधुर–मधुर मेरे दीपक जल!' शीर्षक कविता किस पुस्तक में है?

क) रश्मि ख) सांध्यगीत ग) नीरजा घ) दीप–शिखा

ii. 'बीन भी हूँ मैं तुम्हारी रागिनी भी हूँ!' किस काव्य–संग्रह की कविता है?

क) सांध्यगीत ख) नीहार ग) नीरजा घ) दीप–शिखा

iii. 'विश्व–शलभ' में कौन–सा अलंकार है?

क) उपमा ख) रूपक

ग) रूपकातिशयोक्ति घ) उत्प्रेक्षा

iv. 'प्रस्तर' का क्या अर्थ है?

क) नदी का किनारा ख) क्षितिज

ग) पौधा घ) पत्थर

v. 'कूलहीन प्रवाहिनी भी हूँ!' किसके लिए कहा गया है?

क) स्त्री–पुरुष ख) भावना

ग) नदी और स्त्री घ) अश्रुधारा

vi. 'नीरजा' काव्य–संग्रह का प्रकाशन कब हुआ था ?

क) 1925 ख) 1935 ग) 1936 घ) 1932

vii. 'हिमजल' शब्द का क्या अर्थ है ?

क) हिमालय ख) बादल ग) वर्षा घ) ओस

viii. 'पात्र भी मधु भी ..... भी मधुर विस्मृत भीय' काव्य–पंक्ति में खाली स्थान को भरें!

क) मधुप ख) विकल ग) नयन घ) गगन

ix. ''मधुर–मधुर मेरे दीपक जल!' कविता में कितनी मात्रा की पंक्तियों का उपयोग हुआ है?

क) 12 ख) 14 ग) 16 घ) 18

x. महादेवी वर्मा का जन्म कब हुआ था?

क) 1900 ख) 1911 ग) 1905 घ) 1907

xi. 'बीन भी हूँ मैं तुम्हारी रागिनी भी हूँ!' कविता में कितनी मात्रा की पंक्तियों का उपयोग हुआ है?

क) 28 ख) 14 ग) 24 घ) 18

xii. महादेवी वर्मा किस तरह की कवि मानी जाती हैं ?

क) हालावादी ख) प्रयोगवादी

ग) रहस्यवादी घ) प्रगतिवादी

बोध प्रश्न – 2

1. बीन भी हूँ मैं तुम्हारी रागिनी भी हूँ!' कविता में मुख्य रूप से क्या कहा गया है?

....

....

....

2. ''मधुर–मधुर मेरे दीपक जल!' कविता का मूल भाव क्या है ?

....

....

....

BHDE-144_2nd Proof.indd 233 3/23/2022 12:54:40 PM

12.3 उपयोगी पुस्तकें

1. **महादेवी वर्मा :** काव्य–कला और जीवन–दर्शन : सं.– शचीरानी गुर्टू, आत्माराम एंड सन्स, दरियागंज, दिल्ली
2. **महादेवी वर्मा** – जगदीश गुप्त, साहित्य अकादमी, नयी दिल्ली
3. **महादेवी साहित्य (कुल 4 खंड)** – सं.– निर्मला जैन, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली
4. **महादेवी वर्मा की विश्वदृष्टि** – तोमोको किकुचि, परमेश्वरी प्रकाशन, दिल्ली
5. **छायावादी काव्य–कोश** – कमलेश वर्मा, सुचिता वर्मा, द मर्जिनलाइज्ड पब्लिकेशन, इग्नू रोड, दिल्ली

12.4 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न–1

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

i.	ग	ii.	ग	iii.	ख	iv.	घ
v.	ग	vi.	ख	vii.	घ	viii.	क
ix.	ग	x.	घ	xi.	ग	xii.	ग

बोध प्रश्न–2

1. 'बीन भी हूँ मैं तुम्हारी रागिनी भी हूँ!' शीर्षक कविता में महादेवी ने स्त्री के स्वतंत्र व्यक्तित्व को प्रकट करने के लिए दार्शनिक मतों का सहारा लिया है। उन्होंने भेद में अभेद की स्थापना की है। यह यात्रा द्वैत से अद्वैत की तरफ है। इस कविता की सुंदरता इस बात में है कि इसका एक अर्थ रहस्यवादी ढंग से ईश्वरीय प्रेम का अर्थ देता है तो दूसरी तरफ स्त्री जीवन की पूर्णता का अर्थ देता है। स्त्री के बारे में यह बात कई तरह से कही गयी है कि वह 'आधी' है या 'अधूरी' है। वह पुरुष से जुड़कर पूर्ण होती है। इन भेदों को मिटाते हुए महादेवी स्त्री के व्यक्तित्व को अभेद और अद्वैत की तरह पूर्णता प्रदान करना चाहती हैं।

   इस कविता में तर्क की पद्धति यह है कि मैं यह भी हूँ और वह भी हूँ। इस 'यह' और 'वह' से मिलकर पूर्णता का निर्माण होता है। महादेवी कई उदाहरण देकर बताना चाहती हैं कि जिन पक्षों से मिलकर किसी 'पूर्णता' की अवधारणा बनती है, उन सारे पक्षों को मिलाकर मेरे (स्त्री के) व्यक्तित्व का निर्माण हुआ है। भेद को प्रकट करनेवाले जितने पक्ष हैं उन सबको मिलाकर मैं 'अभेद' के व्यक्तित्व को प्राप्त करती हूँ। मैं 'द्वैत' की संभावना किसी दूसरे के साथ नहीं रखती, बल्कि अपने आप में मैं 'अद्वैत' को धारण करती हूँ।

2. ''मधुर–मधुर मेरे दीपक जल!' कविता में महादेवी वर्मा ने दीपक को साधक के प्रतीक के रूप में चित्रित किया है. दीपक मानो महादेवी वर्मा की भी साधना का प्रतीक है। यह दीपक व्यक्तिगत रूप से कवि की साधना का और सार्वजनिक रूप से किसी भी साधक की साधना का प्रतीक है। कवि ने दीपक को संबोधित करके यह बात कही है कि एक साधक को किस तरह का होना चाहिए! एक तरह से वे दीपक को या अपनी साधना को या किसी भी साधक को समझा रही हैं कि एक साधक को कैसा होना चाहिए? उसके सार्थक होने की कसौटी क्या है? उसे अपने व्यक्तित्व को कैसा बनाना चाहिए? महादेवी बताती हैं कि साधक को संकल्प के प्रति प्रतिबद्धता रखनी चाहिए। साधना के मार्ग में कठिनाइयाँ हमेशा आती रही हैं। उन सबका सामना संयम और आत्मविश्वास से करना चाहिए। अपने लक्ष्य से आत्मसात हो जाने तक यह संघर्ष करते रहना चाहिए।

इकाई 13 काव्य–वाचन एवं विश्लेषण : 'जाग तुझको दूर जाना' एवं 'विरह का जलजात जीवन'

इकाई की रूपरेखा

13.0 उद्देश्य

13.1 प्रस्तावना

13.2 चयनित कविताओं का पाठ और विश्लेषण

13.3 उपयोगी पुस्तकें

13.4 बोध प्रश्नों के उत्तर

13.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आपः

- महादेवी वर्मा की दो कविताओं की विस्तृत व्याख्या समझ सकेंगी/सकेंगे;
- महादेवी वर्मा की कविताओं की व्याख्या की दिशाओं को जान सकेंगी/सकेंगे;
- इन कविताओं के माध्यम से छायावाद की विशिष्टताओं को समझ सकेंगी/सकेंगे;
- महादेवी वर्मा की काव्य–भाषा को समझने का प्रयास कर सकेंगी/सकेंगे; और
- महादेवी वर्मा की शब्द–योजना और शब्दावली को जान सकेंगी/सकेंगे।

13.1 प्रस्तावना

महादेवी वर्मा का जन्म 1907 में फर्रुखाबाद में हुआ था। इनकी पढ़ाई–लिखाई इंदौर और इलाहाबाद में हुई थी। इलाहाबाद में स्थित प्रयाग महिला विद्यापीठ में वे प्रधानाचार्या के पद पर कार्यरत रहीं। उनकी मृत्यु 1987 में हुई।

महादेवी वर्मा ने कविता के अलावा सशक्त गद्य भी लिखा था। उनकी गद्य रचनाएँ भाषा और विचार की दृष्टि से अत्यंत परिपक्व मानी जाती हैं। 'शृंखला की कड़ियाँ' के लेखों में उन्होंने स्त्री–मुक्ति के प्रश्नों को जिस स्तर पर उठाया था वह आश्चर्यजनक है। मैनेजर पाण्डेय ने इस पुस्तक को रेखांकित करते हुए लिखा है कि सिमोन द बोउवार की पुस्तक 'द सेकेण्ड सेक्स' के प्रकाशन से भी पहले महादेवी की यह पुस्तक प्रकाशित हो चुकी थी और इसके लेख तो और भी पहले प्रकाशित हो चुके थे। महादेवी वर्मा ने 'चाँद' पत्रिका के 'विदुषी अंक' का सम्पादन 1935 में किया था। यह अंक हिन्दी में हुए स्त्री–विमर्श की परम्परा में विशेष महत्त्व रखता है। यह अंक उस जमाने में आया था जब इस तरह के विषय पर सोच–विचार की प्रवृत्ति आम नहीं थी। महादेवी का वैचारिक गद्य लेखन महत्त्वपूर्ण है।

छायावाद और रहस्यवाद की कवि के रूप में महादेवी वर्मा का स्थान अक्षुण्ण है। उनके पाँच काव्य–संग्रहों की कविताओं में छायावादी–रहस्यवादी प्रवृत्तियाँ तो हैं ही, उनमें स्त्री की पीड़ा और मुक्ति के प्रसंग भरे पड़े हैं। इनमें पीड़ा का विवरण भी व्यक्तित्व की दृढ़ता को व्यक्त करने के लिए किया गया है। इनमें प्रेम और प्रेमी का जिक्र भी मुक्ति के प्रतीक के रूप में किया गया है। महादेवी कोरी भावुकता की कविताएँ नहीं लिखती हैं।उनकी कविताओं में वैचारिक दृढ़ता हमेशा बनी रही।

काव्य–कृतियाँ

नीहार (1930), रश्मि (1932), नीरजा (1935), सांध्य गीत (1936), दीपशिखा (1942), हिमालय (1963), सप्तपर्णा (अनूदित – 1966), प्रथम आयाम (1982), अग्निरेखा (1990)

BHDE-144_2nd Proof.indd 235 3/23/2022 12:54:40 PM

गद्य–कृतियाँ

अतीत के चलचित्र (रेखाचित्र – 1941), शृंखला की कड़ियाँ (नारी–विषयक सामाजिक निबंध – 1942), स्मृति की रेखाएँ (रेखाचित्र – 1943), पथ के साथी (संस्मरण – 1956), क्षणदा (ललित निबंध – 1956), साहित्यकार की आस्था तथा अन्य निबंध (आलोचनात्मक – 1960), संकल्पिता (आलोचनात्मक – 1969), मेरा परिवार (पशु–पक्षियों के संस्मरण – 1971), चिंतन के क्षण (1986)

संकलन

यामा (नीहार, रश्मि, नीरजा, सांध्यगीत का संग्रह – 1936), संधिनी (कविता–संग्रह – 1964), स्मृतिचित्र (गद्य–संग्रह – 1966), महादेवी साहित्य (भाग – 1 – 1969), महादेवी साहित्य (भाग – 2 – 1970), महादेवी साहित्य (भाग – 3 – 1970), गीतपर्व (कविता–संग्रह – 1970), स्मारिका (1971), परिक्रमा (कविता–संग्रह – 1974), सम्भाषण (कविता–संग्रह – 1975), मेरे प्रिय निबंध (निबंध–संग्रह – 1981), आत्मिका (कविता–संग्रह – 1983), नीलाम्बरा (कविता–संग्रह – 1983), दीपगीत (कविता–संग्रह – 1983)

13.2 चयनित कविताओं का पाठ और विश्लेषण

एक

जाग तुझको दूर जाना
जाग तुझको दूर जाना
चिर सजग आँखें उनींदी आज कैसा व्यस्त बाना!
जाग तुझको दूर जाना!

अचल हिमगिरि के हृदय में आज चाहे कम्प हो ले,
या प्रलय के आँसुओं में मौन अलसित व्योम रो ले,
आज पी आलोक को डोले तिमिर की घोर छाया,
जागकर विद्युत शिखाओं में निठुर तूफान बोले!
पर तुझे है नाश–पथ पर चिह्न अपने छोड़ आना!
जाग तुझको दूर जाना!

बाँध लेंगे क्या तुझे यह मोम के बंधन सजीले?
पंथ की बाधा बनेंगे तितलियों के पर रँगीले?
विश्व का क्रंदन भुला देगी मधुप की मधुर गुनगुन,
क्या डुबो देंगे तुझे यह फूल दल ओस गीले?
तू न अपनी छाँह को अपने लिये कारा बनाना!
जाग तुझको दूर जाना!

वज्र का उर एक छोटे अश्रु–कण में धो गलाया,
दे किसे जीवन सुधा दो घूँट मदिरा माँग लाया?
सो गई आँधी मलय की वात का उपधान ले क्या?
विश्व का अभिशाप क्या चिर नींद बनकर पास आया?
अमरता–सुत चाहता क्यों मृत्यु को उर में बसाना?
जाग तुझको दूर जाना!

BHDE-144_2nd Proof.indd 236 3/23/2022 12:54:40 PM

कह न ठंढी साँस में अब भूल वह जलती कहानी,
आग हो उर में तभी दृग में सजेगा आज पानीय
हार भी तेरी बनेगी माननी जय की पताका,
राख क्षणिक पतंग की है अमर दीपक की निशानी!
है तुझे अंगार–शय्या पर मृदुल कलियाँ बिछाना!
जाग तुझको दूर जाना!

सन्दर्भ और प्रसंग

'जाग तुझको दूर जाना!' शीर्षक कविता/गीत महादेवी वर्मा के काव्य–संग्रह 'सांध्य गीत' (1936) में संगृहीत है। महादेवी की प्रसिद्ध कविताओं में इस कविता को शामिल किया जा सकता है। यह कविता सामान्य रूप से संबोधन या अपील की कविता है। इसमें प्रेरणा दी गयी है कि मनुष्य को निराश नहीं होना चाहिए। सच्ची आत्मप्रेरणा से भरकर हमें उत्साहित रहना चाहिए। यह मान लेना चाहिए कि विपरीत परिस्थितियों में भी हौसला बनाए रखने पर मनुष्य का कल्याण होता है।

व्याख्या

प्रेरणा देती हुई महादेवी इस कविता में कहती हैं कि तुम्हें दूर तक जाना है, अर्थात् तुम्हारा उद्देश्य बड़ा है। तुम्हें महान उपलब्धियों से जुड़ना है। मैं देख रही हूँ कि हमेशा सजग रहनेवाली तुम्हारी आँखें आज नींद से अलसायी हुई लग रही हैं। आज तुम्हारी वेश–भूषा आलस्य से अस्त–व्यस्त क्यों हो गयी है?

महादेवी उत्साह की बहुत बड़ी कसौटी सामने रख रही हैं। वे कहती हैं कि आज परिस्थिति विकट और विपरीत हो जाए तब भी घबराना नहीं है। हो सकता है कि प्रलय की घड़ी आ जाए और अचल–अडिग रहनेवाले हिमालय पर्वत के हृदय में कंपन हो जाए या आकाश ठिठककर प्रलय के आँसुओं को लेकर जार–जार बरस पड़े या अंधकार की घनी छाया जगत के संपूर्ण आलोक को पी जाए या आकाशीय बिजली की चमक के साथ भयानक तूफान गरज उठे – मगर तुम्हें घबराना नहीं है। इन विपरीत परिस्थितियों में भी तुम्हें अपने सृजन की ताकत का प्रदर्शन करना है। विनाश से त्रस्त परिवेश में भी सृजन के अपने चिह्नों को बनाने का प्रयास तुम्हें करना है। इसके लिए जरूरी है कि तुम जागरूक बने रहो!

जीवन के सृजन मार्ग में केवल विकट और भयानक लगनेवाली चीजें ही बाधक नहीं होती हैं, बल्कि मनोहर लगनेवाली कुछ चीजों से भी सावधान रहने की जरूरत है। महादेवी रूपक के माध्यम से कहती हैं कि मोम के सजीले बंधन और तितलियों के रँगीले पंख भी मार्ग भटकाने का काम करते हैं।क्या तुम इनके धोखे में आ जाओगे? रास्ते में भौंरों की मधुर गुनगुन सुनायी पड़ेगी, मगर इसके आगे विश्व के क्रंदन को मत भुला देना! ओस से भीगी हुई फूलों की पंखुड़ियों में अपने को डूबने मत देना! देखो, कभी–कभी हम अपनी छाया की ही कैद में बँध जाते हैं।भ्रम और यथार्थ के अंतर को समझनेवाली दृष्टि पैदा करना! तभी तुम आगे बढ़ सकोगे!

कुछ और रूप गढ़ती हुई महादेवी कहती हैं कि तुमने वज्र की तरह सशक्त और मजबूत हृदय पाया है।इसे भाव–विगलित होकर आँसुओं से गला मत देना अर्थात् भावुक होकर अपने इरादों को कमजोर मत कर लेना। अपने जीवन के अमृत को किसी की दो घूँट मदिरा के आकर्षण में न्यौछावर मत कर देना। तुम्हारे भीतर उत्साह की प्रचण्ड आँधी बहती है, उसे मलय की सुखद हवा के सहारे सुला मत देना। तुम जागरण के दूत हो इसलिए नींद के वशीभूत मत हो जाना। यह नींद विश्व के लिए अभिशाप बन जाएगी।

याद रखो कि तुम अमरता के पुत्र हो, तुम्हें अपने हृदय में मृत्यु के भय को जगह देने की जरूरत नहीं है।

कविता के अंत में महादेवी मनुष्य को साधक के भाव से जीवन को देखने का आह्वान करती हुई कहती हैं कि अफसोस के साथ मत जिओ। ठंडी आहें भरकर बात मत करो! संघर्ष को भूलने के बहाने मत बनाओ। संघर्ष की ज्वलंत स्मृतियाँ तुम्हें ताकत देती रहेंगी। हृदय में बसी हुई संघर्ष–गाथा तुम्हारी आँखों में करुणा का संचार करेगी! इस मार्ग पर चलते हुए तुम्हें पराजय का सामना भी करना पड़ सकता है, मगर याद रखो कि संघर्षरत रहने के कारण तुम्हारी हार भी तुम्हारी विजय की पताका बनेगी। पतंग का जलकर राख हो जाना एक क्षणिक घटना है और दीपक से उसके प्रेम की कहानी एक अमर कहानी है। कष्ट से भरे इस संसार की अंगार–शय्या पर तुम्हें कोमल कलियों को बिछाना है।

यह सब तभी सम्भव है जब तुम जागरण के भाव से जिओगे और कर्मरत रहोगे!

कठिन शब्द

चिर सजग आँखें – जो सदैव जागरुक रहा हो, **उनींदी** – नींद के प्रभाव में, **व्यस्त बाना** – जिसके कपड़े–लत्ते अस्त–व्यस्त लग रहे हों, **जाग** – सचेत हो जाओ, **अचल हिमगिरि के हृदय** – पर्वतराज हिमालय के चिर स्थिर मन में, **प्रलय के आँसुओं में** – प्रलय की भयानक बारिश–जैसी कठिन स्थिति, **मौन अलसित व्योम** – मौन और स्थिर आकाश, **तिमिर की घोर छाया** – अंधकार की विशाल काया, **नाश–पथ** – जिस मार्ग पर विनाश अपना तांडव मचाता जा रहा है, **मोम के बंधन सजीले** – मोम के बने सुंदर बंधन अर्थात् आकर्षण का भ्रमपूर्ण आधार, **पंथ की बाधा** – तुम्हारे रास्ते को रोकने वाले, **तितलियों के पर रँगीले** – सुंदर भ्रम का आकर्षण, **विश्व का क्रंदन** – संसार की वेदना, **मधुप की मधुर गुनगुन** – भौंरों की मधुर गुनगुनाहट में माधुर्य का भ्रम, **अपनी छाँह** – अपनी छाया या मिथ्या कारणों को, **कारा** – बंधन, सीमा

काव्य सौष्ठव/विशेष

- यह जागरण गीत है.
- अपने पथ पर सक्रिय बने रहने की अपील इस कविता में की गयी है.
- बाहरी बाधाओं के साथ–साथ अपनी कमजोरियों से भी संघर्ष करते रहने की जरूरत पड़ती है.
- मृत्यु के भय को मन से निकालकर ही कल्याण–पथ पर चला जा सकता है.
- यह कविता मूलतः 14–14 मात्राओं की पंक्तियों से बनी हुई है। दो–दो पंक्तियों को एक साथ रखकर 28–28 मात्राओं की पूरी पंक्ति बना दी गयी है। प्रत्येक 14 वीं मात्रा दीर्घ है।

सारांश

मनुष्य को अपने संकल्प के लिए अनवरत संघर्ष करने की जरूरत पड़ती है। बाहरी बाधाओं के साथ–साथ अपनी आंतरिक कमजोरियों से भी उसे संघर्ष करना पड़ता है। महादेवी प्रेरित करती हुई कह रही हैं कि विजय प्राप्त कर लेना ही सफलता का प्रमाण नहीं है। पराजय के बावजूद हमारे द्वारा किए गए संघर्षों के अपने परिणाम बने रहते हैं।

दो

विरह का जलजात जीवन
विरह का जलजात जीवन
विरह का जलजात जीवन, विरह का जलजात !
वेदना में जन्म करुणा में मिला आवासय

अश्रु चुनता दिवस इसका, अश्रु गिनती रात !
जीवन विरह का जलजात !

आँसुओं का कोष उर, दृग अश्रु की टकसालय
तरल जल–कण से बने घन सा क्षणिक मृदु गात !
जीवन विरह का जलजात !

अश्रु से मधुकण लुटाता आ यहाँ मधुमासय
अश्रु ही की हाट बन आती करुण बरसात !
जीवन विरह का जलजात !

काल इसको दे गया पल–आँसुओं का हार
पूछता इसकी कथा निश्वास ही में वातय
जीवन विरह का जलजात!

जो तुम्हारा हो सके लीलाकमल यह आजय
खिल उठे निरुपम तुम्हारी देख स्मित का प्रात !
जीवन विरह का जलजात !

सन्दर्भ और प्रसंग

'विरह का जलजात जीवन' शीर्षक कविता/गीत महादेवी के काव्य–संग्रह 'नीरजा' (1935) में संगृहीत है। इस कविता में जीवन को कमल की तरह बताया गया है। इस कमल की विशेषता बतायी गयी है कि इसके मूल में विरह की भावना है। इस तरह यह जीवन वियोग–रूपी कमल की तरह है। इस दृष्टि से जीवन की व्याख्या करने की कोशिश महादेवी इस कविता में कर रही हैं। यह कविता अंत में आत्मपरक रूप ग्रहण कर लेती है।

व्याख्या

महादेवी वर्मा ने जीवन की व्याख्या, विरह–रूपी कमल के रूपक के सहारे, इस कविता में की है।वे कहती हैं कि इस जीवन का जन्म वेदना के परिवेश में होता है और करुणा में रहते हुए इसे व्यतीत होना पड़ता है। जन्म या सृजन पीड़ा के बिना संभव नहीं है और यह जीवन करुण प्रसंगों से मुक्त हो ही नहीं सकता है। इस जीवन का एक–एक दिन आँसुओं को चुनते हुए बीतता है और एक–एक रात आँसुओं को गिनते हुए बीतती है। दुनिया को जिन लोगों ने गहरी दृष्टि से देखा है, वे इस तरह के निष्कर्ष पर प्रायः पहुँचते रहे हैं। जो लोग संसार को ऊपरी निगाह से देखते हैं, उनकी इन बातों से असहमति हो सकती है.

सच्चाई यही है कि हमारा हृदय आँसुओं का भंडार है और हमारी आँखें आँसुओं को वेदना के साथ मुद्रित करके प्रस्तुत करने वाली टकसाल की तरह हैं।मानव को मिला हुआ यह सुंदर शरीर, जल–कण से बने हुए क्षणिक बादलों की तरह नश्वर है। इस तरह यह शरीर भी सुख का प्रमाण नहीं है, बल्कि विरह के दुखद गुणों से परिपूर्ण है।

यह सही है कि इस जीवन में वसंत ऋतु आती है और वह मधुकण लुटाती हुई प्रसन्नता का आभास कराती है। मगर सच यही है कि जिसे हम मधुकण समझते हैं उनकी निर्मिति में आँसुओं का योगदान होता है।मानो आँसू ही मधुकण का रूप बनाकर हमारे जीवन में आते हैं। वसंत ऋतु के तुरंत बाद जैसे आँसुओं की पूरी हाट लेकर करुण बरसात आ जाती है वैसे ही जीवन का विरह भाव प्रत्येक सुख के पीछे–पीछे चला आता है।

BHDE-144_2nd Proof.indd 239 3/23/2022 12:54:40 PM

समय बलवान होता है।वह अपनी तरफ से जीवन को क्या देता है? महादेवी कहती हैं कि काल अपनी तरफ से इस जीवन को, क्षण या पल–रूपी आँसुओं से बना हुआ हार, गले में डालने के लिए दे देता है। यह जीवन साँसों की डोर से बँधा है। साँसों में बसी हुई हवा मानो हर क्षण उसकी करुण कहानी पूछती रहती है। इस तरह यह जीवन हर तरफ से वेदना, विरह, पीड़ा, आँसू आदि से निर्मित दिखायी पड़ता है.

इस जीवन की खुशी का आधार केवल वह अज्ञात और अनंत प्रियतम हो सकता है। महादेवी उस प्रियतम को संबोधित करते हुए कहती हैं कि मेरा जीवन तुम्हारे सामने एक लीलाकमल से ज्यादा कुछ नहीं है। मैं चाहती हूँ कि क्रीड़ाभाव से तुम्हारे द्वारा अपनाया गया मेरा जीवन–कमल तुम्हारे हाथ का लीलाकमल बन जाए! जिसे मैंने 'विरह का जलजात जीवन' मान रखा है वह तुम्हारी मुस्कुराहट देखकर वैसे ही खिल उठे, जैसे सुंदर प्रभात में कमल के फूल खिल उठते हैं। अपने प्रिय को महादेवी ने 'निरुपम' कहकर संबोधित किया है.

पूरी कविता इस भाव को व्यक्त करती है कि उस अज्ञात–अनंत प्रियतम की अनुभूति ही सुख का आधार हो सकती है। इस अनुभूति के बिना यह जीवन वेदना और करुणा से घिरा रहता है.

कठिन शब्द

विरह का जलजात – यह जीवन वियोग–रूपी कमल की तरह है, **वेदना में जन्म** – जीवन की शुरुआत (जन्म) पीड़ा से होती है, **अश्रु की टकसाल** – आँखें आँसुओं को ऐसे निकालती हैं जैसे टकसाल से मुद्रा निकलती है, **मधुमास** – वसंत ऋतु (भी मानो अपने परागकणों में दर्द छिपाए रहती है), **हाट** – लगा हुआ बाजार, **करुण बरसात** – जीवन में आँसू मानो करुण भावनाओं की बारिश की तरह हैं, **पल–आँसुओं** – जीवन का एक–एक क्षण मानो वेदना के आँसुओं में डूबा है, **लीलाकमल** – क्रीड़ाभाव से हाथ में लिया गया कमल, मेरा जीवन–कमल तुम्हारे हाथ का लीलाकमल बन जाए!, **निरुपम** – अनुपम, वह अज्ञात अनंत प्रियतम किसी भी उपमा से परे है, **स्मित का प्रात** – प्रभात मानो तुम्हारी मुस्कान है

काव्य सौष्ठव / विशेष

- दु:ख के बावजूद यह जीवन कमल की तरह है.
- जीवन का अर्थ ही है कि इसमें वेदना, करुणा और आँसुओं का भंडार है.
- इसका अर्थ यह नहीं कि जीवन को लेकर दुखी रहा जाए।इसका अर्थ यह है कि दु:ख को समझने का प्रयास किया जाए.
- भौतिक जीवन से थोड़ा हटकर जो भावजगत है, मानो उसमें इसकी गुंजाइश है कि इस दु:ख का विसर्जन देखा जा सके!
- पूरी कविता में 24 मात्राओं की पंक्तियों का उपयोग हुआ है।प्रत्येक पंक्ति के अंत में लघु है.

सारांश

जीवन कमल की तरह सुंदर तो है मगर इसकी उत्पत्ति से लेकर विकास तक में दु:ख की भूमिका बहुत बड़ी है। उस अनंत और अज्ञात प्रियतम की संभावना महादेवी को उस मुकाम तक पहुँचाती है कि दु:ख के इन रूपों को विसर्जित किया जा सके!

बोध प्रश्न–1

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दें।

1. ''जाग तुझको दूर जाना!' कविता का मूल भाव क्या है?

   ....

BHDE-144_2nd Proof.indd 240 3/23/2022 12:54:40 PM

....

....

2. 'विरह का जलजात जीवन!' कविता में जीवन के किस रूप को रखा गया है?

....

....

....

बोध प्रश्न–2

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

i. 'जाग तुझको दूर जाना!' शीर्षक कविता किस पुस्तक में है?

क) रश्मि ख) सांध्यगीत ग) नीरजा घ) दीप–शिखा

ii. 'विरह का जलजात जीवन' किस काव्य–संग्रह की कविता है?

क) सांध्यगीत ख) नीहार ग) नीरजा घ) दीप–शिखा

iii. 'जीवन सुधा' में कौन–सा अलंकार है?

क) उपमा ख) रूपक

ग) रूपकातिशयोक्ति घ) उत्प्रेक्षा

iv. 'टकसाल' का क्या अर्थ है?

क) घुड़साल ख) मुद्रा छापने का स्थान

ग) चारागाह घ) अनाज रखने की जगह

v. 'विरह का जलजात' पदबंध का उपयोग किसके लिए किया गया है?

क) दीपक ख) पूजा–अर्चन ग) जीवन घ) अश्रुधारा

vi. 'नीरजा' काव्य–संग्रह का प्रकाशन कब हुआ था ?

क) 1925 ख) 1935 ग) 1936 घ) 1932

vii. 'सांध्य गीत' काव्य–संग्रह का प्रकाशन कब हुआ था ?

क) 1925 ख) 1935 ग) 1936 घ) 1932

viii. 'तू न अपनी ... को अपने लिये कारा बनाना!' काव्य–पंक्ति में खाली स्थान को भरें !

क) राह ख) छाँह ग) साँस घ) चाह

ix. 'विरह का जलजात जीवन' कविता में कितनी मात्रा की पंक्तियों का उपयोग हुआ है?

क) 12 ख) 14 ग) 24 घ) 18

x. महादेवी वर्मा का जन्म कब हुआ था?

क) 1900 ख) 1911 ग) 1905 घ) 1907

xi. 'जाग तुझको दूर जाना!' कविता में कितनी मात्रा की पंक्तियों का उपयोग हुआ है?

क) 28 ख) 12 ग) 24 घ) 18

xii. महादेवी वर्मा किस तरह की कवि मानी जाती हैं ?

क) हालावादी ख) प्रयोगवादी ग) रहस्यवादी घ) प्रगतिवादी

BHDE-144_2nd Proof.indd 241 3/23/2022 12:54:40 PM

13.3 उपयोगी पुस्तकें

1. **महादेवी वर्मा** – काव्य–कला और जीवन–दर्शन – सं.– शचीरानी गुर्टू, आत्माराम एंड सन्स, दरियागंज, दिल्ली
2. **महादेवी वर्मा** – जगदीश गुप्त, साहित्य अकादमी, नयी दिल्ली
3. **महादेवी साहित्य (कुल 4 खंड)** – सं.– निर्मला जैन, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली
4. **महादेवी वर्मा की विश्वदृष्टि** – तोमोको किकुचि, परमेश्वरी प्रकाशन, दिल्ली
5. **छायावादी काव्य–कोश** – कमलेश वर्मा, सुचिता वर्मा, – मर्जिनलाइज्ड पब्लिकेशन, इग्नू रोड, दिल्ली

13.4 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न – 1

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

i. ख	ii. ग	iii. ख	iv. ख
v. ग	vi. ख	vii. ग	viii. ख
ix. ग	x. घ	xi. क	xii. ग

बोध प्रश्न – 2

1. 'जाग तुझको दूर जाना!' कविता चार चरणों में अपनी बात कहती है। ये चार चरण संघर्ष करनेवाले किसी भी व्यक्ति के लिए सहायक और प्रेरक हो सकते हैं। पहला चरण यह है कि संकल्पधर्मा व्यक्ति के सामने बाहरी बाधाएँ आती हैं। दूसरा चरण यह है कि राह भटकाने वाले आकर्षण आ खड़े होते हैं। तीसरा चरण है कि व्यक्ति अपनी शक्तियों को भूल जाता है और कमजोरियों के वश में आ जाता है। चौथा चरण है कि इन सभी चरणों में संघर्षशील रहने वाला व्यक्ति अंततः पराजित होकर भी सार्थकता को प्राप्त करता है। यह कविता संघर्ष का दार्शनिक बयान है। संघर्ष करते हुए हम जिन कठिनाइयों को पाते हैं उनका कोई न कोई रूप इस कविता के भावलोक में हमें मिल जाता है।

2. 'विरह का जलजात जीवन' शीर्षक कविता में जीवन को कमल की तरह तो बताया गया है, मगर 'विरह का जलजात' कहकर व्याख्यायित किया गया है। कमल के रूपक को विकसित करते हुए महादेवी बताती हैं कि इस जीवन का जन्म वेदना में हुआ है और परवरिश करुणा के वातावरण में हुई है। इसके दिन की शुरुआत ओस–रूपी आँसुओं को चुनते हुए होती है और रात तारे–रूपी आँसुओं को गिनते हुए बीतती है। कुछ और उपमाओं के सहारे इसी भाव–प्रसार के भीतर की बात कही गयी है। कुल मिलाकर यह कहा गया है कि जीवन के मूल में करुणा और दुःख हैं। यह कविता अपने अंतिम चरण में आत्मपरक हो गयी है। अपने अनंत और अज्ञात प्रियतम को संबोधित करते हुए महादेवी कहती हैं कि मेरे जीवन–कमल को तुम अपना लीलाकमल बना लो! तुम्हारी मुस्कुराहट इसके जीवन में प्रभात बन कर आएगी और यह जीवन–कमल खिल उठेगा!

BHDE-144_2nd Proof.indd 242 3/23/2022 12:54:40 PM

नोट्स

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

नोट्स

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

MPDD/IGNOU/P.O/ 7.9K / January, 2022

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

ISBN : 978-93-5568-340-3